१- एकादशी माहात्म्य
२- कार्तिक मास माहात्म्य
३- पुरुषोत्तम मास माहा

83

7



* श्री *

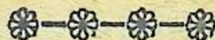
पुरुषोत्तम मास माहात्म्य

–[भाषा टीका]–

टीकाकार–पं० हरिश्चन्द्र जी 'शास्त्री'

प्रकाशकः–हिन्दी पुस्तकालय, मथुरा।

बम्बई बाडी में छपा]



[मूल्य ३) रुपया।

* अथ श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्य भाषा टीका *

भक्तों के लिये कल्प वृक्ष वृन्दावन के विहारी एवं वृन्दावनचन्द्र अद्भुत पुरुषोत्तम भगवान् को मैं प्रणाम करता हूं ॥ १॥ नारायण, नर नरोत्तम, एवं देवी सरस्वती, श्री वेद व्यास जी को प्रणाम करके तब कथा को आरम्भ करे ॥ २ ॥ नैमिष नामक वन में यज्ञ करने की इच्छा से मुनिजन जिन में मुख्य २ देवल, असित, सुमन्तु, पिप्पलायन ॥३॥ आपस्तम्ब, माण्डव्य, अगस्त्य

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीगोपीजनवल्लभायनमः ॥ वंदेवंदारुमंदारंवृन्दावनविनोदिनम् ॥ वृन्दावन-कलानाथंपुरुषोत्तममद्भुतम् ॥ १ ॥ नारायणंनमस्कृत्यनरंचैवनरोत्तमम् देवीसरस्वतींव्यासंततोजयमुदीरयेत् ॥ २ ॥ नैमिषारण्यमाजग्मुर्मुनयःसत्रकाम्यया ॥ असितोदेवलःपैलःसुमन्तुः पिप्पलायनः ॥ ३ ॥ सुमतिःकाश्यपश्चैवजाबालिर्भृगुरंगिराः ॥ वामदेवःसुतीक्ष्णश्चशरभङ्गश्चपर्वतः ॥ ४ ॥ आपस्तम्बोऽथमाण्डव्योऽगस्त्यःकात्यायनस्तथा ॥ रथीतरोऋभुश्चैवकपिलोरैभ्यएवच ॥ ५ ॥ गौतमोमुद्गलश्चैवकौशिकोगालवःक्रतुः ॥ अत्रिर्बभ्रुस्त्रितःशक्तिर्बुधोबौधायनोवसुः ॥६॥ कौंडिन्यःपृथुहारीतोधूम्रःशंकुश्चसंकृतिः ॥

कात्यांयन, सुमति, काश्यप, जाबालि भृगु, अंगिरा ॥ ४ ॥ वामदेव, सुतीक्ष्ण, शरभंग, पर्वत, रथीतर, ऋभु, कपिल, रैभ्य ॥५॥ गौतम, मुद्गल, कौशिक, गालव, क्रतु, अत्रि, बभ्रु, त्रित, शक्ति, बुध, बोधायन वसु ॥ ६ ॥ कौंडिन्य, पृथुहारीत, धूम्र, शंकु,

संकृति, शनि, विभाण्डक, पंक, गर्ग काणाद ॥ ७ ॥ जमदग्नि, भरद्वाज, धूमय, मौन, भार्गव, कर्कश, शौनक, महातपस्वी शतानन्द ॥ ८ ॥ विशाल, विष्णुवृद्ध, जर्जर, जंगम, पार, पाशधर, पूर, महाकाय, जैमिन ॥ ९ ॥ महाग्रीव, महाबाहु, महोदर, महाबल उद्दालक, महासेन, आर्त, आमलक प्रिय ॥ १० ॥ ऊर्ध्वबाहु, ऊर्ध्वपाद, एकपाद, दुर्धर, उग्रशील, जलाशी, पिंगल, अत्रि ऋभु

शनिर्विभांडकः पंकोगर्गः काणाद एवच ॥ ७ ॥ जमदग्निर्भरद्वाजोधूमपोमौनभागवः ॥ कर्कशःशौनकश्चैवशतानन्दोमहातपाः ॥ ८ ॥ विशालाख्योविष्णु वृद्धोजर्जरोजयजंजमौ ॥ पाराःपाशधरःपूरोमहाकायोऽथजैमिनिः ॥ ९ ॥ महाग्रीवोमहाबाहुर्महोदरमहाबलौ ॥ उद्दालकोमहासेन आर्तआमलकप्रियः ॥ ॥ १० ॥ ऊर्ध्वबाहुरूर्ध्वपादएकपादश्चदुर्धरः ॥ उग्रशीलोजलाशीचपिंगलोऽत्रिऋभुस्तथाः ॥ ११ ॥ शांडीरः करुणःकालःकैवल्यश्चकलाधरः ॥ श्वेतबाहूरोमपादःकद्रुःकालाग्निरुद्रगः ॥ १२ ॥ श्वेताश्वतर एद्यःशरभंगःपृथुश्रवाः ॥ एतेस शिष्याब्रह्मिष्ठावेदवेदांगपारगः ॥ १३ ॥ लोकानुग्रहकर्तारःपरोपकृतिशीलिनः ॥ परप्रियरतानित्यंश्रौतस्मार्तपरायणाः ॥ १४ ॥ नैमिषारण्यमासाद्यसत्रंकर्तुं समुद्यताः ॥ तीर्थ-

॥ ११ ॥ शांडीर, करुण, काल, कैवल्य, कलाधर, श्वेतबाहु, रोमपाद, कद्रू, कालाग्नि, रुद्रग ॥ १२ ॥ श्वेताश्वतर, शरभंग, पृथुश्रवा आदि ब्रह्मिष्ट एवं वेद वेदाङ्ग जानने वाले ये सब मुनि शिष्यों के साथ वहां आये ॥ १३ ॥ सब के सब परोपकारी लोकों पर अनुग्रह कर्त्ता दूसरों पर प्यार करने वाले श्रौतस्मार्त धर्म परायण थे ॥ १४ ॥ ये सब नैमिषारण्य में आकर यज्ञ करने लगे।

इधर तीर्थ यात्रा के लिये घर से निकलकर सूत जी भी ॥ १५ ॥ पृथ्वी पर्यटन करते हुए नैमिषारण्य में आकर संसार सागर से उद्धारक मुनिजनों को शिष्यों के साथ देखा ॥ १६ ॥ प्रसन्नता पूर्वक उन सब को प्रणाम किया । उन मुनिजनों ने भी उस आये हुए लाल वल्कलधारी ॥ १७ ॥ प्रसन्न मुख, परमशान्त, तत्त्ववेत्ता, सर्वगुण सम्पन्न, आनन्दमय ॥ १८ ॥ ऊर्ध्व पुण्ड्रधारी,

यात्रामथोद्दिश्यगेहात्सूतोविनिर्गतः ॥ १५ ॥ पृथिवींपर्यटन्नवनैमिषेदृष्टवान्मुनीन् ॥ तान्सशिष्यान्नमस्कृत्य संसारार्णवतारकान् ॥ १६ ॥ सूतःप्रहर्षितःप्रागाद्यत्रासंस्तेमुनिश्वराः ॥ ततःसूतंसमायातंरक्तवल्कलधारिणम् ॥ १७ ॥ प्रसन्नवदनंशांतंपरमार्थविशारदम् ॥ अशेषगुणसंपन्नशेषानन्दसंप्लुतम् ॥ १८ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रधरंश्रीमन्नाममुद्राविराजितम् ॥ शङ्खचक्रधरंदिव्यंगोपीचन्दनमृत्स्नया ॥ १९ ॥ लसच्छ्रीतुलसीमालजटामुकटमंडितम् ॥ जपन्तंपरमंमन्त्रंहरेःशरणमद्भुतम् ॥ २० ॥ सर्वशास्त्रार्थसारज्ञंसर्वलोकहितेरतम् ॥ जितेंद्रियंजितक्रोधंजीवन्मुक्तंजगद्गुरुम् ॥ २१ ॥ व्यासप्रसादसंपन्नंव्यास वद्विगतस्पृहम् ॥ तंदृष्ट्वासहसो-

भगवन्नाम की मुद्रा धारण किये, गोपीचन्दन के द्वारा शंखचक्रादि दिव्य चिन्ह धारे ॥१९॥ तुलसी माला से शोभायमान जटाओं के मुकटसे शोभित हरिकी शरणका अद्भुत मंत्र जपते हुए ॥२०॥ सर्वशास्त्र तत्त्ववेता, सर्वलोकहित कर्ता, जितेन्द्रिय, क्रोधको जीतने वाले जीवनमुक्त, जगद्गुरु ॥ २१ ॥ व्यासजी की कृपा से सम्पन्न श्री व्यास जी की भान्ति निस्पृह ऐसे श्री सूत जी को देखा फिर वे

शीघ्र उठ खड़े हुए ॥ २२ ॥ फिर तो नैमिषारण्य निवासी मुनियों ने सुन्दर एवं अद्भुत कथाओं को सुन ने के लिये श्री सूत जी
पु. को घेर लिया । श्री सूत जी ने भी हाथ जोड़ कर प्रसन्नता पूर्वक उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया ॥ २३ ॥ ऋषि कहने लगे—हे सूत भा
जी ! आप की बड़ी आयु हो। आप भागवत हो। आपके विराजनेके लिये यह सुन्दर आसन ॥२४॥ हे महाभाग ! आप थके हुए टी.
मा. त्थायनैमिषेयामहर्षयः ॥ २२ ॥ श्रोतुकामाःसमावव्रुर्विचित्राविविधाःकथाः ॥ ततःसूतोविनीतात्मासर्वा १
नृषिवरांमुदा ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वाननामदंडवंमुहुः ॥ २३ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतचिरंजीवमहाभागव-
४ तोभवान् ॥ अस्माभि स्त्वासनंतेऽद्यकल्पितंसुमनोहरम् ॥२४॥ अत्रास्यतांमहाभागश्रांतोसीत्यवदन्द्विजाः ॥
इत्युक्त्वासूपविष्टेषुसर्वेषुचतपस्विषु ॥ २५ ॥ तपोवृद्धिंततःपृष्ट्वासर्वान्मुनिगणान्मुदा ॥ निर्दिष्टमासनंभेजे-
विनयाद्रौमहर्षणिः ॥ २६ ॥ सुखासीनंततस्तन्तुविश्रान्तमुपलक्ष्यच ॥ श्रोतुकामाः कथाः पुण्याइदंवचन-
मब्रुवन् ॥ २७ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतमहाभागभाग्यवानसिसांप्रतम् ॥ पाराशर्यवचोहार्दंत्वंवेद कृपया-
हो इस पर विराज जाइये। हमभी बैठ जाते हैं। यह कहकर मुनि जन बैठ गये ॥ २५ ॥ तब तपोवृद्ध-वयोवृद्ध मुनियों से आज्ञा
लेकर निर्दिष्ट आसन पर श्री सूत जी बैठ गये ॥ २६ ॥ तब उन्हें सुखपूर्वक बैठे हुए स्वस्थ देखकर पवित्र कथाऐं सुनाने के लिये
ऋषि कहने लगे ॥ २७ ॥ हे महाभाग ! सूत जी आप भाग्यशाली हैं। आप पर गुरु की कृपा है। श्री व्यास जी के वचन जानते

हो ॥ २८ ॥ श्री व्यास शिष्यों में शिरोमणि सूत जी आप सुखपूर्वक तो हो ? चिरकाल के अनन्तर इस वनमें पधारे हो पूज्य एवं
पु. श्लाघनीय हो ॥ २९ ॥ इस असार संसार में सुनने के योग्य तो बहुत कुछ है। उस में जो सर्व श्रेष्ठ एवं सार हो ॥ ३० ॥ भा
जो आप ने मन में निश्चित कर रक्खा हो। संसार सागर से उद्धार करने वाला एवं शुभ हो ॥ ३१ ॥ अज्ञान रूप अन्धकार से टी.
मा. गुरोः ॥ २८ ॥ सुखीकच्चिद्भवानद्यचिराद्दृष्टःकथंवने ।। श्लाघनीयोपूज्योऽसिव्यासशिष्यशिरोमणे ॥२९॥ १
संसारेऽस्मिन्नसारेतु श्रोतव्यानिसहस्रशः ॥ तत्रश्रेयस्करंस्वल्पंसारभूतंचयद्भवेत् ॥ ३० ॥ तन्नोवदमहा-
५ भागयत्ते मनसिनिश्चितम् ॥ संसारार्णवमग्नानां पारदंशुभदंचयत् ॥ ३१ ॥ अज्ञानतिमिरांधानांनेत्रदान-
परायण ॥ वदशीघ्रंकथासारंभवरोगरसायनम् ॥ ३२ ॥ हरिलीलारसोपेतं परमानंदकारणम् ॥ एवंपृष्टः
शौनकाद्यैःसूतःप्रोवाचप्रांजलिः ॥ ३३ ॥ सूतउवाच ॥ शृण्वंतुमुनयःसर्वेमदुक्तंसुमनोहरम् ॥ आदा
वहंगतोविप्रास्तीर्थंपुष्करसंज्ञितम् ॥ ३४ ॥ स्नात्वातृप्त्वाऋषीन्पुण्यान्सुरान्पितृगणानथ ॥ ततःप्रयातो-
अन्धो को नेत्र देने वाला सांसारिक रोगों की औषधिरूप कथा सार शीघ्र कहिये ॥ ३२ ॥ और शौनक जी आदिने यह भी कहा
कि—वही कथा सुनाइये जिसमें हरि लीला का रस एवं परमानन्द की प्राप्ति हो ॥ ३३ ॥ तब सूत जी हाथ जोड़ कर बोले—हे
मुनिगण ! सुनिये मैं आपको उत्तम कथा कहूंगा। मैं पहिले पुष्कर तीर्थ पर पहुँचा ॥ ३४ ॥ वहां स्नान करके ऋषि देवता एवं

पितरों को तर्पण दिया। उसके अनन्तर पापनाशिनी यमुना पर पहुँचा ॥ ३५ ॥ क्रमानुसार तीर्थ यात्रा करता हुआ श्री गंगाजी गया फिर काशी, वहाँ से होता हुआ गया तीर्थ पर गया ॥ ३६ ॥ वहां पितर पिण्ड करके त्रिवेणी, कृष्णा गण्डकी आदि में स्नान करके पुलह ऋषि के आश्रम पर पहुँचा ॥ ३७ ॥ तब धेनुमती में स्नान कर सरस्वती के किनारे तीन दिन निवास किया

यमुनांप्रतिबंधविनाशिनीम् ॥ ३५ ॥ क्रमादन्यानितीर्थानिगत्वागङ्गामुपागतः ॥ तत काशीमुपागम्य-
गयांगत्वाततःपरम ॥ ३६ ॥ पितृनिष्ट्वाततोवेणीं कृष्णांचतदनंतरम् ॥ ततःस्नात्वाचगंडक्यांपुलहाश्रमम-
व्रजम् ॥ ३७ ॥ धेनुमत्यामहंस्नात्वाततःसारस्वतेतटे ॥ त्रिरात्रमुषितोविप्रास्ततोगोदावरीगतः ॥ ३८ ॥
कृतमालांचकावेरींनिर्विंध्यांताम्रपर्णिकाम् ॥ तापीवैहायसीनन्दांनर्मदांशर्मदांगतः ॥ ३९ ॥ गत्वाचर्मण्व-
तींपश्चात्सेतुबन्धमथागमम् ॥ ततोनारायणंद्रष्टुँ गतोहंबदरीवनम् ॥ ४० ॥ ततोनारायणंदृष्ट्वातापसान-
भिवाद्यच ॥ नत्वास्तुत्वा चतंदेवंसिद्धक्षेत्रमुपागतः ॥ ४१ ॥ एवमादिषुतीर्थेषुभ्रमन्नागतवान्कुरून् ॥

तब वहां से गोदावरी पहुँचा ॥ ३८ ॥ फिर कृतमाला, कावेरी, निर्विन्ध्या, ताम्रपर्णी, तापी, वैहायसी, नन्दा, नर्मदा, शर्मदा आदि तीर्थों पर गया ॥ ३९ ॥ चर्मण्वती पर पहुंच कर सेतुबन्ध पर पहुँचा। वहां से श्री बदरिकाश्रम में श्री नारायण के दर्शन करने गया ॥ ४० ॥ वहाँ दर्शन करके तपस्वियों को भी अभिवादन करके सिद्ध क्षेत्र पर चला आया ॥ ४१ ॥ इसी प्रकार

तीर्थाटन करता हुआ कुरु जांगल देशों में होता हुआ हस्तिनापुर में आगया ॥ ४२ ॥ वहां सुना गया—महाराज परीक्षित् अपना राज्य त्याग कर पवित्र गंगाजी के तट पर पहुँचे हैं ॥ ४३ ॥ और वहां बड़े २ योगी सिद्ध लोग देवर्षि आदि भी पहुँचे हैं। उन में कई एक निरा हारी हैं ॥ ४४ ॥ और कई एक वायु, जल, पत्र, श्वास, फल, एवं फेन आदि का आहार करने वाले हैं ॥४५॥

जांगलंदेशमासाद्यहस्तिनापुरगोऽभवम् ॥ ४२ ॥ तत्रश्रुतंविष्णुरातोराज्यमुसृज्यजग्मिवान् ॥ गङ्गातीरं महापुण्यमृषिभिर्बहुभिर्द्विजाः ॥ ४३ ॥ तत्रसिद्धा समाजग्मुर्योगिन सिद्धिभूषणाः ॥ देवर्षयश्चतत्रैवनिरा-हाराश्चकेचन ॥ ४४ ॥ वातांबुपर्णाहाराश्चश्वासाहाराश्चकेचन ॥ फलाहाराःपरेकेचित्फेनाहाराश्चकेचन ॥ ४५ ॥ तंसमाजंप्रष्टुकामस्तत्राहमगमंद्विजाः ॥ तत्राजगामभगवान्ब्रह्मभूतोमहामुनिः ४६ ॥ व्यास पुत्रोमहातेजाःशुकदेवःप्रतापवान् ॥ श्रीकृष्णचरणांभोजेमनसोधारणांदघत् ॥ ४७ ॥ तंद्व्यष्टवर्षयोगीशंकं-बुकंठंमहोन्नतम् ॥ स्निग्धालकावृतमुखंगूढजत्रुँज्वलत्प्रभम् ॥४८॥ अवधूतंब्रह्मभूतंष्ठीवद्भिर्बालकैर्वृतम् ॥

हे ऋषिगण ! उस समाज से कुछ पूछने के लिये मैं वहां पहुँचा वहां साक्षात् ब्रह्म मय महामुनि आये ॥ ४६ ॥ वे व्यास जी के पुत्र महातेजस्वी प्रतापी श्री शुकदेवजी ही थे। उन्होंने श्री कृष्ण के चरणारबिन्दों में मन लगाया हुआ था ॥ ४७ ॥ उनकी आयु दशवर्ष की थी कम्बुकण्ठ, महा उन्नत, स्निग्ध केशों से घिरा हुआ मुख, दृढ़ स्कन्ध, दीप्तिमान ॥ ४८ ॥ वे ब्रह्म स्वरूप अवधूत

सूत जी बोले—तब राजा परीक्षित् ने श्री शुकदेव जी से पवित्र श्री मद्भागवत् को श्रवणकिया। श्री शुकदेव जी की कृपा से राजा की मुक्ति हुई ॥ १ ॥ वहां से चल कर मैं यहाँ आया हूं। यज्ञ में दीक्षित हुए आप सब मुनियों के दर्शन पाकर मैं कृतार्थ हुआ हूं ॥२॥ ऋषि बोले—हे सूत जी! अब अन्य बातों को छोड़कर हमें श्री वेद व्यास जी के मुख से सुने वचन सुनाइये ॥३॥

सूत उवाच ॥ राज्ञापृष्टंशुकेनोक्तंश्रीमद्भागवतंपरम् ॥ शुकप्रसादात्तच्छ्रुत्वाहृष्टुाराज्ञोविमोक्षणम् ॥ १ ॥ अत्राहमागतोविप्रान्सत्रोद्यमपरायणान् ॥ द्रष्टुकामकृतार्थोऽहंजातोदीक्षितदर्शनात् ॥ २ ॥ ऋषय ऊचु ॥ साधोवार्वांतरंत्यक्त्वासूतापूर्वंवदस्वन ॥ कृष्णद्वैपायनमुखाद्यच्छ्रुतंतत्प्रसादतः ॥३॥ सारात्सारतरापुण्याकथामात्मप्रसादनीम् ॥ पाययस्वमहाभागसुधाधिकतरापराम् ॥ ४ ॥ सूतउवाच ॥ विलोमजोपिधन्योस्मियन्मापृच्छतसत्तमा ॥ यथाज्ञानंप्रवक्ष्यामियच्छ्रुतंव्यासवक्त्रतः ॥ ५ ॥ एकदानारदोगच्छन्नरनारायणालयम् ॥ तापसैर्बहुभि सिद्धैर्देवैरपिनिषेवितम् ॥ ६ ॥ बदर्यन्नामलैर्बिल्वैराम्रै राम्रातकैरपि ॥ कपित्थैर्ज

ऐसा कथारूप अमृत हमें पिलायें जो सार का सार आत्मा को प्रसन्न करने वाला परम पुण्य रूप हो ॥ ४ ॥ सूत जी बोले—हे ऋषिगण! मैं विलोमज हूं मुझ से आप पूछ रहे हैं इसलिये मैं धन्य हूं। अब मैं श्री व्यास से सुनी कथा कहता हूं ॥ ५ ॥ सुनिये—एक बार श्री नारद जी बहुत से तपस्वी सिद्ध एवं देवताओं से सेवित नर नारायण के आश्रम पर पहुँचे ॥ ६ ॥ उस

आश्रम पर बेर, आंवले, बिल्व, आम्र, आम्रातक, कपित्थ, जामन कदम्ब आदि के सुहावने वृक्ष लगे हुए थे ॥ ७ ॥ और वहाँ श्री विष्णु के चरणों का जलरूप पवित्र अलक नन्दा नदी बह रही थी। वहां जाकर मैंने नारायण महामुनि को प्रणाम किया ॥८॥ वे मुनि परब्रह्म में मन लगाये हुए थे। जितेन्द्रिय एवं छः शत्रुओं को जीते हुए परमकान्तिमान विराजमान थे ॥ ९ ॥ उन्हें साष्टांग

बुनीपाद्यै र्वृ त्तैरन्यैर्विराजितम् ॥ ७ ॥ विष्णुपादोदकीपुण्याऽलक नंदास्तितत्रच ॥ तत्रगत्वाऽनमद्देवंनारायणमहामुनिम् ॥८॥ परब्रह्मणिसंलग्नमानसंचजितेंद्रियम् ॥ जितारिषट्कममलंप्रस्फुरद्ब हुलप्रभम् ॥९॥ नमस्कृत्वाचसाष्टांगंदेवदेवंतपस्विनम् ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वातुष्टावनारदोविभुम् ॥ १० ॥ नारदउवाच ॥ देवदेव जगन्नाथकृपाकूपारसत्पते ॥ सत्सव्रतस्त्रिसत्योसिसत्यात्मासत्यसंभवः ॥ ११ ॥ सत्ययोनेनमस्तेस्तु-त्वामहंशरणंगतः ॥ तपस्तेऽखिल शिक्षार्थमर्यादास्थापनायच ॥ १२ ॥ अन्यथैककृतात्पापात्कलौमज्ज-तिमेदिना ॥ तथैवपुण्यात्तरतिपुण्यपापिजनावृता ॥ १३ ॥ कृतादिषुयथापूर्वमेकगंतत्समस्तगम् ॥ ताद्द-

दण्डवत् करके उन देवाधिदेव तपस्वी नारायण जी के आगे हाथ जोड़कर नारद जी स्तुति करने लगे ॥ १० ॥ नारद बोले—हे देवाधिदेव ! जगन्नाथ ! कृपासागर ! सत्पते ! आप सत्यव्रत त्रिसत्य सत्यात्मा एवं सत्य से उत्पन्न हो ॥ ११ ॥ हे सत्ययोने ! मैं आपकी शरण आया हूं आप को नमस्कार हो आपकी तपस्या सबकी शिक्षक तथा मर्यादा स्थापक है ॥ १२ ॥ हे नाथ ! कलि में यह पृथ्वी पाप से डूब जाती है और पुण्य से पापी जनों से आवृत होकर भी तर जाती है ॥ १३ ॥ सत्ययुग आदि में

एक से किया कर्म सब को प्राप्त होता है किन्तु कलियुग में ऐसी स्थिति नहीं यहां तो केवल कर्ता ही भोगता है ॥१४॥ हे भगवन्! आपकी तपस्या की स्थिति तो पाप पुण्य दोनों से लिपायमान है। अब तो सब प्राणी विषयासक्त हैं ॥ १५ ॥ कुटुम्ब एवं गृह में आसक्त हो रहे हैं। अब उनका तथा मेरा जिसमें हित हो वह विचार कर कहिये ॥ १६ ॥ मैं आप के मुख से सुनने की इच्छा

किस्थतिंनिराकृत्यकलौकर्त्तैवकेवलम् ॥ १४ ॥ लिप्यतेपुण्यपापाभ्यामितितेतपसि स्थितः ॥ १५ ॥ भगवन्प्राणिनःसर्वे विषयासक्तमानसः ॥ १५ ॥ दारापत्यगृहासक्तस्तेषांहितकरंचयत् ॥ ममापिहितकृत्किंचि-द्विचार्यत्वंतुमर्हसि ॥१६॥ त्वन्मुखाच्छ्रोतुकामोहंब्रह्मलोकादिहागतः ॥ ऊपकारप्रियोविष्णुरितिवेदेविनिश्चितम ॥ १७ ॥तस्माल्लोकोप कारायकथासारंवदाधुना ॥ तस्यश्रवणमात्रेणनिर्भयंविंदतेपदम् ॥ १८ ॥ नारद-स्यवचःश्रुत्वाप्रहस्यभगवानृषिः ॥ कथांकथितुमारेभे पुण्यांभुवनपावनीम् ॥ १९ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ गोपांगनावदनपंकजषट्पदस्यरासेश्वरस्यरसिकाभरणस्यपुंसः ॥ वृन्दावने विहरतोव्रजभर्तुरादेःपुण्यांकथा-

से ब्रह्मलोक से चल कर यहां आया हूं। आप विष्णु उपकार प्रिय हैं ऐसा वेद कहते हैं ॥ १७ ॥ अतएव लोकोप कार के लिये आप कथासार कहिये। जिसके श्रवण करने से प्राणी अभयपद प्राप्त कर सके ॥ १८ ॥ नारदजी के वचन सुनकर हंसते हुए ऋषि भगवान् लोक पावनी पवित्र कथा कहने लगे ॥ १९ ॥ श्री नारायण बोले—हे नारद! श्रीमद्गोपीजनों के मुखारबिन्दु के भ्रमर

रास के ईश्वर, रसिक पुरुषों के आभरण, आदि पुरुष, वृन्दावन विहारी भगवान् ब्रजेश्वर की परम पवित्र कथा सुनो ॥ २० ॥ हे वत्स ! भला उनके चरित्र कौन वर्णन कर सकता है जो भगवान् जगत् के विधाता एवं निमिष मात्र में संहार करने वाले हैं। हे मुने ! तुम भी तो भगवच्चरित्र जानते ही हो जो अकथनीय सार रूप एवं सरस है ॥ २१ ॥ फिर भी मैं पुरुषोत्तम का अत्यद्भुत

भगवतःशृणुनारदत्वम् ॥ २० ॥ चक्षुर्निमेषपतितोजगतांविधातातत्कर्मवत्सकथितुंभुविकःसमर्थः ॥ त्वंचापि नारदमुनेभगवच्चरित्रंजानासिसारसरसंवचसामगम्यम् ॥ २१ ॥ तथापिवक्ष्येपुरुषोत्तमस्यमाहात्म्यमत्यद्भुतमादरेण ॥ दारिद्र्यवैधव्यहरंयशस्यंसत्पुत्रदंमोक्षदमाशुसेव्यम् ॥ २२ ॥ नारदउवाच ॥ पुरुषोत्तमस्तुकादेवोमहात्म्यतस्यकिंमुने ॥ अत्यद्भुतमिवाभातिविस्तरेणवदस्वमे ॥ २३ ॥ सूतउवाच ॥ नारदोक्तंवचःश्रुत्वामुनिर्नारायणोऽब्रवीत् ॥ समाधायमनःसम्यङ्मुहूर्तंपुरुषोत्तमम् ॥ २४ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ पुरुषोत्तमेतिमासस्यनामाप्यस्तिसहेतुकम् ॥ तस्यस्वामीकृपासिंधुःपुरुषोत्तमउच्यते ।२५। ऋषिभिःप्रोच्यतेतस्मान्मासः

महात्म्य कहता हूं। यही महात्म्य दरिद्रता वैधव्य नाशक है। यश सत्पुत्रादि तथा मुक्ति देता है अतः शीघ्र सेवनीय है ॥ २२ ॥ नारद बोले–हे मुनि जी ! यह तो अद्भुत सी बात है कृपया विस्तार से सुनाइये वे देव पुरुषोत्तम कौन हैं ? और उनका क्या महात्म्य है ॥ २३ ॥ सूत जी बोले – नारद के वचन सुनकर मुनि नारायण जी मुहुर्त तक मन को एकाग्र करके बोले ॥ २४ ॥ श्री नारायण बोले—सुनिये महीने का नाम पुरुषोत्तम है उस महीने के स्वामी कृपासागर पुरुषोत्तम हैं ॥ २५ ॥ ऋषि इसे पुरु-

षोत्तम मास कहते हैं। इसके व्रत से पुरुषोत्तम प्रसन्न होते हैं ॥ २६ ॥ नारद जी बोले--स्वामियों के सहित चैत्रादि मास तो सुने हैं किन्तु पुरुषोत्तम मास तो सुनने में नहीं आया ॥ २७ ॥ वह कौन सा महीना है और उसके स्वामी कृपानिधान पुरुषोत्तम किस प्रकार हैं ॥ २८ ॥ हे प्रभो! उसका क्या स्वरूप है। उस महीने में कर्तव्य स्नानदानादि विधान कहिये ॥ २९ ॥ जप पूजा

श्रीपुरुषोत्तमः ॥ तस्यव्रतविधानेनप्रीतःस्यात्पुरुषोत्तमः ॥ २६ ॥ नारदउवाच ॥ सन्तिमध्वादयोमासासेश्वरास्तेश्रुतामया ॥ तन्मध्येनश्रुतोमासःपुरुषोत्तमसञ्ज्ञकः ॥२७॥ पुरुषोत्तमस्तुकोमासस्तस्यस्वामीकृपानिधिः ॥ पुरुषोत्तमःकथंजातस्तन्मेब्रूहिकृपानिधे ॥ २८ ॥ स्वरूपंतस्यमासस्यसविधानंवदप्रभो ॥ किंकर्तव्यंकथंस्नानंकिंदानंतत्रसत्पते ॥ २९॥ जपपूजोपवासादिसाधनंकिंचभण्यताम् ॥ तुष्येत्कृतेनकोदेवःकिंफलंवाप्रयच्छति ॥ ३० ॥ एतदन्यच्चयत्किंचित्तत्त्वंब्रहितपोधन अनापृष्टमपिब्रूयुःसाधवोदीनवत्सलाः ॥ ३१ ॥ नरायेभुविजायंतेपरभाग्यानुवर्तिनः ॥ दारिद्र्यपीडितानित्यंरोगिणःपुत्रकांक्षिणः ॥ ३२ ॥ जडामूकादांभिकाश्चहीन

उपवासादि साधन भी कहिये और उससे कौन से देव प्रसन्न होते हैं और क्या फल देते हैं ॥ ३० ॥ हे तपोधन! साधुजन दीनों पर दया करके विनापूछे भी कह देते हैं अतः और भी जो कुछ तत्त्व हो वह भी सुनाइये ॥ ३१ ॥ और इस प्रकार के भी पुरुष परभाग्यानु जीवी पृथ्वी पर उत्पन्न होते हैं जो दरिद्रता से पीड़ित, नित्य रोगी पुत्रादि की इच्छा वाले ॥ ३२ ॥ जड़, मूक,

पाखण्डी, विद्या रहित, कुचैल, नास्तिक, नीच, जर्जर, नीचों की सेवा करने वाले, ॥३३॥ नष्टआशा वाले संकल्प तोड़ देने वाले, चीणवल, कुरूपी, रोगी कुष्टी किसी अंगसे हीन तथा कोई नेत्र हीन ॥३४॥ कई एक इष्ट मित्र कलत्रसे संयुक्त एवं कई पिता मातासे वियुक्त, कई शोक दुःख आदि से शुष्क अंगों वाले, प्रिय वस्तु से रहित ॥३५॥ हे प्रभो ! ऐसी कथा सुनाइये जिसके सुनने पढ़ने

विद्याःकुचैलिनः॥ नास्तिकालंपटानीचाजर्जराःपरसेविनः ॥३३॥ नष्टाशाभग्नसंकल्पाःचीणसत्वाःकुरूपिणः॥ रोगिणःकुष्ठिनोव्यंगानेत्रहीनाश्चकेचन ॥ ३४ ॥ इष्टमित्रकलत्राप्तपितृमातृवियोगिनः ॥ शोकदुःखादि शुष्कांगाः स्वेष्टवस्तुविवर्जिताः ॥ ३५ ॥ पुनर्नैवंविधास्तेस्युर्यःकृतेनश्रुतेनच ॥ पठितेनानुचीर्णेनतद्वदं स्वममप्रभो ॥ ३६ ॥ वैधव्यवंध्यतादोषहीनःगत्वदुराधयः ॥ रक्तपित्ताद्यपस्माररराजयक्ष्मादयश्चये ॥३७॥ एतैर्दोषसमूहैश्चदुःखितान्वीक्ष्यमानवान् ॥ दुःखितोऽस्मिजगन्नाथकृपांकृत्वाममोपरि ॥ ३८ ॥ विस्तरे णवदब्रह्मन्मन्मनोमोदहेतुकम् ॥ सर्वज्ञःसर्वतत्त्वानांनिधानंत्वमसिप्रभो ॥ ३९ ॥ सूतउवाच ॥ इतिविधित

करने एवं आचरण से फिर इस प्रकार के रोगादि दोष युक्त मनुष्य उत्पन्न न हों ॥ ३६ ॥ और विधवापन एवं बन्ध्यात्व आदि दोष भी न हों, अंगहीनता भी न हो एवं दुष्ट व्याधियां रक्तपित्त आदि मिरगी, राजयक्ष्मा आदि राजरोग ॥३७॥ इन बीमारियों से पीड़ित मनुष्यों को देख कर हे जगन्नाथ ! मैं अत्यन्त दुःखित हूं मुझ पर कृपा करें ॥३८॥ मुझे प्रसन्न करने के हेतु हे ब्रह्मन् ! विस्तार से कहें। आप सर्वज्ञ एवं सर्वतत्त्वों के निधान हो ॥ ३९ ॥ सूत जी बोले--इसी प्रकार लोक हित कारक ब्रह्मा जी के

रसमय बचन सुन कर परमशान्त मुनि की पूजा करके श्री नारायण जी मनोहर बाणी से कहने लगे ॥ ४० ॥

इति श्री पुरुषोत्तममहात्म्ये भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

ऋषि बोले—हे सूतजी ! नर सखा नारायण ने नारदजी को जो शुभ बचन कहे हे महा भाग ! वह हमें विस्तार पूर्वक

नयोदितंरसालंजनहितहेतुनिशम्यदेवदेवः ॥ अभिनवघनरावरम्यवाचाऽवददभिपूज्यमुनिंसुधांशुशांतम् ॥४०

इति श्रीवृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेप्रश्नविधिर्नामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

ऋषयऊचुः ॥ नारायणोनरसखोयदुवाचशुभंवचः ॥ नारदायमहाभागतन्नोवदसविस्तरम् ॥ १

सूतउवाच ॥ नारायणवचोरम्यंश्रूयतांद्विजसत्तमाः ॥ यदुक्तंनारदायैतत्प्रवक्ष्यामियथाश्रुतम् ॥ २ ॥

श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामियदुक्तंहरिणापुरा ॥ राज्ञेयुधिष्ठिरायैवश्रीकृष्णेनमहात्मना ॥ ३ ॥

एकादाधार्मिकोराजाऽजातशत्रुर्युधिष्ठिरः ॥ द्यूतेपराजितोदुष्टैर्धार्तराष्ट्रैश्छलप्रियैः ॥ ४ ॥ समक्षमग्नि-

सुनाइये ॥ १ ॥ सूतजी बोले ! श्रीनारायणजी ने नारदजी को जिस प्रकार कहा वह सुनिये मैं कहता हूं ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले-हे नारद ! सुनो जैसा कि राजा युधिष्ठिर के प्रति भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा वह मैं कहता हूँ ॥ ३ ॥ जिस समय कपट प्रिय दुष्ट दुर्योधन ने अजात शत्रु धर्मात्मा महाराज युधिष्ठर को जूए में पराजित कर दिया था ॥ ४ ॥ उस समय दुर्योधन

की आज्ञा से दुःशासन ने अग्नि से प्रकट हुई धर्मपरायण द्रौपदी को बालों से पकड़ कर सभा में खींचा था ॥ ५ ॥ भरी सभा में उसकी साड़ी खींची जा रही थी, ऐसे समय श्रीकृष्ण ने उसकी रक्षा की फिर प्रतिज्ञा के कारण पाण्डव काम्यक वनमें चले गये ॥ ६ ॥ वहां पाण्डवों ने अनेकों कष्ट उठाये। खुले बालों से वनमें फिरते रहे जंगली हाथियों की भांति जंगली फल फूल

संभूताकृष्णाधर्मपरायणा ॥ दुःशासनेनदुष्टेनकचेष्वादायकर्षिता: ॥ ५ ॥ आकृष्टानिचवासासिश्रीकृष्णेन सुरक्षिता ॥ पश्चाद्राज्यंपरित्यज्यप्रयाताःकाम्यकंवनम् ॥ ६ ॥ अत्यंतंक्लेशमापन्नाःपार्थावन्यफलाशिनः॥ विष्कककचाचिताःसर्वेग जाइववनौकसः ॥ ७ ॥ अथतान्दुःखितान्द्रष्टुं भगवान्देवकीसुतः ॥ जगामकाम्यकवनंमुनिभिःपरिवारितः ॥ ८ ॥ तंदृष्ट्वासहसोत्तस्थुर्देहाः प्राणानिवागतान् ॥ पार्थाःसस्नजिरेप्रीत्याश्रीकृष्णं प्रेमविह्वलाः ॥ ९ ॥ तेचानीनमतांभक्त्यायमौहरिपदांबुजम् ॥ द्रोपदीतंननामाशुशनैःशनैरतंद्रिता ॥१०॥ तान्दृष्ट्वादुःखितान्पार्थान्रौरवाजिनवाससः ॥ धूलिभिर्धूसरान्रूक्षान्सर्वतःकचसंवृतान् ॥ ११ ॥ पांचाली

खाते रहे ॥ ७ ॥ उन दुःखियों को देखने के लिये मुनियों को साथ लेकर भगवान् कृष्ण एकबार काम्यकवन में पधारे ॥ ८ ॥ तब भगवान् को आया देखकर मानो शरीर में प्राण आगये हों शीघ्रता पूर्वक वे पाण्डव उठकर प्रेम से भगवान् को मिलने लगे ॥ ९ ॥ नकुल सहदेव ने भगवान् के चरणारविन्दों को प्रणाम किया। और द्रोपदी भी अत्यन्त सावधानता से शनैः २ प्रणाम करने लगी ॥ १० ॥ भगवान् ने देखा वे सब महादुःखी थे मृगचर्म धारण किये मिट्टी से भरे हुए रूखे एवं खुले बालों

वाले थे ॥११॥कोमलांगी द्रोपदी भी अत्यन्त दुःखी थी ऐसा उन्हें दुःखी देख भगवान् स्वयं अतीव दुःखित हुए ॥१२॥ तत्र भक्त वत्सल विश्वात्मा भगवान् धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन आदि के जलादेने की इच्छा से क्रोध में आगये। उनकी भौंहे कुटिल हो गई ॥ १३ ॥ करोड़ों विकराल काल की भांति भयानक मुख से प्रलयाग्नि भड़क उठी। त्रिलोकी को मानो जला डालने के

मपितन्वंगीतादृशीदुःखसंवृताम् ॥ तोषांदुःखमतीवोग्रं दृष्ट्वा वातीवदुःखितः ॥ १२ ॥ धार्तराष्ट्रान्दग्धुकामो भगवान् भक्तवत्सलः ॥ चक्रे कोपंसविश्वात्माभ्रूभंगकुटिलेक्षणः ॥ १३ ॥ कोटिकालकरालास्यःप्रलयाग्निरिवोत्थितः ॥ संदष्टौष्ठपुटःप्रोच्चे स्त्रिलोकींज्वलयन्निव ॥ १४ ॥ सीतावियोगसंतप्तःसाक्षाद्दाशरथिर्यथा। तमालक्ष्यतदावीरोबीभत्सुजार्तवपेथुः ॥ १५ ॥ उत्थायकृष्णंतुष्टावबद्धांजलिपुटंभिया ॥ धर्मानुमोदितः शीघ्रंद्रौपद्याचतथापरैः ॥ १६ ॥ अर्जुनउवाच ॥ हेकृष्णजगतांनाथनाथनाहंजगद्बहिः ॥ त्वमेवजगतां-पातामांनपासिकथंप्रभो ॥ १७ ॥ यच्चक्षुःपतनेनैवब्रह्मणःपतनंभवेत् ॥ तत्कोपेनभवेत्किंवाकोवेदकिंभविष्यति

लिये अधर ओष्ट को दांतों से काटने लगे ॥ १४ ॥ सीता वियुक्त साक्षात् श्रीराम जिस प्रकार क्रोध में भर गये थे उसी प्रकार भगवान् का स्वरूप देखकर अर्जुन कांप उठे ॥ १५ ॥ तत्काल उठकर युधिष्ठिर द्रोपदी एवं और भी हाथ जोड़ कर भगवान् की स्तुति करने लगे ॥ १६ ॥ अर्जुन बोले--हे कृष्ण ! हे जगत् के नाथ ! मैं भी तो जगत् से बाहिर नहीं। आपतो जगत् के रक्षक हो क्या मेरी रक्षा नहीं करोगे प्रभो ॥ १७ ॥ जिस दृष्टि के पतन मात्र से ब्रह्मा का भी पतन हो जाता है। इस प्रकार

के क्रोध से मालूम नहीं क्या होजायगा ॥१८॥ हे जगदीश्वर ! इस संहारक क्रोध को आप हर लें । आपके इस क्रोध से तो जगत् का प्रलय हो जायगा ॥ १९ ॥ आप सर्व तत्त्वों के ज्ञाता, सब कारणों के कारण, वेद वेदाङ्ग के बीजों के बीज ईश्वर श्रीकृष्ण हो आपको नमस्कार है ॥२०॥ आप चराचर जगत्के उत्पादक एवं ईश्वर हो ! मंगलों के मंगलएवंबीजरूप सनातन हो॥२१॥एक अपराध

॥ १८ ॥ क्रोधंसंहरतस्ताततातजगत्पते ॥ त्वद्विधानांचकोपेनजगतःप्रलयोभवेत् ॥ १९ ॥ वंदेत्वांसर्वतत्त्वज्ञंसर्वकारणकारणम् ॥ वेदवेदांगबीजस्यबीजंश्रीकृष्णमीश्वरम् ॥ २० ॥ त्वमीश्वरोऽसृजःसर्वजगदेतच्चराचरम् ॥ सर्वमंगलमांगल्यबीजरूपःसनातनः ॥ २१ ॥ सकथंस्वकृतंहन्याद्विश्वमेकापराधतः ।। मशकान्भस्मसात्कर्तुंकोवादहतिमंदिरम् ॥ २२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिविज्ञाप्यश्रीकृष्णंफाल्गुनःपरवीरहा ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वाप्रणनामजनार्दनम् ॥ २३ ॥ सूतउवाच ॥ हरिःक्रोधंनिरस्याशुसौम्योभूच्चंद्रमाइव ॥ तमालक्ष्यतदासर्वेपांडवाःस्वास्थ्यमागताः ॥ २४ ॥ प्रीत्युत्फुल्लमुखाःसर्वेप्रणेमुःप्रेमविह्वलाः ॥ श्रीकृष्णंपूज-

से स्वकृत विश्व को कौन नाश कर देता है । मच्छरों को जलाने के लिये सारे मन्दिर को भला कौन जला देता है ॥२२॥ श्रीनारायण बोले—हे शत्रुओं के नाशक वीर अर्जुन ! घबड़ामत, इसप्रकार प्रार्थना करके बारम्बार हाथजोड़े प्रणाम करने लगे ॥२३॥सूतजी बोले —अर्जुन की प्रार्थना से क्रोध को हटा कर श्रीकृष्ण चन्द्रमा की भांति शीतल हुए । ऐसा देखकर सब पांडव भी स्वस्थ हुए ॥ २४ ॥ उनके प्रेम के कारण मुख खिल उठे । प्रेम से विह्वल होकर सब ने प्रणाम किया और जङ्गली कन्दमूल फलों से

पूजन किया ॥ २५ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार भक्त वत्सल शरण्य श्री कृष्ण को प्रसन्न जान कर प्रेम मग्न सिर झुकाये ॥ २६ ॥ हाथ जोड़े बारम्बार प्रणाम करते हुए अर्जुन ने वही प्रश्न पूछा जैसे कि नारद जी आप पूछ रहे हैं ॥ २७ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् ऐसा सुनकर दो घड़ी ध्यान करके अपने मित्र एवं प्रेमवती पांचाली को धैर्य देकर पाण्डवों के हितकारी बचन

यांचक्रुर्वन्यैर्मुलफलादिभिः ॥ २५ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ततःप्रसन्नंश्रीकृष्णंशरण्यंभक्तवत्सलम् ॥ विज्ञायावनतोभूत्वाबृहत्प्रेमपरिप्लुतः ॥ २६ ॥ बद्धांजलिर्मुहुर्डाकेशोनामंनामपुनःपुनः ॥ तंतथाकृतवान्प्रश्नंयथापृच्छतियंभवान् ॥ २७ ॥ श्रुत्वैवंभगवान्दध्यौमुहूर्तमनसाहरिः ॥ ध्यात्वाश्वास्यसुहृद्वर्गंपांचालींचधृतव्रताम् ॥ उवाचवदतांश्रेष्ठःपांडवानांहितंवचः ॥२८॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ शृणुराजन्महाभागवीभत्सोह्ययमद्वचः ॥ अपूर्वोयंकृतःप्रश्नोनोत्तरंवक्तुमुत्सहे ॥ २९ ॥ एषगुह्यतरोलोकेऋषीणामपिदुर्घटः ॥ तथापिवक्ष्येमित्रत्वाद्भक्तत्वाच्चतवार्जुन ॥ ३० ॥ तदुत्तरमतीवोग्रंक्रमतःशृणुसुव्रत ॥ मध्वादयश्चयेमासालव-

बोले ॥ २८ ॥ श्रीकृष्ण बोले—हे राजन्! तथा महाभाग अर्जुन! आपने यह अपूर्वसा प्रश्न किया है इसके उत्तर देने में मैं भी असमर्थ हूं ॥ २३ ॥ लोक में यह अत्यन्त गुप्त है ऋषि लोगों के लिये भी कठिन है किन्तु तुम्हें अपना मित्र और भक्त समझ कर अर्जुन! मैं कहता हूं ॥ ३० ॥ इसका उत्तर देना अतीव कठिन है। अब क्रम क्रम से सुनते जाइये। चैत्र आदि महीने, टूटे हुए

पञ्च नाड़िकाएं ॥ ३१ ॥ याम, त्रियाम, ऋतुएं मुहूर्त, उत्तरायण, दक्षिणायन, वर्ष, युग, परार्ध, अन्त, एवं इनसे भी परे॥३२॥ नदियें समुद्र, झीलें, कूए, बावड़ियें, पल्वल, निर्झर, लताएं, औषधियां वृक्ष, एवं वंश वृक्ष ॥ ३३ ॥ वनस्पति, पुर, ग्राम, पर्वत, पत्तन, ये सब के सब मूर्तिमान हैं । ये सब अपने २ गुणों के द्वारा पूजनीय हैं ॥ ३४ ॥इन सब में ऐसा कोई भी नहीं जो अपूर्व

पक्षाश्चनाडिकाः ॥ ३१ ॥ यामास्त्रियामाऋतवोमुहूर्तान्ययनेउभे ॥ हायनंचयुगान्येवपरार्धांताःपरेचये ॥ ॥ ३२ ॥ नद्योर्णवह्रदाःकूपावापील्वलनिर्झराः ॥ लतौषधिद्रुमाश्चैवत्वक्सारापादपाश्चये ॥ ३३ ॥ वनस्पतिपुरग्रामगिरयःपत्तनानिच ॥ एतेसर्वेमूर्तिमंतःपूज्यंतेस्वात्मनोगुणैः ॥ ३४ ॥ नंतेषांकश्चिदप्यस्तिह्यपूर्वः स्वामिवर्जितः ॥ स्वेस्वेऽधिकारेसततंपूज्यंतेफलदायिनः ॥ ३५ ॥ स्वस्वामियोगमाहात्म्यात्सर्वेसौभाग्यशालिनः ॥ अधिमासःसमुत्पन्नःकदाचित्पांडुनंदन ॥ ३६ ॥ तमूचुःसकलालोकाअसहायंजुगुप्सितम् ॥ अनहोमलमासोयंरविसंक्रमवर्जितः ॥ ३७ ॥ अस्पृश्योमलरूपत्वाच्छुभेकर्मणिगर्हितः ॥ श्रुत्वैतद्वचनंलो-

एवं स्वामि रहित हो । ये सब अपने २ अधिकार में स्थित फल देते हैं, अतः पूजनीय हैं ॥ ३५ ॥ और अपने २ स्वामी की महिमा के कारण ही सौभाग्य शाली हैं । हे पाण्डुनन्दन ! इनमें कभी अधिक मास की उत्पत्ति होगई ॥ ३६ ॥ ये सब के सब एवं लोक उसकी निन्दा करने लगे । कोई तो उसे मलमास कहता कोई असहाय, एवं कोई रवि संक्रमण से रहित कहने लगा॥३७॥

कोई इसे मलरूप समझ अस्पृश्य बोल उठा । कोई इसे शुभ कर्म्मों में निन्दित बोला इन्हीं वचनों को सुन यह निरुद्यमी एवं हत प्रभ होगया ॥ अत्यन्त दुखी एवं अत्यन्त चिन्तातुर होकर यह मरणावस्था को प्राप्त हुआ। तब किसी प्रकार से धैर्य करके मेरी शरण में आया ॥ ३९ ॥ उस वैकुण्ठ लोक में पहुँच गया जहां कि मेरा निवास है। भीतर पहुंच कर इसने मेरे

कान्निरुद्योगोहतप्रभः ॥ ३८ ॥ दुःखान्वितोतिखिन्नात्माचिंताग्रस्तैकमानसः ॥ मुमूर्षुरभवत्तेनहृदयेनविदूयता ॥ पश्चाद्धैर्यंसमालंब्यमामसौशरणंगतः ॥ ३९ ॥ प्राप्तोवैकुण्ठभवनंयत्राहमवसंनर ॥ अंतर्गृहंसमागत्यमामसौदृष्टवान्परम् ॥ ४० ॥ अमूल्यरत्नरचितेहेमसिंहासनेस्थितम् ॥ तदानींमामसौदृष्ट्वादंडवत्पतितोभुवि ॥ ४१ ॥ प्रांजलिःप्रयतोभूत्वामुंचन्नश्रूणिनेत्रतः ॥ वाचागद्गद्यासौम्यंबभाषेधैर्यमुद्वहन ॥ ४२ ॥ सूतउवाच ॥ इत्युक्त्वाबदरीनाथोविरराममहामुनिः ॥ तच्छ्रुत्वापुनरेवाहनारदोभक्तवत्सलः ॥ ४३ ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंगत्वाभवनमगलंपूर्णरूपस्यविष्णोर्भक्तिप्राप्यंजगदघहरंयोगिनामप्यगम्यम् ॥ यत्रैवास्ते-

दर्शन किये ॥ ४० ॥ रत्न ज़टित स्वर्ण सिंहासन पर बैठे हुए मेरे सामने आकर इसने पृथ्वी पर दण्डवत् प्रणाम किया ॥ ४१ ॥ हाथ जोड़े हुए आंखों से आंसू बहाते धैर्य धारण करके गद्गद्वांणी द्वारा कहने लगा॥४२॥सूतजी बोले—इतनी कथा सुनाकर भक्तवत्सल नारदजी फिर कहने लगे ॥ ४३ ॥ नारद बोले—हे नाथ ! इस प्रकार पूर्णरूप विष्णु भगवान् के निर्मल भक्ति प्राप्य,

जगत्पाप नाशक, योगी जन भी जिसे नहीं पासकते ऐसे वैकुन्ठ लोक में जहां कि जगत् को अभय देने वाले ब्रह्मरूप मुकुन्द रहते हैं वहां जाकर उनकी शरण में अधिक मास ने क्या कहा ॥ ४४ ॥

इति श्री पुरुषोत्तम महात्म्ये भाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

जगदभयदोब्रह्मरूपोमुकुंदस्तत्पादाब्जंशरणमभितः किंबभायेऽधिमासः ॥ ४४ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीय-पुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येऽधिमासस्यवैकुण्ठप्रापणंनामतृतीयोऽध्याय ॥ ३ ॥

श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्येऽहंलोकानांहितकाम्यया ॥ अधिमासेनयत्प्रोक्तंहरेरग्रे शुभंवचः ॥ १ ॥ अधिमासउवाच ॥ अयिनाथकृपानिधेहरेनकथंरक्षसिमामिहागतम् ॥ कृपणंप्रबलैर्निराकृतंमलमासे-त्यभिधांविधायमे ॥ २ ॥ शुभकर्मणिवर्जितंहिमांनिरधीशंमलिनंसदैवतैः ॥ अवलोकयतोदयालुताक्वगता तेऽद्यकठोरताकथम् ॥ ३ ॥ वसुदेववरांगनायथाखलकंसानलतःसुरक्षिता ॥ वदमांशरणागतंकथंनतथा

श्रीनारायण बोले - हे नारद ! लोकहित कामना से मैं तुझे कहता हूं सो सुन । अधिक मास विष्णु भगवान् को प्रणाम करके शुभ वचन बोला ॥ १ ॥ अधिकमास बोला–हे नाथ ! कृपा निधे ! मैं आपकी शरण आया हूं क्या मेरी रक्षा नहीं होगी। मैं दीन हूँ मुझे मलमास कह कर बलवानों ने निरादर कर दिया है ॥ २ ॥ स्वामी से रहित एवं मलिन कह कर शुभ कर्मों से वर्जित कर दिया है। ऐसा देखते हुए आपकी दयालुता कहां चली गई। आज यह कठोरता कैसी ॥ ३ ॥ हे दीन वत्सल !

कंस की कोप अग्नि से बसुदेव की पत्नी देवकी की आपने रक्षा की । आज फिर मुझ शरणागत की रक्षा क्यों नहीं करते !! ४ ॥
दुष्ट दुःशासन के दुःख से द्रौपदी को बचाने वाले दीनानाथ ! कहिये आज मुझ शरणागत की रक्षा क्यों नहीं करते ॥ ५ ॥
जैसे कि आपने यमुना के विषैले जल से गोप एवं पशुओं की रक्षा की वैसे मुझ शरणागत दीन को अब रक्षा क्यों नहीं करते

द्यावसिदीनवत्सल ॥ ४ ॥ द्रुपदस्यसुतायथापुराखलदुःशासनदुःखतोऽविता ॥ वदमांशरणागततंकथंन तथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ५ ॥ यमुनाविषतोऽविताःपशुपालाःपशवोयथात्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंन तथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ६ ॥ पशवःपशुपास्तदंगनाअवितादावधनंजयाद्यथा ॥ वदमांशरणागतंकथंन-तथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ७ ॥ पृथिवीपतयोयथाविताभगधेशालयबंधनात्त्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंन तथाद्यावसिदीनवत्सल ॥ ८ ॥ गजनायकएत्यरक्षितोझटितिग्राहमुखाद्यथात्त्वया ॥ वदमांशरणागतंकथंन तथाद्यावसिदीनवत्सल ॥९॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिविज्ञाप्यभूमानंविरराममनिरीश्वरः ॥ मलमासोऽश्रुव

॥ ६ ॥ दावाग्नि से पशु गोप गोपियों की रक्षा करने वाले दीनबन्धु ! अब मुझ शरणागत की रक्षा क्यों नहीं करते ॥ ७ ॥
जरासन्ध की कैद से जिस प्रकार राजाओं की रक्षा करली थी वैसे ही अब मुझ शरणागत की रक्षा क्यों नहीं करते ॥ ८ ॥
गजराज की पुकार सुनकर उसे ग्राह के मुख से रक्षा करने वाले दीन वत्सल मुझ शरणागत की रक्षा क्यों नहीं करते ॥ ९ ॥

श्रीनारायण बोले– वह अनाथ मलमास इस प्रकार प्रार्थना करके आँसु बहाता जगत्पति विष्णु के सामने ठहर गया ॥ १० ॥ तब दयामय दया से द्रवित होकर सामने खड़े हुए दीन वदन मलमास से बोले ॥ ११ ॥ श्रीविष्णु बोले––हे वत्स हे पुत्र ! तुम इतने दुःखी क्यों हो ? इस प्रकार का महान् दुःख तुम्हें कौनसा प्राप्त हुआ है ॥ १२ ॥ तुम शोक मत करो मैं अभी २ तुम्हारा दुःख

दनस्तिष्ठन्नग्रे जगत्पते ॥ १० ॥ तदानीश्रीहरिस्तूर्णंकृपयाप्लावितोभृशम् ॥ उवाचदीनवदनंमलमासंपुरःस्थितम् ॥ ११ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ वत्सवत्सकिमत्यर्थंदुःखमग्नोसिसांप्रतम् ॥ एतादृशंमहद्दुःखंकिंतेमनसिवर्तते ॥ १२ ॥ त्वामहंदुःखसंमग्नमुद्धरिष्यामिमाशुचः ॥ नमेशरणमापन्नःपुनःशोचितुमर्हति ॥ १३ ॥ इहागत्यमहादुःखीपतितोऽपिनशोचति ॥ किमर्थत्वमिहागत्यशोकसंमग्नमानसः ॥ १४ ॥ अशोकमजरंनित्यंसानंदंमृत्युवर्जितम् ॥ वैकुण्ठमीदृशंप्राप्यकथंदुःखान्वितोभवान् ॥ १५ ॥ त्वामत्रदुःखितंदृष्ट्वावैकुंठस्थाः सुविस्मिताः ॥ किमर्थंमर्तुकामोसितन्मेवत्सवदाधुना ॥ १६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ श्रुत्वेदंभगव

दूर कर दूंगा । जो भी पुरुष एक वार मेरी शरण में आ जाय उसको कोई शोक नहीं रहता ॥ १३ ॥ यहाँ आकर कोई भी दुःखी नहीं रहता । तू यहाँ आ गया है तुझे दुःखी नहीं रहना चाहिये ॥ १४ ॥ यह वैकुण्ठ है शोक रहित, अजर, नित्य, मृत्यु रहित एवं आनन्द संयुक्त है, यहाँ आकर तू क्यों दुःखी हो रहा है ॥ १५ ॥ हे पुत्र ! तुझे दुःखी देखकर य.ाँ के वैकुण्ठवासी भी विस्मत हैं । तू क्यों मरने की इच्छा रखता है । इसका कारण कह ॥ १६ ॥ श्रीनारायण बोले––जिस प्रकार भार उठाने वाले

का भार हलका हो जाय, ऐसे धैर्य दायक भगवान् के वचन सुनकर, दीर्घ श्वास लेता हुआ वह मलमास, भगवान् के प्रति बोला ॥ १७ ॥ अधिक मास बोला—हे भगवन् ! आकाश की भांति सारे विश्व में आप व्यापक हैं आपसे क्या अज्ञात है ॥ १८ ॥ चराचर जगत् के घट २ में रहने वाले सबके साक्षी विश्वद्रष्ठा इस प्रकार के कूटस्थ रूप तुममें सब प्राणी निवास

द्वाक्यंत्रिभारइवभारभृत् ॥ श्वासोच्छ्वाससमायुक्तउवाचमधुसूदनम् ॥ १७ ॥ अधिमासउवाच ॥ अज्ञातं-किंचिन्नेवास्तिसर्वत्रभगवंस्तव ॥ आकाशइवसर्वत्रविश्वंव्याप्यव्यवस्थितः ॥ १८ ॥ चराचरगतोविष्णुः साक्षीसर्वस्यविश्वदृक् ॥ कूटस्थेत्वयिसर्वाणिभूतानिचव्यवस्थया ॥ १६ ॥ संस्थितानिजगन्नाथनकिंचिद्भवता विना ॥ किन्नजानासिभगवन्निर्भाग्यस्यममव्यथाम् ॥ २० ॥ तथापिवच्मिहेनाथदुःखजालमपावृतम् ॥ तादृशंनैवकस्यापिनश्रुतंनावलोकितम् ॥ २१ ॥ क्षणालवामुहूर्ताश्चपक्षामासादिवानिशम् ॥ स्वामिनाम-धिकारैस्तेमोदंतेनिर्भयाःसदा ॥ २२ ॥ नमेनामनमेस्वामीनहिकश्चिन्ममाश्रयः ॥ तस्मान्निराकृतःसर्वैःसा-

करते हैं ॥ १६ ॥ हे जगन्नाथ ! सारे संसार में आपके बिना अन्य कुछ भी नहीं । क्या मुझ निर्भाग्य का दुःख आप नहीं जानते ? ॥ २० ॥ फिर भी हे नाथ मैं अपना दुःख जाल सुनाता हूं । वह ऐसा दुःखजाल है जिसे न किसी ने देखा एवं न सुना है, उसमें मैं फंसा हूं॥२१॥ क्षण, लव, मुहूर्त, पक्ष, मास, दिन, रात्रि, आदि ये सब अपने २ स्वामी से अधिकार प्राप्त करके निर्भय विचरणकर रहे हैं ॥ २२ ॥ न मेरा कोइ नाम है, न कोई स्वामी एवं न कोई आश्रय है । इसी कारण सारे अधिदेव

सुकर्मों में मेरा निरादर कर देते हैं ॥ २३ ॥ ये सब अन्ध परम्परा में पड़ कर यही कहते आ रहे हैं कि मलमास शुभ कर्मों में निषिद्ध है । इसी निरादर से मैं जीना नहीं चाहता ॥ २४ ॥ इस प्रकार के दुःखी जीवन से मरना अच्छा है । नित्य का जला भला किस प्रकार सोवे । इससे बढ़कर महाराज मैं और क्या कहूं ॥ २५ ॥ आप पर दुःख नहीं सहते सदा उपकार प्रिय हो ऐसा

धिदैवैःसुकर्मणः ॥२३॥ निषिद्धोमलमासोयमित्यंधोऽवटगःसदा ॥ तस्माद्विनष्टुमिच्छामिनाहंजीवितुमुत्सहे ॥२४॥ कुजीविताद्वरंमृत्युर्नित्यदग्धःकथंस्वपेत् ॥ अतःपरंमहाराजवक्तव्यंनावशिष्यते ॥२५॥ परदुःखासहिष्णुस्त्वमुपकारप्रियोमतः ॥ वेदेषुचपुराणेषुप्रसिद्धःपुरुषोत्तमः ॥२६॥ निजधर्मंसमालोच्ययथारुचितथाकुरु ॥ पुनःपुनः पामरेणनवक्तव्यःप्रभुर्महमान् ॥२७॥ मरिष्येऽहंमरिष्येऽहंमरिष्येऽहंपुनःपुनः ॥ इत्युक्त्वामलमासोऽयंविररामविधेःसुत ॥२८॥ ततःपपातसहसासन्निधौश्रीरमापतेः ॥ तत्रतंपतितंदृष्ट्वासंसज्जातासुविस्मिता ॥२९॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्त्वाविरतिमुपागतेऽधिमासेश्रीकृष्णोबहुलकृपाभरावसन्नः ॥ प्रोवाच-

वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध पुरुषोत्तम हो ॥ २६ ॥ अब आप अपना धर्म देखकर जैसा चाहें वैसा करें । आप प्रभु हैं मैं पामर हूं, वार २ क्या कहता रहूँ ॥ २७ ॥ मैं मरूंगा, मरूंगा, मरूंगा ऐसा वार २ कह कर हे नारद जी वह मलमास चुप होकर ॥२८॥ श्रीलक्ष्मीनाथ के सन्निधान सहसा गिर पड़ा । इस प्रकार उसे गिरा हुआ देख कर सबके सब विस्मित हो गये ॥ २९ ॥

श्रीरायण बोले--उस अधिक मास के गिरने एवं चुप हो जाने पर श्रीकृष्ण दयाभार से परिपूर्ण होकर शरदऋतु की किरणों की भांति शीतल एवं मेघ के समान गंभीर वाणी द्वारा सुन्दर वचन बोले ॥ ३० ॥ सूतजी बोले—इस प्रकार पाप समूह को जलाने वाली बड़वाग्नि के तुल्यवेद की ऋद्धि में परायण नारायण के पवित्र वचन सुनकर आगे सुनने की इच्छा से हे ब्राह्मणो ! प्रसन्न

ज्जलदगभीररावरम्यंनिर्वाणंशिशिरमयूखवन्नयंस्तम् ॥ ३० ॥ सूतउवाच ॥ नारायणस्यनिगमर्द्धिपराय-णस्यपापौघवार्धिवडाग्निवचोवदातम् ॥ श्रुत्वाप्रहर्षितमनामुनिराबभाषेशुश्रूषुरादिपुरुषस्यवचांसिविप्राः ॥ ॥ ३१ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येमलमासविज्ञप्तिर्नामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

नारदउवाच ॥ किमुवाचमहाभागश्रुत्वातद्वचनंहरिः ॥ चरणाग्रेनिपतितमधिमासंतपोनिधे ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामियदुक्तंहरिणानघ ॥ धन्योऽसित्वंमुनिश्रेष्ठयन्मांपृच्छसिसत्कथाम् ॥ ॥ २ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ शृणुतत्रत्यवृत्तांतंप्रवक्ष्यामित वाग्रतः ॥ नेत्रकोणसमादिष्टस्तदानीहरिणार्जुन

होकर नारद बोले ॥ ३१ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम महात्म्ये भाषा टीकायां चतुर्थोध्यायः ॥ ४ ॥

नारद बोले—हे महाभाग तपोनिधे ! तब चरणों में पड़े अधिक मास को विष्णु भगवान् ने क्या उत्तर दिया ॥ १ ॥ श्रीनारायण बोले—हे निष्पाप नारद ! सुन जो कुछ भगवान् ने कहा । तू धन्य है जो मुझ से यह कथा पूछ रहा है ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण

बोले – हे अर्जुन ! अब वहां का वृत्तान्त सुनिये तब विष्णु भगवान् ने गरुड़ को इशारे से आज्ञा दी ॥ ३ ॥ गरुड़ पक्षी ने जाकर अपने पंखों से अधिक मास को हवा की उससे होश में आकर वह बोला–प्रभो ! यह मुझे नहीं चाहिये ॥ ४ ॥ अधिक मास बोला-हे नाथ मैं तो आपकी शरण में आया हूं मेरी उपेक्षा न करें ! हे जगत्पते, मेरी रक्षा करें ॥ ५ ॥ यह कह कर कांपते हुए बार

॥ ३ ॥ वीजयामासपक्षेणतंमासंमूर्छितंखगः ॥ उत्थितःपुनरेवाहनैतन्मेरोचतेविभो ॥ ४ ॥ अधिमास-उवाच ॥ पाहिपाहिजगद्धातःपाहिविष्णोजगत्पते ॥ उपेक्षसेकथंनाथशरणंमामुपागतम् ॥ ५ ॥ इत्युक्त्वा-वेपमानंतंविलपंतंमुहुर्मुहुः ॥ तमुवाचहृषीकेशोवैकुण्ठनिलयोहरिः ॥ ६ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ उत्तिष्ठोत्ति-ष्ठभद्रंतेविषादंवत्समाकुरु ॥ त्वद्दुःखंदुर्निवार्यंमेप्रतिभातिनिरीश्वर ॥ ७ ॥ इत्युक्त्वामनसिध्यात्वा-तदुपायंक्षणंप्रभुः ॥ विनिश्चित्यपुनर्वाक्यमुवाचमधुसूदनः ॥ ८ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ वत्सागच्छम-यासार्धंगोलोकंयोगिदुर्लभम् ॥ यत्रास्तेभगवान्कृष्णःपुरुषोत्तमईश्वरः ॥ ९ ॥ गोपिकावृंदमध्यस्थोद्विभुजो

बार विलाप करते हुए अधिक मास को वैकुण्ठ वासी हृषीकेश विष्णु बोले ॥ ६ ॥ श्री विष्णु बोले---हे पुत्र उठो उठो शोक मत करो । हे अनाथ ! तुम्हारा दुःख निवारण करने के योग्य मुझे एक उपाय सूझ गया है ॥ ७ ॥ ऐसा कह कर क्षण भर अपने मन में विचार कर बोले ॥ ८ ॥ श्रीविष्णु बोले–हे पुत्र ! तुम मेरे साथ योगी जन दुर्लभ गोलोक में चलो । जहाँ पुरुषोत्तम ईश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं ॥ ९ ॥ वे श्री गोपीजनों में विराजमान, दो भुजा वाले, मुरली धर, नये मेघोके समान श्याम, लाल कमलों के समान

नेत्रों वाले ॥ १० ॥ शरद पूर्णिमा के चन्द्रमा की भाँति सुन्दर मुख वाले, करोड़ों कामदेव की लावण्यता वाले लीला धाम, परम मनोहर ॥ ११ ॥ पीतम्बर धारी, वन माली, प्रेम विभूषण, रत्नभरण भूषित, भक्त वत्सल दीन दयालु हैं ॥ १२ ॥ जिन के समस्त अंगो पर केसर चन्दन कस्तूरी लग रही है । श्री चिन्हित वक्ष स्थल में कौस्तुभ मणि प्रदीप्त हो रही है ॥ १३ ॥ अमूल्य रत्नों

मुरलीधरः ॥ नवीननीरदश्यामोरक्तपंकजलोचनः ॥ १० ॥ शारदीयपार्वणेंदुशोभातिरोचनाननः ॥ कोटिकंदर्पलावण्यलीलाधाममनोहरः ॥ ११ ॥ पीतांबरधरःस्रग्वीवनमालाविभूषितः ॥ सद्रत्नभूषणःप्रेमभूषणोभक्तवत्सलः ॥ १२ ॥ चंदनोक्षितसर्वांगःकस्तूरीकुंकुमान्वितः ॥ श्रीवत्सवक्षाःसंभ्राजत्कौस्तुभेनविराजितः ॥ १३ ॥ सद्रत्नसाररचितकिरीटीकुण्डलोज्ज्वलः ॥ रत्नसिंहासनारूढःपार्षदैःपरिवेष्टितः ॥ १४ ॥ सएव-परमंब्रह्मपुराणपुरुषोत्तमः ॥ स्वेच्छामयःसर्वबीजंसर्वाधारःपरात्परः ॥ १५ ॥ निरीहोनिर्विकारश्चपरिपूर्ण-तमःप्रभुः ॥ प्रकृतेःपरईशानोनिर्गुणोनित्यविग्रहः ॥ १६ ॥ गच्छावस्तत्रत्वद्दुःखंश्रीकृष्णोव्यपनेष्यति ॥

से जड़ो किरीट मुकुट शिर पर धारण किये हैं एवं कानों में कुण्डल झलक रहे हैं । वे ही प्रभु रत्न जटित सिंहासन पर विराजमान हैं । पार्षद गण सेवा कर रहे हैं ॥१४॥ वे ही परिपूर्ण ब्रह्म पुरुषोत्तम हैं, स्वेच्छामय, सर्वबीज, सर्वाधार परात्पर हैं ॥१५॥ इच्छा से रहित निर्विकार हैं, परिपूर्ण, प्रकृति से परे, सर्वेश निगुर्ण एवं नित्यविग्रह हैं ॥ १६ ॥ वे ही श्रीकृष्ण दुःख दूर करने

वाले हैं हे पुत्र ! हम दोनों वही चले । श्रीनारायण बोले—यह कह अधिक मास का हाथ पकड़ कर विष्णु भगवान् गोलोक में पहुँचे ॥ १७ ॥ हे ! मुने वह गोलोक अज्ञात रूप अन्धकार का नाशक तथा ज्ञान मार्ग का प्रदर्शक दीपक रूप ज्योति स्वरूप है, प्रलय में एवं पहिले वही केवल ज्योति स्वरूप रहता है ॥ १८ ॥ करोड़ों सूर्य प्रकाशक, नित्य, असंख्य विश्व के कारण, स्वेच्छा

श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्त्वातंकरेकृत्वागोलोकंगतवान्हरिः ॥ १७ ॥ अज्ञानांधतमोध्वंसंज्ञानवर्त्मप्रदीपकम् ॥ ज्योतिःस्वरूपंप्रलयेपुरासीत्केवलंमुने ॥ १८ ॥ सूर्यकोटिनिभंनित्यतसख्यंविश्वकारणम् ॥ विभोःस्वेच्छामयस्यैवतज्ज्योतिरुल्बणंमहत् ॥ १९ ॥ ज्योतिरभ्यंतरेलोकत्रयमेवमनोहरम् ॥ तस्यैवोपरिगोलोकः शाश्वतोब्रह्मवन्मुने ॥ २० ॥ त्रिकोटियोजनायामोविस्तीर्णोमंडलाकृतिः ॥ तेजःस्वरूपःसुमहद्रत्नभूमिमयः परः ॥ २१ ॥ अदृश्योयोगिभिःस्वप्नेदृश्योगम्यश्च वैष्णवैः ॥ ईशेनविधृतोयोगैरंतरिक्षस्थितोवरः ॥२२॥ आधिव्याधिजरामृत्युशोकभीतिविवर्जितः ॥ सद्रत्नभूषितासंख्यमंदिरैःपरिशोभितः ॥ २३ ॥ तदधोदक्षि-

मय, विभु परमात्मा की वह महान् एवं उग्र ज्योति है ॥ १९ ॥ उसी ज्योति के भीतर मनोहर तीन लोक हैं । उन के उपर ब्रह्मलोक की भान्ति हे मुने ! वही सनातन गोलोक है ॥ २० ॥ तीन करोड़ योजन के विस्तार वाला मण्डलाकार तेजः स्वरूप है उसकी पृथ्वी अमूल्य रत्नों से जटित शोभाय मान है ॥ २१ ॥ योगिजन तो जिसे स्वप्न में भी नही देख सकते । वैष्णव जन वहां जाते हैं । वह आकाश में स्थित है । परमात्मा ने ही अपने योगबल से उसे धारण कर रखा है ॥ २२ ॥ आधि, व्याधि, जरा, मृत्यु, शोक, एवं भय से रहित है । रत्न जटित असंख्य मन्दिरों से वह

शोभायमान है ॥ २३ ॥ उसके नीचे दांये बांये पचास करोड़ योजन के विस्तार में गोलोक के समान सुन्दर वैकुण्ठ तथा शिव लोक है ॥ २४ ॥ उसमें करोड़ योजन विस्तीर्ण गोलोक है जिसमें वैष्णवजन सुन्दर रेशमी पीतवस्त्र पहिने रहते हैं। वह मण्डलाकार है ॥ २५ ॥ वे वैष्णव शंख, चक्र, गदा पद्मधारी चतुर्भुज लक्ष्मी सम स्त्रियों से सेवित हैं। वे स्त्रियां मेखला नूपुरों की

एसव्येपंचाशत्कोटिविस्तरात् ॥ वैकुण्ठःशिवलोकश्चतत्समःसुमनोहरः ॥ २४ ॥ कोटियोजनविस्तीर्णोवैकुण्ठोमंडलाकृतिः ॥ लसत्पीतपटारम्यायत्रतिष्ठंतिवैष्णवाः ॥ २५ ॥ शंखचक्रगदापद्मश्रियाजुष्टचतुर्भुजाः ॥ स्त्रियोलक्ष्मीसमाःसर्वाःकूजन्नूपुरमेखलाः ॥ २६ ॥ सव्येनशिवलोकश्चकोटियोजनविस्तृतः ॥ लयशून्यश्चसृष्टौचपार्षदैःपरिवारितः ॥ २७ ॥ निवसंतिमहाभागागणायत्रकपर्दिनः ॥ भस्मोद्धूलितसर्वांगानागयज्ञोपवीतिनः ॥ २८ ॥ अधचंद्रलसद्भालाःशूलपट्टिशपाणयः ॥ सर्वेगंगाधराःशूरास्त्र्यंबकाजयशालिनः ॥ २९ ॥ गोलोकाभ्यंतरेज्योतिरतीवसुमनोहरम् ॥ परमाल्हादकंशश्वत्परमानंदकारणम् ॥३०॥

ध्वनियों से सर्वदा सुशोभित हैं ॥ २६ ॥ गोलोक से दांयी ओर प्रलय होने पर भी नाश न होने वाले पार्षदों से आवृत्त करोड़ योजन विस्तृत शिव लोक है ॥ २७ ॥ जहां भस्म रमाये सर्पों का यज्ञो पवीत पहिने महाभाग शिवगण रहते हैं ॥ २८ ॥ आधाचन्द्र जिनके माथे पर सुशोभित है, शूल पट्टिश जिनके हाथों में है सब के सब गंगाधर होकर शंकर की जय मना रहे हैं ॥२९॥ उस गोलोक में आनन्द कारक हर्षवर्धिनी अतीव सुन्दर ज्योति है ॥३०॥ उस ज्योति में परम आनन्द

जनक परात्पर निराकार ब्रह्म का ज्ञान योगिजननेत्रोंसेध्यान कियाकरते हैं ॥३१॥वही ज्योति और भी परम सुन्दर है जिसमें नीलकमल सम अरुण नेत्र॥३२॥शरद ऋतु के करोड़ों पूर्णचन्द्र सम मनोहर शोभाय मान मुखचन्द्र करोड़ों काम सम सौन्दर्य, मनोहर लीला धाम ॥ ३३ ॥ दो भुजा वाले मुरलिका हाथ में लिये मन्द मुस्कराहट वाले पीत वस्त्र धारी भृगु की लात से चिन्हित,

ध्यायंतेयोगिनः शश्वद्योगेनज्ञानचक्षुषा ॥ त देवानंदजनकंनिराकारंपरात्परम् ॥ ३१ ॥ तज्ज्योतिरंतरे· रूपमतीवसुमनोरम् ॥ इन्दीवरदलश्यामंपंकजारुणलोचनम् ॥ ३२ ॥ कोटिशारदपूर्णेंदुशोभातिरोचनाननम् ॥ कोटिमन्मथसौंदर्यलीलाधाममनोहरम् ॥ ३३ ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंसस्मितंपीतवाससम् ॥ श्रीवत्सवक्षसंभ्राजत्कौस्तुभेनविराजितम् ॥ ३४ ॥ सद्रत्नकोटिखचितकिरीटकटकोज्ज्वलम् ॥ रत्नसिंहासनस्थंचवनमालाविभूषितम् ॥ ३५ ॥ तदेवपरमंब्रह्मपूर्णंश्रीकृष्णसंज्ञकम् ॥ स्वेच्छामयंसर्वबीजंसर्वाधारंपरात्परम् ॥ ॥ ३६ ॥ किशोरवयसंशश्वद्गोपवेषविधायकम् ॥ कोटिपूर्णेंदुशोभाढ्यंभक्तानुग्रहकारकम् ॥ ३७ ॥

कौस्तुभ मणि सुशोभित ॥ ३४ ॥ करोड़ों सुरत्नों से जटित किरीट एवं उज्ज्वल हार धारे बन माला से सुशोभित, रत्न जटित सिंहासन पर विराज मान ॥ ३५ ॥ इस प्रकार का स्वरूप परम पूर्ण ब्रह्म श्रीकृष्ण ही हैं। वे स्वेच्छा स्वरूप, सब के बीज, सब के आधार परात्पर हैं ॥ ३६ ॥ किशोर अवस्था के गोपवेश किये हुए करोड़ों पूर्ण चन्द्र की शोभा से सम्पन्न, भक्तों पर कृपा करने वाले हैं ॥ ३७ ॥ वे इच्छा रहित, निर्विकार, परम परिपूर्ण प्रभु हैं। रास मण्डल में विराजमान रासेश्वर श्री हरि हैं

॥ ३८ ॥ मङ्गलरूप, मङ्गलमय, सर्व मङ्गलों के मङ्गल, परम आनन्द के राजा, सत्यस्वरूप, अक्षर एवं अव्यय हैं ॥ ३९ ॥ सब सिद्धियों के ईश्वर, सब सिद्धियों के रूप, सिद्धिदाता, प्रकृति से परे, ईशान, निर्गुण एवं नित्य स्वरूप हैं ॥ ४० ॥ आद्य पुरुष, अव्यक्त, एवं इन्द्ररूप हैं, पुरुष से स्तुत, नित्य, स्वतन्त्र केवल एक ही परमात्मा स्वरूप हैं ॥ ४१ ॥ इस प्रकार के अद्भुत

निरीहंनिर्विकारंचपरिपूर्णतमंप्रभुम् ॥ रासमंडपमध्यस्थंशांतंरासेश्वरंहरिम् ॥ ३८ ॥ मंगलंमंगलार्हंचसर्व-मंगलमंगलम् ॥ परमानंदराजंचसत्यमक्षरमव्ययम् ॥ ३९ ॥ सर्वसिद्धेश्वरंसर्वसिद्धिरूपंचसिद्धिदम् ॥ प्रकृतेःपरमीशानंनिर्गुणंनित्यविग्रहम् ॥ ४० ॥ आद्यंपुरुषमव्यक्तंपुरुस्तुतम् ॥ नित्यंस्वतंत्रमेकंचपरमात्म-स्वरूपकम् ॥ ४१ ॥ ध्यायंतेवैष्णवाःशांताःशांतंशांतिपरायणम् ॥ एवंरूपंपरंबिभ्रद्भगवानेकएवसः ॥ ॥ ४२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एवमुक्त्वाततोविष्णुरधिमाससमन्वितः ॥ गोलोकमगमच्छीघ्रंविरजोवेष्टितंपरम् ॥ ४३ ॥ सूतउवाच ॥ इतीरयित्वागिरमात्तसक्रियांमुनीश्वरेतूष्णिमवस्थितेमुनिः ॥ जगादवाक्यं-

शांत स्वरूप का तो शान्ति परायण शान्त वैष्णव जन ही ध्यान करते हैं। यह परम सुन्दर रूप केवल एक भगवान् ही धारण करते हैं ॥ ४२ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार कह कर अधिक मास को साथ लिये विष्णु परम सात्त्विक गोलोक में शीघ्र पहुँचे ॥ ४३ ॥ सूतजी बोले—सत्कर्म करानेवालीवाणी को कह कर तब श्रीनारायण मौन होगये। इसके आगे की आनन्द दायक

नई कथा सुनाने के लिये नारद जी कहने लगे ॥ ४४ ॥

इति श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां पंचमोऽध्याय ॥ ५ ॥

श्रीनारदजी बोले---हे अनघ ! वैकुण्ठ वासी विष्णु ने गोलोक में जाकर क्या किया यह कथा कृपा करके सुनाइये ॥ १ ॥

विधिजोमहोत्सवाच्छुश्रूषुरानन्दनिधेर्नवाःकथाः ॥ ४४ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तममहात्म्येविष्णोर्गोलोकगमनेपंचमोऽध्यायः ॥५॥

नारदउवाच ॥ वैकुण्ठाधिपतिर्गत्वागोलोकेकिंचकारह ॥ तद्वदस्वकृपांकृत्वामह्यंशुश्रूषवेऽनघ ॥१॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्येऽहंयज्जातंतत्रतेऽनघ ॥ विष्णुर्गोलोकमगमदधिमासेनसंयुतः ॥ २ ॥ तन्मध्येभगवद्धाममणिस्तंभैःसुशोभितम् ॥ ददर्शदूरतोविष्णुर्ज्योतिर्धाममनोहरम् ॥ ३ ॥ तत्तेजःपिहिताक्षोसौशनैरुन्मील्यलोचने ॥ मंदंमंदंजगामाधिमासंकृत्वास्वपृष्ठतः ॥ ४ ॥ उपमंदिरमासाद्यसाधिमासोमुदा

श्रीनारायण बोले—हे निष्पाप सुनिये, विष्णु भगवान् अधिक मास को साथ लेकर गोलोक से पहुँचे ॥ २ ॥ उसके मध्य में भगवान का धाम है। मणि के खंभो से परम शोभायमान अतीव मनोहर ज्योतिमय धाम को विष्णुजी ने दूर से देखा ॥ ३ ॥ उसके तेज से उनकी आंखें मिच गईं फिर शनैः २ आंखे खोलकर अधिक मास अपने पीछे रख कर धीरे २ विष्णु चलने लगे ॥ ॥ अधिकमास के साथ प्रसन्नता पूर्वक मन्दिर के समीप पहुँच गये। उन्हें आया देखकर उपस्थित द्वारपाल चरणवन्दना

के लिये उठे ॥ ५ ॥ उसके अनन्तर श्री विष्णु ने भगवद्धाम में प्रवेश किया, धाम की चमक से आंखें मिच गई। पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण को जाकर प्रणाम किया ॥ ६ ॥ श्रीकृष्ण गोपिकाओं के मध्य में रत्न सिंहासन पर विराजमान थे। लक्ष्मीनाथ विष्णु हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए बोले ॥ ७ ॥ श्रीविष्णु बोले—गुणातीत, अक्षर, अव्यय, सगुण गोप वेशधारी विष्णु को वन्दना

न्वितः ॥ उत्थितैर्द्वारपालैश्चवंदितांघ्रिर्हरिःशनैः ॥ ५ ॥ प्रविष्टोभगवद्धामशोभासंमुष्टलोचनः ॥ तत्रगत्वाननामाशुश्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥ ६ ॥ गोपिकावृन्दमध्यस्थंरत्नसिंहासनम् ॥ नत्वोवाचरमानाथोबद्धांजलिपुटःपुरः ॥ ७ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ वंदेविष्णुगुणातीतंगोविंदमेकमक्षरम् ॥ अव्यक्तमव्ययंव्यक्तंगोपवेषन्निधायिनम् ॥ ८ ॥ किशोरवयसंशांतंगोपिकांतंमनोहरम् ॥ नवीननीरदश्यामंकोटिकंदर्पसुन्दरम् ॥ ॥ ९ ॥ वृन्दावनवनाभ्यंतेरासमंडलसंस्थितम् ॥ लसत्पीतपटंसौम्यंत्रिभंगललिताकृतिम् ॥ १० ॥ रासेश्वरंरासवासंरासोल्लाससमुत्सुकम् ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंपीतवाससमच्युतम् ॥ ११ ॥ इत्येवमुक्त्वातंनत्वारत्न-

हो ॥ ८ ॥ किशोर, गोपीजन वल्लभ, शान्त, नये बादल की तरह श्याम कोटि कन्दर्प लावण्य, सुन्दर, ॥ ९ ॥ वृन्दावन के मध्य रासमण्डल में स्थित। रेशमी पीत वस्त्रों को धारने वाले, सुन्दर त्रिभंग ललित ॥ १० ॥ रासेश्वर, रास के निवासी, रास की प्रसन्नता में उत्साही द्विभुज, मुरली लिये अच्युत पीताम्बर धारी ॥ ११ ॥ हे श्रीकृष्ण! रत्नसिंहासन पर विराज मान भगवान्

आप को नमस्कार हो। इस प्रकार स्तुति करते हुए विष्णु जी का सत्कार कर पार्षदोंने उन्हें भगवदाज्ञा से रत्नसिंहासन पर बिठा दिया ॥ १२ ॥ श्री नारायण बोले– इस विष्णु स्तुति को जो पुरुष प्रातः उठ कर पढ़ता है उसके पाप नष्ठ हो जाते हैं दुःस्वप्न भी सत्फल देते हैं ॥१३॥ गोविन्द में भक्ति होती है। पुत्रकी पौत्र वृद्धि होती है। अपकीर्ति का नाश होता है। सत्कीर्ति वृद्धि

सिंहासनेवरे ॥ पार्षदैःसत्कृतोविष्णुःसउवासतदाज्ञया ॥ १२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिविष्णुकृतंस्तोत्रं-
प्रातरुत्थाययःपठेत् ॥ पापानितस्यनश्यंतिदुःस्वप्नःसत्फलप्रदः ॥ १३ ॥ भक्तिर्भवतिगोविंदेपुत्रपौत्रविवर्द्धिनी
अकीर्तिःक्षयमाप्नोतिसत्कीर्तिर्वर्द्धतेचिरम् ॥ १४ ॥ उपविष्टस्ततोविष्णुःश्रीकृष्णचरणांबुजे ॥ नामयामा-
सतंमासंवेपमानंतदग्रतः ॥ १५ ॥ तदापप्रच्छश्रीकृष्णःकोयंकस्मादिहागतः ॥ कस्माद्रुदतिगोलोकेनकश्चि-
द्दुःखमश्नुते ॥ १६ ॥ गोलोकवासिनःसर्वेसदानंदपरिप्लुताः ॥ स्वप्नेपिनैवश्रृण्वंतिदुर्वार्तांचदुरन्वयाम् ॥
॥ १७ ॥ तस्मादयंकथंविष्णोमदग्रेदुःखितःस्थितः ॥ मुंचन्नश्रूणिनेत्राभ्यांवेपतेचमुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥

पाती है ॥ १४ ॥ श्री विष्णुजी ने सिंहासन पर बैठकर श्रीकृष्णके चरणारबिन्दों पर कांपते हुए अधिक मास को दन्डवत प्रणाम कराया ॥ १५ ॥ तब भगवान् श्री कृष्ण ने पूछा—यह कौन है कहां से आया है यह गोलोक में आकर क्यों रो रहा है और क्या दुःख है ॥ १६ ॥ गोलोक वासी सारे सदा ही आनन्द में निमग्न रहते हैं। उन्हें तो स्वप्न में भी दुष्ट वार्ता सुनने में नहीं आती ॥ १७ ॥ हे विष्णो ! यह मेरे आगे आँसुए बहाता बार२ काम्पता हुआ दुःखी होकर क्यों बैठा है ॥ १८ ॥ श्रीनारा-

यश बोले–इस प्रकार घनश्याम श्याम सुन्दर गोलोक नाथ के वचन सुनकर सिंहासन से उठकर मलमास का समस्त दुःख श्रीविष्णु ने सुनाया ॥ १९ ॥ श्रीविष्णु बोले–हे वृन्दावन चन्द्रमा, मुरलीधर, श्रीकृष्ण, में आपके सम्मुख इसका दुःख कहता हूं ॥ २० ॥ इसी कारण तो इसे लेकर मैं आया हूं । यह बिना स्वामी के दुःख अग्नि से सन्तप्त है । इसका दुःख दूर करें ॥ २१ ॥ यह

श्रीनारायणउवाच ॥ नवांबुदानीकमनोहरस्यगोलोकनाथस्यवचोनिशम्य ॥ उवाचविष्णुर्मलमासदुःखंप्रोत्थायसिंहासनतःसमग्रम् ॥ १९ ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ वृन्दावनकलानाथश्रीकृष्णमुरलीधर ॥ श्रूयताअधिमासोयंदुःखंवच्मितवाग्रतः ॥ २० ॥ तस्मादहमिहायातोगृहीत्वामुंनिरीश्वरम् ॥ दुःखदावानलंतीव्रमेतदीयंनिराकुरु ॥ २१ ॥ अयंत्वधिकमासोस्तिव्यपेतरविसंक्रमः ॥ मलिनोयमनर्होस्तिशुभकर्मणिसर्वदा ॥ २२ ॥ नस्नानंनैवदानंचकर्तव्यंप्रभुवर्जिते ॥ एवंतिरस्कृतःसर्वैर्वनस्पतिलतादिभिः ॥ २३ ॥ मासैर्द्वादशभिश्चैवकलाकाष्ठालवादिभिः ॥ अयनैर्हायनैश्चैवस्वामिगर्वसमन्वितैः ॥२४॥ इतिदुःखानलेनैवदग्धोयंमर्तुमुन्मुखः ॥

अधिक मास है, इसमें रवि की संक्रान्ति नहीं अतः मलिन एवं शुभकर्मों में सदा वर्जित रहता है ॥ २२ ॥ क्योंकि यह स्वामी के बिना है इसमें स्नान दानादि शुभ कर्म नहीं हो सकते ऐसा कहकर वनस्पति आदि सबने इसका निरादर कर रखा है ॥ २३॥ द्वादश मास, कला काष्ठ लव, उत्तरायण, दक्षिणायन वर्ष ये सब स्वामि वाले हैं वे सब गर्वित होकर इसका अपमान करते हैं

॥ २४ ॥ इसी दुःखाग्नि से दग्ध होकर मृत्यु चाहने वाले इसे अन्य दयालु पुरुषों ने मेरे पास भेजा है ॥ २५ ॥ हे हृषीकेश ! मेरी शरण में आकर इसने काम्पते एवं रोते रोते अपना समस्त दुःख सुनाया है ॥ २६ ॥ यह इसका महान् दुःख है आपके बिना दूसरा कोई भी निवारण नहीं कर सकता। इसलिये अब यह आपके आश्रय में है ॥ २७ ॥ आप पर दुःख नहीं सहन कर

अन्यैर्दयालुभिःपश्चात्प्रेरितोमामुपागतः ॥ २५ ॥ शरणार्थीहृषीकेशवेपमानोरुदन्मुहुः ॥ सर्वंनिवेदयामासदुःखजालमसंवृतम् ॥ २६ ॥ एतदीयंमहद्दुःखमनिवार्यंभवद्दते ॥ अतस्त्वामाश्रितोनूनंकरेकृत्वानिराश्रयम् ॥ ॥ २७ ॥ परदुःखासहिष्णुस्त्वमितिवेदविदोजगुः ॥ अतएनंनिरातंकंसानंदंकृपयाकुरु ॥ २८ ॥ त्वदीय-चरणांभोजंगतोनैवावशोचते ॥ इतिवेदविदोमिथ्याकथंभाविजगत्पते ॥ २९ ॥ मदर्थमपिकर्तव्यमेतद्दुःख-निवारणम् ॥ सवत्यक्त्वाहमायातोयातंमेसफलंकुरु ॥ ३० ॥ मुहुर्मुहुर्नवक्तव्यंकदापिप्रभुसन्निधौ ॥ वदं-तेवंमहाप्रज्ञानित्यंनीतिविशारदाः ॥ ३१ ॥ इतिविज्ञाप्यभूमानंबद्धांजलिपुटोहरिः ॥ पुरस्थोभगवतोनिरीक्ष्यं-

सकते, ऐसा वेदज्ञ कहते हैं। अतः इसका दुःख दूर करके कृपया इसे आनन्दित करें ॥ २८ ॥ हे जगत्पते ! वेद वेत्ता ऐसा कहते हैं कि आपके चरण कमलों के आश्रय वाले को शोक नहीं रहता, यह वचन मिथ्या क्यों हो ॥ २९ ॥ आप मेरे लिये ही इसका दुःख हटाइये। मैं सब कुछ छोड़कर यहाँ आया हूं, मेरा आना सफल करो ॥३०॥ हे प्रभो ! बार२ मैं क्या कहूँ। प्रभु के सम्मुख बार २ कहना नीतिज्ञ बुद्धिमान पुरुष उचित भी तो नहीं समझते ॥ ३१ ॥ इस प्रकार श्रीकृष्ण की विनय करके विष्णु हाथ जोड़

कर भगवान् का मुखारविन्द देखते हुए आगे खड़े हो गये ॥ ३२ ॥ ऋषि बोले—हे सूत आप सहस्र वर्ष जीते रहो आप अद्भुत वक्ता हो। आपकेमुखसेभगवान् की लीलाओं का कथारूप अमृत हम पान कर रहे हैं ॥३३॥ हे सूत तब गोलोक नाथने क्या उत्तर दिया। श्रीविष्णु श्रीकृष्ण का सम्वाद तो सर्व लोकोप कारक है। कृपया सुनाइये ॥ ३४ ॥ और नारदजी ने श्री नारायण से क्या

स्तन्मुखांबुजम् ॥ ३२ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतवदान्योसिजीवत्वंशाश्वतीःसमाः ॥ पिबामोयन्मुखात्सेव्यं-हरिलीलाकथामृतम् ॥ ३३ ॥ गोलोकवासिनासूतकिमुक्तं किंकृतंवद ॥ विष्णुश्रीकृष्णसंवादःसर्वलोकोप-कारकः ॥ ३४ ॥ विधिसुतःकिमपृच्छद्धृषीश्वरंतदधुनावदसूततपस्विनः ॥ परमभागवतःसहरेस्तनुस्तदुदितं वचनंपरमौषधम् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तमवि-ज्ञप्तिर्नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सूतउवाच ॥ भवद्भिर्यःकृतप्रश्नस्तमचीकरदाशुगः ॥ यदुत्तरमुवाचेशस्तद्वदामितपोधनाः ॥ १ ॥

पूछा, यह भी सुनाइये। क्योंकि आप दयालु और भागवत हैं। वे हरिके परम औषधि रूप वचन हमें कहिये ॥ ३५ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास माहात्म्ये भाषाटीकायाँ षष्टोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सूतजी बोले—हे तपोधन! आपके प्रश्न के अनुसार नारदजी ने भी श्रीनारायण जी से प्रश्न किया, अब उन्ही का प्रश्न एवं उत्तर सुनिये ॥ १ ॥ श्री नारद बोले—हे बदरीनाथ! श्री विष्णु जब अधिक मास का अपार दुःख निवेदन कर चुके तब

पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने क्या कहा, अब यही सुनाइये ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले—हे पुत्र ! गोलोक नाथ के अत्यन्त गुप्त वचन हैं, वेमैं तुम्हें कहताहूं, वेवचन तो निर्दम्भ एवं भक्त जन ही सुन सकतेहैं जो पुरुष अनन्य भक्त हो उन्हें ही पुण्य एवं कीर्ति दायक, पुत्र तथा धन बढ़ाने वाले, राजाओं को वश में करने वाले दावानल के समान दरिद्रता को भस्म करने वाले यह वचन सुनाना

नारदउवाच ॥ विष्टरश्रवसिमौनमास्थितेसंनिवेद्यपरदुःखमपारम् ॥ किंचकारपुरुषोत्तमःपरस्तद्वदस्वबदरी-पतेऽधुना ॥२॥ श्रीनारायणउवाच ॥ गोलोकनाथोयदुवाचविष्णुं तदेवगुह्यं कथयामिवत्स ॥ वाच्यंसुभक्तायसदास्तिकायशुश्रूषवेदंभविवर्जिताय ॥ ३ ॥ सुकीर्तिकृत्पुण्यकरंयशस्यंसत्पुत्रदंवश्यकरंचराज्ञाम् ॥ दारि-द्र्यदावाग्निरनल्पपुण्यैःश्राव्यंतथाकार्यमनन्यभक्त्या ॥ ४ ॥ श्रीपुरुषोत्तमउवाच ॥ समीचीनंकृतंविष्णोयद-त्रागतवान्भवान् ॥ मलमासंकरेकृत्वालोकेकीर्तिमवाप्स्यसि ॥ ५ ॥ यस्त्वयोरीकृतोजीवःसमयैवोररीकृतः ॥ अतएनंकरिष्यामिसर्वोपरिमयासमम् ॥ ६ ॥ गुणैःकीर्त्यानुभावेनषड्भगैश्चपराक्रमैः ॥ भक्तानांवरदानेनगु-

॥ ५ ॥ श्रीपुरुषोत्तम बोले—हे विष्णो ! जो आप मलमास को साथ लेकर यहां आये हैं यह बहुत अच्छा किया है आपकी लोक में कीर्ति होगी ॥ ५ ॥ जिस जीव को विष्णो आपने अंगी कार किया, उसे मैंने ही अङ्गीकार कर लिया । इसे तो मैं अब से अपने समान कर दूंगा ॥ ६ ॥ मेरे जितने भी गुण हैं अर्थात्–कीर्ति, अनुभव, छः प्रकार के ऐश्वर्य पराक्रम, भक्तों को वरदान

की शक्ति ॥ ७ ॥ इन्द्री गुणों से ही मैं लोक में प्रसिद्ध पुरुषोत्तम कहलाता हूं उसी प्रकार यह भी पुरुषोत्तम नाम से प्रसिद्ध होगा ॥ ८ ॥ मैंने अपने सारे गुण इसमें भी धारण कर दिये । लोक वेद में मेरा पुरुषोत्तम नाम जो प्रसिद्ध हो रहा है ॥ ९ ॥ हे जनार्दन ! वह भी तुम्हारी प्रसन्नता के लिये इसका पुरुषोत्तम नाम रख दिया हे मधुसूदन ! इसका स्वामी भी मैं

गणैरन्यैश्चमामकैः ॥ ७ ॥ अहमेतैर्यथालोकेप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥ तथायमपिलोकेषुप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥८॥ अस्मैसमर्पिताःसर्वेयेगुणामयिसंस्थिताः ॥ पुरुषोत्तमेतिमन्नामप्रथितंलोकवेदयोः ॥ ९ ॥ तदप्यस्मैमयाद-त्तंतवतुष्टयै जनार्दन ॥ अहमेवास्यसंजातःस्वामीचमधुसूदन ॥१०॥ एतन्नाम्नाजगत्सर्वंपवित्रंचभविष्यति ॥ मत्सादृश्यमुपागम्यमासानामधिपोभवेत् ॥ ११ ॥ जगत्पूज्योजगद्वंद्योमासोयंतुभविष्यति ॥ पूजकानांच-सर्वेषांदुःखदारिद्र्यखंडनः ॥ १२ ॥ सर्वेमासाःसकामाश्चनिष्कामोयंमयाकृतः ॥ मोक्षदःसर्वलोकानांमत्तु-ल्योयंमयाकृतः ॥ १३ ॥ अकामःसर्वकामोवायोऽधिमासंप्रपूजयेत् ॥ कर्माणिभस्मसात्कृत्वामामेवैष्यत्यसं

स्वयं होगया ॥ १० ॥ इसके नाम द्वारा सब जगत् पवित्र हो जायगा । और मेरी समानता पाकर यह सारे महीनों का अधिपति हो जायगा ॥ ११ ॥ यह महीना जगत् भर का पूजनीय एवं वन्दनीय होगा । इसकी पूजा करने वाले सब नर नारियों के दुःख दरिद्र नष्ट हो जावेंगे ॥ १२ ॥ अन्य सब महीने सकाम होंगे—इसे तो मैंने अपने समान बनाकर सर्व लोकों का मोक्ष दाता निष्काम ही बना दिया ॥ १३ ॥ जो इस अधिक मास को पूजेगा वह अपने सब कर्म भस्म करके निश्चय मुझे प्राप्त होगा

|| १४ || भाग्यवान् यति, ब्रह्मचारी, तपस्वी, महात्मा, निराहारी, दृढ़ व्रती पुरुष जिस मेरे अव्यय पद को पाने के लिये
|| १५ || फल, पत्र, वायु आहार करके काम क्रोध से रहित होकर, जितेन्द्रिय हुए वर्षा ऋतु में निराश्रित होकर भी || १६ ||
हे गरुड़ ध्वज ! शीत, धूप, आदि कष्ठ सहते हैं फिर भी मेरे उस पद को नहीं पा सकते || १७ || किन्तु इस पुरुषोत्तम मास

शयम् || १४ || यदर्थंचमहाभागायतिनोब्रह्मचारिणः || तपस्यंतिमहात्मानोनिराहारादृढ़व्रताः || १५ ||
फलपत्रानिराहाराःकामक्रोधविवर्जिताः || जितेंद्रियचयाःसर्वेप्रावृट्कालेनिराश्रयाः || १६ || शीतातपस-
हाश्चैवयतंतेगरुड़ध्वज || तथापिनैवमेयांतिपरमंपदमव्ययम् || १७ || पुरुषोत्तमस्यभक्तास्तुमासमात्रेणतत्प-
दम् || अनायासेनगच्छंतिजरामृत्युविवर्जितम् || १८ || सर्वसाधनतःश्रेष्ठःसर्वकामार्थसिद्धिदः || तस्मा-
त्संसेव्यतामेषमासोयंपुरुषोत्तमः || १९ || सीतानिक्षिप्तबीजानिवर्धंतेकोटिशोयथा || तथाकोटिगुणंपुण्यं-
कृतंमेपुरुषोत्तमे || २० || चातुर्मास्यादिभिर्यज्ञैःस्वर्गंगच्छंतिकेचन || तत्रत्यंभोगमासाद्यपुनर्गच्छंतिभूतलम्||

के भक्त केवल एक ही महीने में पूजन करने से विना कष्ठ जरामृत्यु से रहित उस पद को पावेंगे || १८ || अन्य सब साधनों
से श्रेष्ठ, सब कामनाओं की सिद्धि देने वाला यह पुरुषोत्तम मास है इसी की सेवा करना उत्तम है || १९ || जैसे हल
द्वारा शुद्ध भूमि में बोये बीज करोड़ों बढ़ जाते हैं वैसे ही इस पुरुषोत्तम मास में किये पुण्य कोटि गुणा हो जायगें || २० ||

चातुर्मासादिक यज्ञ करके स्वर्ग मिलता हैं। वहाँ के भोग भोग कर पुनः पृथ्वी पर आना पड़ता है ॥ २१ ॥ किन्तु विधि पूर्वक एवं श्रद्धा से जो पुरुषोत्तम को पूजेगा वह अपने कुल का उद्धार करके निश्चय ही मुझे प्राप्त होगा ॥ २२ ॥ मुझे प्राप्त होकर जन्म, मरण, आधि, व्याधि, भय, एवं जरा आदि से ग्रस्त इस संसार में फिर जन्म नहीं लेगा ॥ २३ ॥ जहां जाने

॥ २१ ॥ विधिवत्सेवतेयस्तुपुरुषोत्तममादारात् ॥ कुलंस्वकीयमुद्धृत्यमामेवैष्यत्यसंशयम् ॥ २२ ॥ मामुपेतोऽत्रसंसारंजन्ममृत्युभयाकुलम् ॥ आधिव्याधिजराग्रस्तंनपुनर्यातिमानवः ॥२३॥ यद्गत्वाननिवर्ततेतद्धामपरमंमम ॥ इतिछंदोवचःसत्यमसत्यंजायतेकथम् ॥ २४ ॥ एतन्मासाधिपश्चाहंमयैवायंप्रतिष्ठितः ॥ पुरुषोत्तमेतिमन्नामतदप्यस्मैसमर्पितम् ॥ २५ ॥ तस्मादेतस्यभक्तानांममचिंतादिवानिशम् ॥ तद्भक्तकामनाःसर्वाःपूरणीयामयैवहि ॥ २६ ॥ कदाचिन्ममभक्तानामपराधोऽधिगण्यते ॥ पुरुषोत्तमभक्तानांनापराधःकदाचन ॥ २७ ॥ मदाराधनतोविष्णोमदीयाराधनंप्रियम् ॥ मद्भक्तकामनादानेऽविलंबेऽहंकदाचन ॥ २८ ॥ मदीय-

पर पुनरागमन नहीं होता वह मेरा परम धाम है ऐसा वेदों का वचन कभी असत्य नहीं ॥ २४ ॥ इस महीने का मैं स्वामी हूं इसे मैंने ही प्रतिष्ठित किया पुरुषोत्तम नाम भी इसका मैंने ही धारण किया ॥ २५ ॥ मुझे तो इसके भक्तों की दिन रात चिन्ता रहेगी इसके भक्तों के सब प्रकार के मनोरथ मैं ही पूर्ण करूंगा ॥ २६ ॥ मेरे भक्तों का तो कदाचित् अपराध गिना भी जावे किन्तु पुरुषोत्तम के भक्तों का तो अपराध कभी भी नहीं गिना जायगा ॥ २७ ॥ हे विष्णो! मेरे भक्तों का पूजन मुझे प्रिय है, मैं

अपने भक्तों का मनोरथ पूर्ति में कभी विलम्ब नहीं करता ॥ २८ ॥ क्योंकि मेरे ही इस महीने के भक्त मुझे अत्यन्न प्रिय हैं। उनकी सब कामनाएं शीघ्र पूर्ण हो जावेंगी ॥ २९ ॥ जो महा अज्ञानी पुरुष इस महीने में जप दान, स्नानादि सत्कर्म कुछ भीनहीं करते और देव ब्राह्मण तीर्थों से द्वेष करते हैं ॥ ३० ॥ वे परभाग्योपजीवी दुष्ठ, दुर्भाग्य होकर जन्मेंगे। उन्हें शपक श्रृंग

मासभक्तानांनविलंबःकदाचन ॥ मदीयमासभक्तायेममैवातीववल्लभा ॥ २९ ॥ यएतस्मिन्महामूढाजपदा-नादिवर्जिताः ॥ सत्कर्मस्नानरहितादेवतीर्थद्विजद्विषः ॥ ३० ॥ जायंतेदुर्भगादुष्टाःपरभाग्योपजीविनः ॥ नकदाचित्सुखंतेषांस्वप्नेपिशशश्रृङ्गवत् ॥ ३१ ॥ तिरस्कुर्वंतियेमूढामलमासंममप्रियम् ॥ नाचरिष्यंतियेधर्मं-तेसदानिरयालयाः ॥ ३२ ॥ पुरुषोत्तममासाद्यवर्षेवर्षेतृतीयके ॥ नाचरिष्यंतिधर्मयेकुम्भीपाकेपतंतिते ॥ ॥ ३३ ॥ इहलोकेमहद्दुःखंपुत्रपौत्रकलत्रजम् ॥ प्राप्नुवंतिमहामूढादुःखदावानलस्थिताः ॥ ३४ ॥ तेकथं-सुखमेधंतेयेषामज्ञानतोगतः श्रीमान्पुण्यतमोमासोमदीयःपुरुषोत्तमः ॥ ।, ३५ ॥ याःस्त्रियःसुभगाःपुत्रसुख-

की भांति कभी सुख की प्राप्ति नहीं होगी ॥ ३१ ॥ जो अज्ञानी पुरुष मेरे इस मलमास महीने का तिरस्कार करेंगे इसमें कुछ भी धर्म नहीं करेंगे, वे नरक में पड़ेंगे ॥ ३२ ॥ जो तीसरे तीसरे वर्ष पुरुषोत्तम महीना पाकर धर्म नहीं करेंगे वे कुम्भी पाक नरक में पड़ेंगे ॥ ३३ ॥ और इस लोक में जन्म पाकर पुत्र पौत्र स्त्री आदि के महा दुःख रूप दावाग्नि में पड़कर जलते रहेंगे ॥ ३४ ॥ वे अज्ञानी भला किस प्रकार सुख पा सकते हैं। यह पुरुषोत्तम महीना श्रीमान् पुण्यदायक मेरा परम प्रिय

है ॥ ३५ ॥ और जो सौभाग्यवती स्त्रियां पुत्र सुख सौभाग्य के अर्थ पुरुषोत्तम मास में स्नान दान पूजन आदि करेंगी ॥ ३६ ॥
उन्हें मैं सुख सौभाग्य धन पुत्र आदि प्रदान करूंगा। और जिन स्त्रियों ने मेरे नाम का यह मास ऐसे ही खो दिया ॥ ३७ ॥
उनके अनुकूल मैं कभी न होसकूंगा और स्वप्न में भी उन्हें पति पुत्र धन आदि का सुख नहीं मिलेगा ॥ ३८ ॥ अतएव

सौभाग्यहेतवे ॥ पुरुषोत्तमेकरिष्यंतिस्नानदानार्चनादिकम् ॥ ३६ ॥ तासांसौभाग्यसंपत्तिसुखपुत्रप्रदोह्यहम् ॥
यासांमासोगतःशून्योमन्नामापुरुषोत्तमः ॥ ३७ ॥ नतासामनुकूलोऽहंनसुखंस्वामिजंभवेत् ॥ भ्रातृपुत्रधना-
नांचसुखंस्वप्नेपिदुर्लभम् ॥ ३८ ॥ तस्मात्सर्वात्मनासर्वैःस्नानपूजाजपादिकम् ॥ विशेषेणप्रकर्तव्यंदानंश
क्त्यनुसारतः ॥ ३६ ॥ येनाहमर्चितोभक्त्यामासेऽस्मिन्पुरुषोत्तमे ॥ धनपुत्रसुखंभुक्त्वापश्चाद्गोलोकवास-
भाक् ॥ ४० ॥ ममाज्ञयाजनाःसर्वेपूजयिष्यंतिमामकम् ॥ सर्वेषामपिमासानामुत्तमोयंमयाकृतः ॥ ४१ ॥
अतस्त्वमधिमासस्यचिंतांत्यक्त्वारमापते ॥ गच्छवैकुण्ठमतुलंगृहीत्वापुरुषोत्तमम् ॥ ४२ ॥ श्रीनारायणउवा-

सर्वात्म भाव से स्नान पूजन जप आदि तो इस महीने में विशेष कर सबको करना चाहिये, दान शक्ति के अनुसार हो ॥ ३९ ॥
इस पुरुषोत्तम मास में भक्ति से जो भी मेरा पूजन करेगा है वह धन पुत्रादि का सुख भोगकर अन्त में इस गोलोक में वास
करेगा ॥ ४० ॥ मेरी आज्ञा से सब के सब इस मेरे महीने की पूजा करेंगे। यह सब महीनोंमें मैंने इसे उत्तम कहा है ॥ ४१ ॥
हे लक्ष्मी पते ! इस अधिक मास की चिन्ता त्याग कर आप वैकुण्ठ मैं पधारे और इस पुरुषोत्तम मास को भी साथ ले जावें

॥ ४२ ॥ इस प्रकार गोलोक नाथ के रस मय वचन सुनकर प्रसन्नता पूर्वक अधिक मास को साथ लिये श्याम सुन्दर को प्रणाम कर श्रीविष्णुजी गरुड़ द्वारा बैकुण्ठ में पधारे ॥ ४२ ॥

इति श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

च ॥ इतिरसिकवचोनिशम्यविष्णुःप्रबलमुदापरिगृह्यमासमेनम् ॥ नवजलदरुचंप्रणम्यदेवंझटितिजगामनिजालयंखगेन ॥ ४३ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेऽधिमासस्यैश्वर्यप्राप्तिर्नामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

॥ सूतउवाच ॥ नारदःकृतवान्प्रश्नंपुनरेवतपोधना ॥ विष्णुश्रीकृष्णसंवादंश्रुत्वासंतुष्टमानसः ॥१॥
नारदउवाच ॥ वैकुण्ठंगतवतिरुक्मिणीशेकिंजातंतदनुवदप्रभोमे ॥ वृत्तांतंहरिसुतकृष्णयोश्चसर्वेषांहितकर
मादिपुंसोः ॥ २ ॥ इतिसंप्रश्नसंहृष्टोभगवान्बदरीपतिः ॥ उवाचपुनरेवामुञ्जगदानंददंबृहत् ॥ ३ ॥

सूतजी बोले—हे तपोधन ! श्रीकृष्ण तथा श्रीविष्णु का सम्वाद सुन कर सन्तुष्ट मन से श्रीनारदजी ने फिर प्रश्न किया ॥१॥ श्रीनारद बोले—हे प्रभो ! श्रीलक्ष्मी पति विष्णु जी के बैकुण्ठ चले जाने पर आगे क्या हुआ यह मुझे कहिये । आदि पुरुष हरि एवं विष्णुकी कथा परम हित कारी है ॥ २ ॥ इस प्रश्न से भगवान् बदरी पति प्रसन्न होकर जगत् आनन्द दायक बचन बोले ॥ ३ ॥ श्रीनारायण बोले—श्रीलक्ष्मीनाथ जी विष्णु ने बैकुण्ठ में पहुँच कर अधिक मास को अपने बैकुण्ठ में निवास

दिया तब वह ॥ ४ ॥ वैकुण्ठ निवासी होकर प्रसन्न होता हुआ सब मासों का राजा हो श्रीविष्णु के साथ क्रीड़ा करने लगा ॥ ५ ॥ इस प्रकार बारह महीनों में मलमास को श्रेष्ठ बनाकर प्रकृति प्रिय श्रीकृष्ण प्रसन्न हुए ॥ ६॥ इसके अनन्तर भक्त वत्सल भगवान् ने युधिष्ठिर तथा द्रौपदी जी को कृपा दृष्टि पूर्वक यह वचन कहे ॥ ७ ॥ श्रीकृष्ण बोले —हे राज शार्दूल ! मैं जानता

श्रीनारायणउवाच ॥ अथश्रीरुक्मिणीनाथोवैकुण्ठंगतवान्मुदा ॥ तत्रगत्वाधिमासंतंवासयामासनारद ॥४॥ तत्रत्यवसतिंप्राप्यमोदमानोऽभवत्तदा ॥ मासानामधिपोभूत्वारमतेविष्णुनासह ॥५॥ द्वादशस्वपिमासेषुमल-मासंवरंप्रभुः ॥ विधायमनसातुष्टोबभूवप्रकृतिप्रियः ॥ ६ ॥ अथार्जुनमुवाचेदंभगवान्भक्तवत्सलः ॥ युधिष्ठिरंचपांचालींनिरीक्षन्कृपयामुने ॥ ७ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ जानेऽहंराजशार्दूलतपोवनमुपागतैः ॥ भवद्भिर्दुःखसंमग्नैर्नादृतःपुरुषोत्तमः ॥८॥ वृन्दावनकलानाथवल्लभःपुरुषोत्तमः ॥ प्रमादाद्गतवान्मासो-भवतांकाननौकसाम् ॥ ९ ॥ युष्माभिर्नैवविज्ञातोभयद्वेषसमन्वितैः ॥ गांगेयद्रोणकर्णेभ्योभयसंत्रस्तमान-

हूं आप लोगों ने वन में आकर अत्यन्त कष्ट उठाये हैं इसी कारण पुरुषोत्तम मास का आदर नहीं हो सका ॥ ८ ॥ वन में रहते हुए आप लोगों से यह वृन्दावन चन्द्र श्रीकृष्ण का प्रिय पुरुषोत्तम मास भूल से ही आदर के बिना बीत गया है ॥ ९ ॥ भीष्म द्रोण कर्ण आदि के भय से आप लोग इसे बीतता हुआ जान ही नहीं सके ॥ १० ॥ युद्ध बीर अर्जुन भी तो व्यास जी से शिक्षा

पाकर तप करने के इन्द्रकील पर्वत पर चले गये ॥११॥ उसके बिछोह से दुःखित होकर भी आप लोगों ने श्रीपुरुषोत्तम मास भाग्य वश बीतता नहीं जाना, प्रारब्ध वश ऐसा हुआ ॥ १२ ॥ जैसी पुरुषों की प्रारब्ध होती है वैसा भासता हैं। प्रारब्ध कर्म अवश्य भोगने पड़ते हैं ॥ १३ ॥ सुख दुःख, भय, एवं क्षेम आदि सब प्रारब्ध से ही मनुष्यों को प्राप्त होते हैं। अतः प्रारब्ध पर

सैः ॥ १० ॥ कृष्णद्वैपायनादाप्तविद्याराधनतत्परे ॥ इन्द्रकीलंगतवतिबीभत्सौरणशालिनि ॥ ११ ॥ तद्वियोगपरिक्लिष्टैर्नज्ञातःपुरुषोत्तमः ॥ युष्माभिःकिंप्रकर्तव्यमदृष्टमवलंब्यताम् ॥ १२ ॥ अदृष्टंयादृशं-पुँसांतादृशंभासतेसदा ॥ अवश्यमेवभोक्तव्यमदृष्टजनितंफलम् ॥ १३ ॥ सुखंदुःखंभयंक्षेममदृष्टात्प्राप्य-तेजनैः ॥ तस्माददृष्टनिष्ठैश्चभवद्भिःस्थीयतांसदा ॥ १४ ॥ अथापरंप्रवक्ष्यामिभवतांदुःखकारणम् ॥ सेति-हासंमहाराजश्रूयतांमन्मुखादहो ॥ १५ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ पञ्चालीयंमहाभागापूर्वजन्मनिसुन्दरी ॥ मेधाविद्विजमुख्यस्यपुत्रीजातासुमध्यमा ॥ १६ ॥ कालेनगच्छताराजन्संजातादशवार्षिकी ॥ रूपलावण्य-

भरोसा रखे रहिये ॥ १४ ॥ अब मैं इतिहास के साथ आपके दुःखों का कारण कहता हूं मेरे द्वारा ही उसे सुनिये ॥ १५ ॥ श्रीकृष्ण बोले—यह महाभागा द्रौपदी पूर्व जन्म में एक विद्वान् ब्राह्मण की कन्या थी। और अतीव सुन्दरी थी ॥ १६ ॥ समय पाकर जब यह दश वर्ष की हुई तब तो रूप लावण्य से ललित एवं नेत्र कटाक्षों से निखर उठी ॥ १७ ॥ यह सुन्दरी

Digitization: HHFA(USA). Funding: Shastry Family, Mattur, Shivamogga KN

चातुर्यादि गुणों से सम्पन्न पिता की एक ही पुत्री होने से पिता को अत्यन्त प्रिय थी ॥ १८ ॥ पिता इसे पुत्र की भांति पालते पनास्ते रहे कभी भी इसका तिरस्कार न हुआ । साहित्य शास्त्र तथा नीति में यह कुशल एवं निपुण हुई ॥ १९ ॥ इसकी माता तो पहिले स्वर्ग में चली गई । पिताने ही इसे पाला पोसा पड़ोस में रहने वाली स्त्रियों को पुत्र पौत्रादि के सुखों से सुखी देख

ललितानयनापाङ्गशालिनी ॥ १७ ॥ चातुर्यगुणसंपन्नापितुरेकैवपुत्रिका ॥ वल्लभातीवतेनेयंचतुरागुण-
सुन्दरी ॥ १८ ॥ लालितापुत्रवन्नित्यंनकदाचित्प्रलंभिता ॥ साहित्यशास्त्रकुशलानीतावपिविशारदा ॥
॥ १९ ॥ तन्मातास्वर्गतापूर्वंपित्रासापोषितामुदा ॥ पार्श्वस्थालिसुखंदृष्ट्वापुत्रपौत्रसुखस्पृहा ॥ २० ॥
तर्कयन्तीतदाबालामामेवञ्चकथंभवेत् ॥ गुणभाग्यनिधिर्भर्तासुखदःसत्सुताःकथम् ॥ २१ ॥ एवंमनोरथं-
चक्रे दैवेनध्वंसितंपुरा ॥ किंकृत्वाकिंविदित्वामेकमुपास्येसुरेश्वरम् ॥ २२ ॥ किंवामुनिमुपातिष्ठेकिंवातीर्थ-
मुपाश्रये ॥ ममभाग्यंकथंसुप्तंभर्ताकोपिनवांछति ॥ २३ ॥ पंडितोपिपितामूढोममभाग्यवशादहो ॥ विवा-

कर ॥ २० ॥ इसे भी वैसा सुख पाने की इच्छा हुई । विचार करने लगी गुण एवं भाग्य के निधान भर्ता तथा पुत्र आदि का सुख मुझे किस प्रकार प्राप्त हो ॥ २१ ॥ यह मन में इस प्रकार के मनोरथ करती रही किन्तु प्रारब्ध ने इसके सब मनोरथ पहिले से ही नाश कर रखे थे । यह विचारती थी कि अब क्या करूं ? किस देव की उपासना करूं ॥ २२ ॥ तो मैं क्या किसी मुनि के पास जाऊं ? अथवा किसी तीर्थ परजाऊं । मेरा भाग्य क्या सो गया है । कोई भी मुझे पत्नी रूप में नहीं लेता ॥ २३ ॥

इतने विद्वान् होते हुए भी मेरे पिता मेरे भाग्य वश मूर्ख हो रहे हैं। मैं विवाह योग्य हूं। मेरा योग्यवर से विवाह नहीं कर रहे ॥ २४ ॥ मैं अपनी सखियों में अध्यक्ष हूं किन्तु कुमारी हूँ। स्वामी के सुख का मुझे अनुभव नहीं जैसा कि मेरी सखियों को है अतः अतीव दुःखित हूँ ॥ २५ ॥ मेरी माता भी तो भाग्यवती स्वर्ग सिधार गई। इसी प्रकार मनोरथ के समुद्र में चिन्ता

हकालेसंप्राप्तेनदत्तासदृशेवरे ॥ २४ ॥ अध्यक्षाहंसखीमध्येकुमारीदुःखपीड़िता ॥ नाहंस्वामिसुखाभिज्ञाय-थाचालिगणेमम ॥ २५ ॥ ममभाग्यवतीमाताकथंस्वर्गंगतापुरा ॥ एवंचिंताकुलाबालामनोरथमहोदधौ ॥ ॥ २६ ॥ निमग्नामोहसलिलेशोकहोर्मिपींड़िता ॥ मेधावीऋषिराजोसौविचचारमहीतले ॥ २७ ॥ कन्या-दाननिमित्तंचविचिन्वन्सदृशंवरम् ॥ तादृशंवरमप्राप्यनिराशःस्वमनोरथे ॥ २८ ॥ सुतास्वकीयभाग्याभ्यां-भग्नसंकल्पपंजरः ॥ अवापदैवयोगेनज्वरंतीव्रं सुदारुणम् ॥ २९ ॥ स्फुटत्सर्वाङ्गसंभिन्नतापज्वालासमाकुलः ॥ श्वासोच्छ्वाससमायुक्तोमहादारुणमूर्च्छया ॥ ३० ॥ प्रस्खलन्निपतन्भूमौमदिरामत्तवद्भृशम् ॥ आगच्छन्ने-

तुर वह कन्या ॥ २६ ॥ मोह रूप जल में डूब गई शोक रूप तरङ्गों से पीड़ित हुई। और इधर मेधावी पण्डित इसके पिता पृथ्वी पर ॥ २७ ॥ कन्यादान के निमित्त सदृश वर ढूंढ़ते हुए विचरण कर रहे थे। किन्तु वैसा वर नहीं मिला तब तो वे भी निराश होगये ॥ २८ ॥ अपने तथा पुत्री के भाग्य से इसका संकल्प रूप पिंजरा टूट गया। दैव योग से तीव्र एवं दारुण ज्वर भी चढ़ आया॥२९॥ उस ज्वर की ज्वाला से व्याकुल होकर उनके समस्त अंग टूट ने लगे श्वास प्रश्वाससे समायुक्त महा दारुण

मूर्छा से ॥ ३० ॥ मद्यप की तरह पृथ्वी पर गिरते पड़ते घर में आये । आते ही पृथ्वी पर गिर पड़े ॥ ३१ ॥ तब पुत्री भी भय से व्याकुल होकर पिता के पास आगई तब वह ब्राह्मण पुत्री का स्मरण करते २ मृत्यु अवस्था में पहुंच गये ॥ ३२ ॥ प्रारब्ध वश होकर काम्प उठे । कन्यादान करने की प्रसन्नता भी हो न सकी । तब तो इससे भी रहितहोकर ॥ ३३ ॥ गृहस्थ धर्म में किये

वभवनंसपपातधरातले ॥ ३१ ॥ यावत्सुतासमायातापितरंभयविह्वला ॥ तावन्मुमूर्षुःसंजातोभूसुरस्ताम-नुस्मरन् ॥ ३२ ॥ भाविनार्थबलेनैवसहसाजातवेपथुः ॥ कन्यादानप्रसंगोत्थमहोत्सवविवर्जितः ॥ ३३ ॥ अथप्राचीनगार्हस्थ्यकृतधर्मपरिश्रमात ॥ संसारवासनांत्यक्त्वाहरौचित्तमधारयत् ॥ ३४ ॥ सस्मारश्रीहरिंतूर्णंमेधावीपुरुषोत्तमम् ॥ इंदीवरदलश्यामंत्रिभङ्गललिताकृतिम् ॥ ३५ ॥ रासेशराधारमणप्रचंडदोर्दंडदूरा-हतनिर्जरारे ॥ अत्युग्रदावानलपानकर्तःकुमारिकोत्तारितवस्त्रहर्तः ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्णगोविंदहरेमुरारेराधे-शदामोदरदीननाथ ॥ मापाहिसंसारसमुद्रमग्नंनमोनमस्तेहृषिकेश्वराय ॥ ३७ ॥ इतिमुनिवचनंनिशम्यदूरा

गये परिश्रम की चिन्ताएं, एवं संसार वासनाएं सब कुछ छोड़कर केवल हरि में मन जोड़ दिया ॥ ३४ ॥ उस मेधावी ने नील कमल की भांति श्याम सुन्दर त्रिभंग ललित स्वरूप पुरुषोत्तम श्री हरि को स्मरण किया ॥ ३५ ॥ हे रासेश ! राधारमण प्रचण्ड भुजाओं द्वारा दैत्य दलन करने वाले । उग्र दावानल पान करने वाले, गोपियों के वस्त्र हरने वाले ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्ण, गोविन्द, हरे, मुरारे, हे राधेश, दामोदर, दीनानाथ, मैं संसार समुद्र में डूब रहा हूं रक्षा करें, हृषीकेश, आपको नमस्कार हो ॥ ३७ ॥

इसी प्रकार उस मुनि के वचन दूर से सुनकर भगवान् के लोक से झट पट पार्षद आपहुँचे उस मृतक की आत्मा हाथ में लेकर भगवान् के चरण कमलों में पहुँचा दी॥३८॥अपने पिता की मृत्यु देखकर वह कन्या हा हा कार करके रो पड़ी । पिता के शरीर को गोदी में लेकर दुःखित होकर विलाप करने लगी ॥ ३६ ॥ कुररी की भांति विलाप करके अत्यन्त दुःखी एवं व्याकुल होकर मानो

ज्झटितिययुश्चारमुकुन्दलोकात् ॥ तदनुमृतमुनिंकरेगृहीत्वाचरणसरोरुहमीयुरीश्वरस्य ॥ ३८ ॥ प्राणोक्रमणमालोक्यहाहेतिसासुतारुदत्॥ अंकेकृत्वापितुर्देहंविललापसुदुःखिता ॥ ३६ ॥ कुररीवचिरसातुविलप्यभृशदुःखिता ॥ उवाचपितरंबालाजीवंतमिवविह्वला ॥ ४० ॥ बालोवाच ॥ हाहापितःकृपासिंधोआत्मआनंददायक ॥ कस्यांकेमांविधायाद्यगतोसिवैष्णवंपुरम् ॥ ४१ ॥ पितृहीनांचमांतातकोवासंभावयिष्यति ॥ नभ्रातानैवबन्धुश्चनमेमातातपस्विनी ॥ ४२ ॥ भोजनाच्छादनेचिंतांकोमेतातकरिष्यति ॥ कथंतिष्ठाम्यहंशून्येवेदध्वनिविवर्जिते ॥ ४३ ॥ आश्रमेतेमुनिश्रेष्ठअरण्यइवनिर्जने ॥ अतःपरंमरिष्यामिजीवनेकिं

जीवित पितासे जैसे कहनेलगी॥४०॥ कन्या बोली-हाय२पिता अपनी कन्या को प्रसन्न रखने वाले कृपा सागर । मुझे किसकीगोदीमें छोड़कर आप विष्णुलोकचले गये हो॥४१॥मैंपितासे हीन हूं मेरी कौन खबरलेगा । हाय हाय भाई बन्धु बान्धव एवंतपस्विनी माता ॥ ४२ ॥ हाय २ मेरे खाने पीने पहिरने की अब किसको चिन्ता होगी वेद ध्वनि से रहित इस शून्य घर में मैं कैसे रह सकूंगी ॥ ४३ ॥ हे मुनि श्रेष्ठ ! यह आश्रम अब निर्जन बन की भांति शून्य है अब मुझे जीने से क्या प्रयोजन मैं भी मर जाऊंगी

॥४४॥ हे पितः पुत्रीको प्यार करने वाले विवाह विधि न कर करके आप कहां चले गये। तपोनिधे यहां लौट आवो ॥ ४५ ॥ हे पितः आप चुप क्यों हो। अमृत के समान वाणी बोलो चिर काल तक सोने वाले पिता अब तो उठो ॥४६॥ इस प्रकार बोलती आँसू बहाती कुररी की भांति वह बाला मुक्त कण्ठ हो जोर २ से रोने लगी ॥ ४७ ॥ इस प्रकार उसका रोना सुन बन वासी

प्रयोजम् ॥ ४४ ॥ असंपाद्य ववैवाहंविधिंदुहितृवत्सल ॥ क्वगतोसिपतस्तातइहागच्छतपोनिधे: ॥४५॥ वाणींवदसुधाकल्पांकथंतूष्णीमवस्थितः ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठहेतातचिरंसुप्तोसिसांप्रतम् ॥ ४६ ॥ इत्युक्त्वाश्रुमुखीबालाविललापमुहुर्मुहुः ॥ मुक्तकंठंरुरोदार्ताकुररीवसुदुःखिता ॥ ४७ ॥ तत्सुतारोदनंश्रुत्वाविप्रास्तद्वनवासिनः ॥ अतीवकरुणंकोवारोदित्यस्मिंस्तपोवने ॥ ४८ ॥ मेधाऋषेःसुताशङ्कंशनैर्निश्चित्यतापसाः ॥ ससंभ्रमाःसमाजग्मुर्हाहाकारसमन्विता ॥ ४९ ॥ आगत्यददृशुःसर्वेसुतांकस्थंमृतंमुनिम् ॥ ततःसंरुरुदुःसर्वेमुनयःकाननौकसः ॥ ५० ॥ सुतोत्संगाच्छवंनीत्वाश्मशानेशिवसंनिधौ ॥ अंत्येष्टिंविधिनाकृत्वातेऽदहन्

ब्राह्मण बोले इस तपोवन में कौन रो रहा है ॥ ४८ ॥ तब मेधावी ऋषि की पुत्री का निश्चय करके वे तपस्वी हा हा कार करते शीघ्र ही वहां पहुँच गये ॥ ४९ ॥ वहाँ आकर सब ने मृतक पिता को गोदी में लिये उस कन्या को देखा तब वे भी रोने लगे ॥ ५० ॥ कन्या की गोदी से शवको उठाकर श्मशान में शिव के समीप ले जाकर उन्होंने काष्ठ की चिता बना उसकी

अन्त्येष्टि करके जला दिया ॥ ५१ ॥ तब उस कन्या को समझा बुझाकर वे सब अपने २ घर लौट गये। और कन्या ने भी धैर्य करके यथा शक्ति खर्च किया ॥ ५२ ॥ इस प्रकार पिता का और्ध्व दैहिक विधान पूरा करके उसी तपोवन में रह कर मृतवत्सा गाय की तरह पिता के दुःखरूप दावाग्नि से जलती हुई वह बाला दुःखी रहने लगी ॥ ५३ ॥

काष्ठवेष्टितम् ॥ ५१ ॥ ततःकन्यांसमाश्वास्यसर्वेतेस्वगृहान्ययुः ॥ कन्याधैर्यंसमालंब्ययथाशक्त्याकरोद्व्ययम् ॥ ५२ ॥ इत्यौर्ध्वदेहिकविधिंप्रणिधायपित्र्यंपुत्रीनिवासमकरोच्चतपोवनेऽस्मिन् ॥ सावित्र्यथेपितृजदुःखदवाग्निदग्धारंभेववत्समरणात्सुरभीवबाला ॥ ५३ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकुमारीविलापोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

सूतउवाच ॥ ततस्तंविस्मयाविष्टःपप्रच्छनारदोमुनिः ॥ मेधावीद्विजवर्यस्यसुतावृत्तांतद्भुतम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ मुनेमुनिसुतत्रकिंचकारतपोवने ॥ कोवामुनिवरस्तस्याःपाणिग्रहमचीकरत् ॥ २ ॥ श्रीनारा-

इति श्रीपुरुषोत्तममास महात्म्ये भाषाटीकायामष्ठमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

सूतजी बोले—तब इस कथा से आश्चर्यित होकर मेधावी ब्राह्मण की पुत्रीकी नारदजीने अग्रिम कथा का प्रश्न किया ॥१॥ नारद बोले-हे मुनिजी! मुनि की पुत्री ने उस तपोवन में रह कर क्या किया। और किस मुनि ने उस का पाणिग्रहण कराया

॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार पिता का शोक करते हुए उसे बहुत सा समय व्यतीत हो गया ॥ ३ ॥ वह अपने शून्य घर में यूथ भ्रष्ठ मृगी की तरह बैठे २ आंसुओं की झड़ी लगा देती । और जिसका हृदय कमल सूखा रहता ॥ ४ ॥ वह दीन रुकी हुई सर्पिणी की भांति श्वास छोड़ती हुई कृश उदर वाली अपार दुःख देख २ शोक में डूबी रहती ॥ ५ ॥ एक बार

यणउवाच ॥ निवसंत्यस्ततस्तस्याःकियान्कालोविनिर्गतः ॥ स्मारंस्मारंस्वपितरंशोचंत्याश्रमुहुर्मुहुः ॥ ३ ॥ शून्यसद्मनिसंविष्टांयूथभ्रष्टांमृगीमिव ॥ गलद्बाष्पौघनयनांज्वलत्हृदयपंकजाम् ॥ ४ ॥ विनिःश्वासपरादीनांसंरुद्धामुरगीमिव ॥ चिंन्तयन्तीमपश्यन्तीदुःखपारंकृशोदरीम् ॥ ५ ॥ तामासमादभगवान्भविष्यद्बलनोदितः ॥ यदृच्छयावनेतस्मिन्नृप मःकोपनोमुनिः ॥ ६ ॥ यद्विलोकनमात्रेणत्रस्येदपिशतक्रतुः ॥ जटाकलापसंछन्नःसाक्षादिवसदाशिवः ॥ ७ ॥ यस्त्वज्जनन्याराजेंद्रशैशवेतिप्रसादितः ॥ त्रिदशाकर्षिणींविद्यांददावस्यैसुपूजितः ॥ ८ ॥ येनाहमपिभूपालसर्वदेवनमस्कृतः ॥ रथेसंयोजितःसाक्षाद्रुक्मिण्यासहनारद ॥ ६ ॥

अचानक ही उस बन में महा क्रोधी दुर्वासा ऋषि उसके घर आगये । और उसे इस दशा में देखा॥६॥उन का देखना भी भयानक था, इन्द्र को भी डरा देने वाला था । जिनका सिर महादेव की तरह जटाओं से ढका था ॥७॥श्रीकृष्ण बोले-अर्जुन ये वही दुर्वासा हैं जिन्होंने तुम्हारी माता से पूजा पाकर उसे देवताओं के आवाहन करने की शक्ति प्रदान की थी ॥ ८ ॥ और हे राजन् युधिष्ठिर तथा नारद ! ये वही दुर्वासा हैं जिनके द्वारा मुझे सब देवताओं ने नमस्कार किया और एक बार श्रीरुक्मिणी के साथ इनको भी

मैंने रथ में बिठा लिया था ॥ ९ ॥ मार्ग में दोनों को बड़ी कठोर प्यास लग गई श्रीरुक्मिणी ने तो शुष्क तालु और ओष्ठ दिखाकर॥१०॥जल के लिये सूचना दी मैं स्वयं जल लाने के लिये पैरों पर जोर देकर पृथ्वी पर भागा।११॥प्रिया प्रेम में निमग्न होकर वहां भोगवती पुरी को ही मैं ले आया। तब ऊर्ध्वगामिनी होकर उतने ही जल से ॥ १२ ॥ हे महाराज ! श्रीरुक्मिणी ने

उभाभ्यांचालितेमार्गेरथेदुर्वाससान्विते ॥ अत्युग्रयातृषाशुष्यत्ताल्वोष्ठपुटयानया ॥ १० ॥ सूचितोहंजलार्थिन्यास्कंधस्थयुगयापुरा ॥ गच्छन्नेवपदाग्रेणसंपीड्यवसुधातलम् ॥ ११ ॥ आनीतवान्भोगवतीप्रियाप्रेमपरिप्लुतः ॥ सैवोर्ध्वगामिनीभूत्वातावन्मात्रेणवारिणा ॥ १२ ॥ न्यवारयन्महाराजरुक्मिणीतृषमुल्बणाम् ॥ तद्दृष्ट्वातत्क्षणोद्भूतक्रोधेनप्रज्वलन्निव ॥१३॥ प्रलयाग्निरिवोत्तिष्ठञ्छशापकोपनोमुनिः ॥ अहोश्रीकृष्णतेत्यंतंवल्लभारुक्मिणीसदा ॥ १४ ॥ यद्भवान्मामवज्ञायप्रियाप्रेमपरिप्लुतः ॥ पाययामासपानीयंमाहात्म्यंदर्शयन्स्वकम् ॥ १५ ॥ दंपत्योरुभयोरेववियोगोस्तुयुधिष्ठिर ॥ इतियोदत्तवान्शापंसएवमुनिसत्तमः ॥ १६ ॥

अपनी दारुण तृषा बुझाई यह देखकर दुर्वासाको तत्काल क्रोध उत्पन्न हो गया ॥१३॥ वे क्रोधी मुनि प्रलय कालीन अग्नि के समान क्रोध से मानो जलादें ऐसे शाप देने लगे। कहा–हे कृष्ण यह रुक्मिणी तुम्हें अत्यन्त प्रिय है ॥ १४ ॥ जो तुमने मुझे तो पूछा नही और प्रिया प्रेम में निमग्न हो अपनी महिमा दिखाकर उसे ही जल पिला दिया ॥ १५ ॥ अत एव तुम दोनों का परस्पर वियोग होगा। हे युधिष्ठर इस प्रकार दुर्वासा ! ने मुझे भी शाप दे दिया ॥ १६ ॥ ये ऋषि तो साक्षात् रुद्र का अंश

हैं ये दूसरा काल रुद्र है। अत्रिऋषि की उग्र तपस्या रूप कल्प वृक्ष का महान् दिव्य फल है ॥ १७ ॥ पतिव्रता शिरोमणि अनुसूया के गर्भ से इस की उत्पत्ति हुई है। और स्वयं मूर्तिमान् तप हैं ॥ १८ ॥ अनेकों तीर्थों के जल से भीगी हुई जटाएं इसके शिर को शोभित करती हैं ऐसे ऋषि को उस कुमारी ने देखा। तब शोक सागर से ॥ १६ ॥ डूबी रुई भी धैर्य धारण करके

साक्षाद्रुद्रांशसंभूतःकालरुद्रइवापरः ॥ अत्रेरुग्रतपःकल्पवृक्षदिव्यफलंमहत् ॥ १७ ॥ पतिव्रताशिरोरत्नाऽनुसूयागर्भसंभवः ॥ दुर्वासानाममेधावीयथावैमूर्तिमत्तपः ॥ १८ ॥ नैकतीर्थजलक्लिन्नजटाभूषितसच्छिराः ॥ तमालोक्यसमायान्तंकुमारीशोकसागरात् ॥ १६ ॥ उन्मज्योत्थायधैर्येणववंदेचरणौमुनेः ॥ नत्वास्वाश्रममानीयजानकीवाल्मिकियथा ॥ २० ॥ अर्घ्यपाद्यैर्वन्यफलैःपुष्पैश्चविविधैर्मुनिम् ॥ स्वागतपृच्छ्यसावालापूजयामाससादरम् ॥ ततःसविनयाराजन्नुवाचमुनिकन्यका ॥ २१ ॥ बालोवाच ॥ नमस्तेस्तुमहाभागअत्रिगोत्रदिवाकर ॥ कुतोधिगमनंसाधोदुर्भगायाममाश्रमे ॥ ममभाग्योदयोजातस्तवागमनतोमुने ॥ २२ ॥

उठ खड़ी हुई। और चरणों में पड़ कर वाल्मीकि को लाने वाली सीता की भाँति उसे अपने आश्रम में ले आयी ॥ २० ॥ ऋषि का स्वागत करती हुई उसने आदर के साथ अर्घ्य, पाद्य, एवं नाना प्रकार के जंगली फलों से उनका आतिथ्य किया और विनय पूर्वक वह ब्राह्मण कन्या कहने लगी ॥ २१ ॥ हे महाभाग ! अत्रिगोत्र के सूर्य ! आपको मेरा नमस्कार हो हे मुने ! मुझे दुर्भागा के आश्रम में आपके वं से पधारे। आपके आगमन से मेरे भाग्यों का उदयहुआ ॥२२॥ अथवा मेरे पिता के पुण्यों के

प्रताप से प्रेरित होकर मुझे समझाने के लिये आप यहां पधारे ॥ २३ ॥ आप जैसे महात्माओं की चरण धूलि तीर्थ रूप होती है उसे स्पर्श करते हुए आज मेरा जन्म तथा व्रत सफल हुआ ॥२४॥ आज मेरी संसार में उत्पत्ति तथा पुण्य सफल हैं जो आप जैसे पुण्यात्मा मेरे देखने में आये ॥ २५॥ यह कह कर वह कन्या ऋषि के सम्मुख मौन होकर ठहर गई। तब हंसते २ दुर्वासा

अथवामत्पितुःपुण्यप्रवाहप्रेरितोभवान् ॥ संभावयितुमामेवह्यागतोमुनिसत्तमः ॥ २३ ॥ भवादृशांपादरजस्तीर्थरूपंमहात्मनाम् ॥ स्पृशंत्याःसफलंजन्मसफलंचाद्यमेव्रतम् ॥ २४ ॥ अद्यमेसफलंपुण्यमद्यमेसफलोद्भवः ॥ भवादृशामहापुण्यायन्मेदृष्टिपथंगताः ॥ २५ ॥ एवमुक्त्वाचसाबालातस्थौतूष्णींतदग्रतः ॥ सस्मितंमुनिराहेदंदुर्वासाःशङ्करांशजः ॥ २६ ॥ दुर्वासाउवाच ॥ साधुसाधुद्विजसुतेकुलमभ्युद्धृतंपितुः ॥ मेधाऋषेःसुतपसःफलमेतादृशीसुता ॥ २७ ॥ कैलासादहमागच्छंज्ञात्वातेधर्मशीलताम् ॥ त्वदाश्रममनुप्राप्तस्त्वयासंपूजितोस्म्यहम् ॥ २८ ॥ गमिष्यामिवरारोहेशीघ्रंबदरिकाश्रमम्द्रष्टुंनारायणंदेवंसनातनमुनीश्व-

ऋषि यह बोले ॥ २६ ॥ दुर्वासा बोले–हे ब्राह्मण कन्ये ! धन्य धन्य तुमने पिता के कुल का उद्धार कर दिया। यह मेधा ऋषि की तपस्या का फल है जो ऐसी कन्या हुई ॥ २७ ॥ मैं कैलाश से आ रहा हूं, तुम्हारा धर्म तथा शील देखने के लिये तुम्हारे आश्रम में आया हूं। तूने मेरा अच्छा सत्कार किया ॥ २८ ॥ मैं अब हे वरारोहे ! शीघ्र ही बदरिकाश्रम में जाऊंगा। वहां श्रीबदरी नारायण मुनीश्वर के दर्शनों की इच्छा है ॥ २९ ॥ जो लोक हित कामना से उग्र तप कर रहे हैं। तब वह कन्या

बोली—हे ऋषे आपके दर्शन से मेरा शोक सागर सूख गया ।। ३० ।। इसके आगे भी मुझे शुभ सम्भावना है । देखिये महर्षे यह शोक से उत्पन्न अग्नि मुझे जला रही है ।। ३१ ।। हे कृपासागर आप नहीं जानते क्या ? कृपा कीजिये, इस अग्नि को बुझाइये । मेरे विचारते २ भी कोई हर्ष का हेतु नहीं दिखाई देता ।। ३२ ।। माता पिता भ्राता कोई भी ऐसा मेरा बन्धु नहीं

रम् ।। २९ ।। तपश्चरंतमेकाग्रमत्युग्रंलोकहेतवे ।। बालोवाच ।। ऋषेत्वद्दर्शनादेवशुष्कोमेशोकसागरः ।। ।। ३० ।। अतःपरंशुभंभावियस्मात्संभावितात्वया ।। समुद्भूतवृहज्ज्वालदावहव्यभुजंमुने ।। ३१ ।। किंनवेत्सिदयासिंधोतन्निर्वापयशङ्कर ।। हर्षहेतुर्नमेकश्चिद्दृश्यतेसुविचारतः ।। ३२ ।। नमातानपिताभ्रातायोमेधैर्यंप्रयच्छति ।। कथंकारमहंजीवेदुःखसागरपीडिता ।। ३३ ।। यांयांदिशंप्रपश्यामिसासाशून्याविभातिमे ।। ममदुःखप्रतीकारंकुरुशीघ्रंतपोनिधे ।। ३४ ।। नमांकामयतेकश्चित्पाणिग्रहणहेतवे ।। अतःपरंभविष्यामिवृषलीतिमहद्भयम् ।। ३५ ।। तस्मान्नजायतेनिद्रानरुचिर्भोजनेमम ।। ब्रह्मन्मुमूर्षुरस्म्येवइतिमेनिश्चयोधुना ।।

जो मुझे धैर्य दे । मैं दुःख सागर से पीड़ित कैसे जीऊं ।। ३३ ।। जिस ओर मैं देखती हूं वही शून्य दिखाई देती है हे तपोनिधे मेरे दुःख का प्रतीकार करें ।। ३४ ।। मेरा पाणिग्रहण करने के लिये कोई भी नहीं चाहता इसी कारण क्या मैं शूद्रा हो जाऊंगी ! यही डर रहता है ।। ३५ ।। इसी कारण नींद नहीं आती भोजन में भी रुचि नहीं रही अब तो हे मुनीश्वर मैं मरना चाहती हूं यह निश्चय है ।। ३६ ।। यह कह कर आंसु बहाती २ वह कन्या ऋषि के आगे चुप होगई । दुर्वासा ऋषि भी उसके लिये

उपाय के विचार में पड़ गये ॥ ३७ ॥ श्रीनारायण बोले–इस प्रकार मुनि कन्या के वचन सुनकर मुनिजी विचार करके कन्या को कृपा दृष्टि से देखकर उसे हितकारी एवं तत्त्व रूप वचन बोले ॥३८॥ इतिश्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्येभाषाटीकायांनवमोऽध्याय ॥९॥

नारदजी बोले—उन परमतपस्वी एवं क्रोधी मुनि ने हे मुनीश्वर क्या विचार कर उस ब्राह्मण कन्या को कहा ॥ १ ॥ सूतजी बोले—इस प्रकार नारदजी के वचन सुनकर हे ब्राह्मण गण ! श्रीनारायणजी दुर्वासा ऋषि के सर्व हितकारी एवं गुप्त वचन

॥ ३६ ॥ इत्युक्त्वाश्रुमुखीबालाविररामतदग्रतः ॥ दुर्वासास्तदुपायार्थंविचारमकरोत्तदा ॥ ३७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिमुनितनयावचोनिशम्यबहुलतमामुनिराड्विचार्यछंद ॥ अतिशयकृपयाविलोक्यबालांकिमपिहितंनिजगादसारभूतम् ॥ ३८ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येदुर्वासस्तपोवनागमनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

नारदउवाच ॥ किंविचार्यबृहद्धामापरमःकोपनोमुनिः ॥ अब्रवीदृषिकन्यांतांतन्मेब्रूहितपोनिधे ॥ १ ॥ सूतउवाच ॥ नारदस्यवचःश्रुत्वाप्रोवाचबदरीपतिः ॥ दुर्वासोवचनंगुह्यं सर्वेषांहितकृद्द्विजः ॥ २ ॥ श्रीनारा-

बोले ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले-हे नारद सुनिये जो दुर्वासा ने मेधावी ब्राह्मणी की पुत्री के दुःख निवारण करने के लिये कृपालु होकर कहा ॥ ३ ॥ दुर्वासा बोले—हे सुन्दरि मैंने जो गुप्त से गुप्त उपाय तुम्हारे लिये विचार किया है सो सुन, किन्तु कहना किसी को नहीं ॥ ४ मैं विस्तार से नहीं संक्षेप में कहता हूं हे सुभगे आज से तीसरे महीने पुरुषोत्तम मास लग रहा है ॥ ६ ॥

इस महीने में तीर्थ स्नान करने वाला पुरुष बाल हत्या के पाप से भी मुक्त हो जाता है हे सुन्दरि ! कार्तिक आदि मासो से यह बढ़ कर है ॥ ६ ॥ सारे महीने, पत्त, पर्व, और भी जितने पर्व हैं वे सब पुरुषोत्ततम मास की सोलवीं कला की भी तुलना नहीं कर सकते ॥ ७ ॥ वेद शास्त्रोक्त समस्त साधन भीं इसकी सोलवी कला योग्य नहीं ॥ ८ ॥ बारह सहस् वर्ष पर्यन्त गङ्गा स्नान

यणउवाच ॥ शृणुनारदवद्येयेहंयदुक्तं मुनिनातदा ॥ मेधावितनयादुःखमपनेतुँ कृपालुना ॥ ३ ॥ दुर्वासा उवाच ॥ शृणुसुन्दरिवक्ष्यामिगुह्याद्गुह्यतरंमहत् ॥ आख्येयंनैवकस्यापित्वदर्थंतुविचारितः ॥ ४ ॥ नविस्तरंकरिष्यामिसमासेन्नवीम्नि ते ॥ इतस्तृतीयःसुभगेमासस्तुपुरुषोत्तमः ॥ ५ ॥ तस्मिन्स्नातोनरस्तीर्थंमुच्यतेभ्रूणहत्यया ॥ एतत्तुल्योनकोप्यन्यःकार्तिकादिषुसुन्दरि ॥ ६ ॥ सर्वेमासास्तथापत्ताःपर्वाण्यन्यानियानिच ॥ पुरुषोत्तममासस्यकलांनार्हतिषोडशीम् ॥ ७ ॥ साधनानिसमस्तानिनिगमोक्तानियानिच ॥ मासस्यैतस्यनार्हतिकलामपिचषोडशीम् ॥८॥ द्वादशाब्दसहस्राणिगङ्गास्नानेनयत्फलम् ॥ गोदावरीसकृत्स्नानाद्यत्फलंसिंहगेगुरौ ॥९॥ तदेवफलमाप्नोतिमासेवैपुरुषोत्तमे ॥ सकृत्सुस्नानमात्रेणयत्रकुत्रापिसुन्दरि ॥१०॥

करते रहने से, और सिंह के बृहस्पति में एक बार स्नान करनेसे जो फल प्राप्त होता है ॥ ९ ॥ वह फल किसी स्थान पर हे सुन्दरि ! पुरुषोत्तम मास में एक स्नान कर लेने पर प्राप्त हो जाता है ॥ १० ॥ यह श्रीकृष्ण का परम प्रिय पुरुषोत्तम मास है। हे वाले इसमें जप, तप, दानादि करने से मन वांछित फल की प्राप्ति होती है ॥ ११ ॥ अतएव इस पुरुषोत्तम मास की हे सुन्दरी तू भी

शीघ्र सेवा कर और मैं भी तो इसे पुरुषोत्तम मान कर इसकी सदा सेवा करता रहता हूं ॥ १२ ॥ एक वार क्रोध में आकर
अम्बरीष को भस्म करने के लिये मैंने एक कृत्या छोड़ी थी। तब हरि ने जलती कृत्या को ॥ १३ ॥ सुदर्शन द्वारा मुझे ही
भस्म करने को प्रेरित किया। तब इसी पुरुषोत्तम के व्रत करने से इस चक्र ने मुझे छोड़ा ॥ १४ ॥ हे सुन्दरि ! वह चक्र त्रिलोकी

श्रीकृष्णवल्लभोमासोनाम्नात्रपुरुषोत्तमः ॥ तस्मिन्संसेविते बालेसर्वंभवतिवांछितम् ॥ ११ ॥ तस्मान्निषेवया
शुत्वंमासंतंपुरुषोत्तमम् ॥ मयापिसेव्यतेसोऽयंपुरुषोत्तमवन्मुदा ॥ १२ ॥ एकदाभस्मसात्कर्तुमंबरीषंक्रुधा-
मया ॥ मुक्ताकृत्यातदाबालेसुनाभंहरिणाज्वलत् ॥१३॥ मामेवभस्मसात्कर्तुंतदानींप्रेरितंमयि ॥ पुरुषोत्तम-
व्रतादेवतच्चक्रंसंन्यवर्तत ॥ १४ ॥ त्रैलोक्यंभस्मसात्कर्तुंसमर्थंतच्चसुन्दरि ॥ मयाकिंचित्करंजातंतदामेवि-
स्मयोऽभवत् ॥ १५ ॥ तस्माद्भजस्वसुभगेश्रीमंतंपुरुषोत्तमम् ॥ इत्युक्त्वामुनिशार्दूलोविररामसुनेःसुताम् ॥
॥ १६ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ दुर्वासोवचनंश्रुत्वाबालामूढधियावदत् ॥ भाविनाप्रेरिताराजन्नसूयाप्रेरितासती

भस्म कर सकता है किन्तु मुझे कुछ भी नहीं हुआ। मेरे लिये बड़ा आश्चर्य था ॥ १५ ॥ अतएव हे सुभगे श्रीपुरुषोत्तम
मास का व्रत अवश्य करो। इस प्रकार मुनि शार्दूल दुर्वासा ब्राह्मण, कन्या को कह कर मौन होगये ॥ १६ ॥ श्रीकृष्ण बोले-
दुर्वासा के वचन सुनकर वह मूर्खबुद्धि कन्या क्रोध आविसे वाला बोली-हे ब्रह्मन् ! जो भी आपने कहा है वह मुझे पसन्द नहीं

॥१८॥ कार्तिक एवं माघ आदि मास उससे क्या कम फल देते हैं ? यह कैसे ? ॥ १६ ॥ वैशाख व्रत भी फलदायक नहीं
सदाशिव पूजन भी क्या फलदायक नहीं ॥ २० ॥ अथवा पृथ्वी प्रत्यक्ष सूर्य तथा अम्बिका देवी भी फलदायक नहीं । २१ ॥
गणेश भी फल नहीं देते । व्यतीपात आदि योग सर्व आदि देव सबको ॥२२॥ उल्लंघन करके मुने आप क्या कहते हैं ! लज्जा

॥ १७ ॥ दुर्वाससंमुनिश्रेष्ठंमनसिक्रोधसंयुता ॥ बालोवाच ॥ नमह्यंरोचतेब्रह्मन्यदुक्तंभवतामुने ॥१८॥
कथंमाघादयोमासाअकिंचित्करतांगताः ॥ कथंकार्तिकमासंत्वमूनंवदसितद्वद ॥ १६ ॥ वैशाखःसेवितःकिंवा-
नदास्यतिसुकामितम् ॥ सदाशिवादयोदेवाःफलदाःकिंनसेविताः ॥ २० ॥ अथवाभुविमार्तंडोदेवःप्रत्यक्ष-
दर्शनः ॥ सकिंनदाताकामानांदेवीचजगदंबिका ॥ २१ ॥ गणेशःसेवितःकिंवानसंयच्छतिकामितम् ॥
व्यतीपातादिकान्योगान्देवाञ्छर्वादिकानपि ॥ २२ ॥ सर्वानुल्लंघ्यवदतस्त्रपाकिंतेनजायते ॥ अयंतुमलि-
नोमासःसर्वकर्मविगर्हितः ॥ २३ ॥ असूर्यसंक्रमःश्रेष्ठःक्रियतेचकथंमुने ॥ वेदाहंसर्वदुःखानांपारदंश्रीहरिं
परम् ॥ २४ ॥ नान्यंपश्यामिभूदेवचिंतयंतीदिवानिशम् ॥ रामाद्वाजानकीजानेःशङ्करात्पार्वतीपतेः ॥२५॥

सूर्य की संक्रांति से रहित इसे आप किस प्रकार श्रेष्ठ मान
भी नहीं आती यह तो सर्व कर्मों में निन्दित मलिन मास है ॥२३॥ हे भूदेव ! रात दिन विचार करते २ मैंने जानकी
रहे हैं सर्व दुःख हर्ता निःसंशय श्रीहरि हैं, यह तो मैं जानती हूँ ॥ २४ ॥ हे देव श्रीराम एवं शंकरको छोड़कर और कोई
वल्लभ श्रीराम तथा पार्वती पति शंकर से बढ़ कर और किसीको नहीं जाना ॥२५॥

श्री मेरे दुःख को दूर नही कर सकता, आप फिर मल मास की स्तुति कैसे करते हो ॥२६॥ इस प्रकार ब्राह्मण पुत्री के कहने पर क्रोधी दुर्वासा की क्रोध से आंखें लाल होगई ॥ २७ ॥ फिर भी उसने अपनी मित्र कन्या को शाप नहीं दिया । दया आगयी ! उसे अपना हित अहित न समझने वाली मूर्ख समझा ॥ २८ ॥ पुरुषोत्तम मास का महात्म्य तो विद्वान् भी नहीं समझ सकते

नान्यःकोपिमहान्देवोयोमेदुःखंव्यपोहति ॥ एतान्विहायविप्रेंद्रकथंस्तौषिमलंमुने ॥ २६ ॥ एवमुक्तस्तया-विप्रपुत्र्यासक्रोधनोमुनिः ॥ जाज्वल्यमानोवपुषाक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ २७ ॥ तथापिनशशापैनांमित्रजां कृपयान्वितः ॥ मूढेयंनैवजानातिहिताहितमपूर्णधीः ॥ २८ ॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यंदुर्ज्ञेयंविदुषामपि ॥ किमु-ताल्पधियांपुंसांकुमारीणांविशेषतः ॥ २६ ॥ पितृहीनाकुमारीयंबालादुःखाग्निभर्जिता ॥ अतीवोग्रतरंशा-पंमदीयंसहतेकथम् ॥ ३० ॥ इत्येवंकृपयाक्रोधंसंजहारमनःस्थितम् ॥ स्वस्थोभूत्वामुनिःप्राहतांबालामतिवि-ह्वलाम् ॥ ३१ ॥ दुर्वासाउवाच ॥ अहोबालेनमेकोपोमित्रजेत्वयिकश्चन ॥ यत्तेमनसिनिर्भाग्येयथारुचित-

अल्पबुद्धि पुरुष एवं स्त्रियें भला किस प्रकार समझ सकें ॥ २६ ॥ यह कुमारी पितृ हीन एवं बाला हैं दुःखाग्नि से भी जल रही है । मेरा शाप फिर किस प्रकार सहन कर सकेगी ॥ ३० ॥ यह सोचकर क्रोध निवारण करके स्वस्थ होकर मुनि कहने लगे ॥ ३१ ॥ दुर्वासा बोले—हे बाले तू मेरे मित्र की पुत्री है अतः मैं तुम पर क्रोध नहीं करता । हे निर्भाग्य जैसा चाहो वही

करो ॥ ३२ ॥ और भी हे बाले मैं तुम्हारा कुछ भविष्य भी कहता हूं। तूने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया है ॥ ३३ ॥ इसका फल इस जन्म में अथवा दूसरे में तुझे अवश्य मिलेगा। मैं तो अब बदरिकाश्रम जा रहा हूं ॥ ३४ ॥ हे भीरू मैंने तो तुम्हें मित्र पुत्री जानकर शाप नहीं दिया। तू बालिका होने के कारण अपना शुभाशुभ नहीं जानती ॥ ३५ ॥

थाकुरु ॥ ३२ ॥ अपरंश्रूयतांबालेभविष्यंकिंचिदुच्यते ॥ पुरुषोत्तममासस्ययत्त्वयाऽनादरःकृतः ॥ ३३ ॥ सर्वथातत्फलंभाविइहवापरजन्मनि ॥ अतःपरंगमिष्यामिनरनारायणालयम् ॥ ३४ ॥ नत्वशप्तामयाभीरुम-न्मित्रंतेपितायतः ॥ हिताहितंनजानासिबालभावाच्छुभाशुभम् ॥ ३५ ॥ स्वतितेस्तुगमिष्यामिमास्तुकाला-त्ययोमम ॥ शुभंशुभेतरंभाविनकेनाप्यनुलंघ्यते ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ इत्युदीर्यजगामाशुतामसस्ता-पसोमुनिः ॥ तत्क्षणंनिष्प्रभासाभूत्पुरुषोत्तमहेलया ॥ ३७ ॥ विमृश्यसुचिरंकालंतत्कालफलदंशिवम् ॥ आराधयामिदेवेशंतपसापार्वतीपतिम् ॥ ३८ ॥ इतिनिश्चत्यमनसामेधावितनयान्नृप ॥ दुष्करंतत्तपःकर्तु-

तुम्हारा कल्याण हो। मेरा समय नष्ट न हो शुभ अशुभ होन हार को मिटा भी कोई नहीं सकता ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्ण बोले-यह कह कर तामस मुनि तत्काल ही वहाँ से चले गये। और वह कन्या पुरुषोत्तम मास के अनादर से काँति हीन होगई ॥ ३७ ॥ चिरकाल तक विचार कर उस कन्या ने आशुतोष पार्वतीनाथ शिव का आराधन करना निश्चय किया ॥ ३८ ॥ यह निश्चय कर

मेधावी पुत्री ने उग्र तप करने की इच्छा की ॥ ३६ ॥ सूतजी बोले—इस प्रकार उसने महामुनिकेवचन का भी निरादर कर दिया,
और बहुत फल देने वाले लक्ष्मीनाथ तथा सावित्री पति ब्रह्मा का पूजन छोड़ अपने मनमें केवल शंकर की आराधना वह
करने लगी ॥ ४० ॥ इति श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

मियेषस्वाश्रमेस्थिता ॥ ३६ ॥ सूतउवाच ॥ आर्षेयीप्रबलमुनेर्वचोविनिंद्यमोघ्युक्तांधकरिपुसेवनेवनेस्वे ॥
लक्ष्मीशंबहुलफलप्रदंविहायसावित्रीपतिमपिताहृशंनिरस्य ॥ ४० ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममा-
हात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकुमारीशिवाराधनोद्योगोनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

नारदउवाच ॥ अचीकरत्कुमारीयंमहत्कर्मसुदुष्करम् ॥ मुनीनामपिसर्वेषांतन्मेवदमहामुने ॥ १ ॥
श्रीनारायणउवाच ॥ अथारभतकल्याणीतपःपरमदारुणम् ॥ चिंतयंतीशिवंशांतंपंचवक्त्रंसनातनम् । २ ॥
भुजंगभूषणंदेवंनंदिभृङ्गिनिषेवितम् ॥ चतुर्विंशतितत्त्वैश्चगुणैस्त्रिभिरभिष्टुतम् ॥ ३ ॥ महासिद्धीभिरष्टाभिः

नारदजी बोले—हे मुनिजी ! इस कुमारी ने बड़ा कठोर कर्म करना आरम्भ कर दिया, जिस कर्म को मुनि जन भी
कठिनता से कर पाते हैं कृपा करके आगे का वृत्त कहिये ॥ १ ॥ श्रीनारायण बोले—तब उस कल्याणी ने वह अति दुष्कर तप
करना आरम्भ किया, वह पंच मुखी सनातन शान्त शिव का चिंतन करने लगी ॥ २ ॥ भुजंग भूषण, नन्दी तथा भृंगी से
सेवित चौबीस तत्त्वों से तथा तीन गुणों से पूजित देवाधि देव ॥ ३ ॥ आठ महा सिद्धियों से तथा-प्रकृति पुरुष से स्तुत, चन्द्रखण्ड

जिनके मस्तक पर है जटा जूट से शोभायमान ॥ ४ ॥ इस प्रकार के शिव स्वरूप का ध्यान करके वह बाला कठोर तप करने लगी गरमी में तो पंच अग्नि में बैठती ॥ ५ ॥ हेमन्त तथा शीत ऋतु में ठण्डे जल में बैठती जल में बैठी हुई वह कमल मुखी स्पष्ठ जलका कमल दिखाई देती ॥ ६ ॥ शिरके बाल उसके फैले रहते सघन काले बालों से अवगुण्ठित रह कर वह शैवाल

प्रकृत्यापुरुषेणच ॥ चंद्रखंडलसद्भालंजटाजूटविराजितम् ॥ ४ ॥ चचारदुश्चरंबालातमुद्दिश्यपरतपः ॥ पंचाग्नीनांचमध्येसास्थायिनीग्रीष्मगेरवौ ॥ ५ ॥ हेमंतशिशिरेचैवशीतवार्यंतरस्थिता ॥ व्यक्तवक्त्रातथारे-जेजलस्थंकमलंयथा ॥ ६ ॥ शिरोधःप्रसृतश्यामनीलालकविगुंठिता ॥ जंबालवल्लरीपुञ्जवेष्टितेवाब्जभौ-जले ॥ ७ ॥ ब्रह्मरंध्राद्गतश्रीमद्धूमराजिर्व्यदृश्यत ॥ नलिनंसेव्यमानेवमिलिंदालिःप्रसर्पिणी ॥ ८ ॥ वर्षास्वनावृताशेतेस्थंडिलेवृसिकान्विते ॥ संध्ययोरुभयोस्तन्वीधूम्रपानमचीकरत् ॥ ९ ॥ पुरंदरःपरांचिंता-मवापाश्रुत्यतत्तपः ॥ दुर्धर्षादिविजैःसर्वैःस्पृहणीयामहर्षिभिः ॥ १० ॥ एवंतपसिवृत्तायामाश्चर्यांनृपनंदन ॥

मंजरी से घिरी हुई जल में शोभायमान लगती ॥ ७ ॥ उन बालों से मानो कमल के चारों ओर घूमती हुई भ्रमरों की जैसे पङ्क्ति घूम रही है। एवं ब्रह्मरन्ध्र से निकल कर शोभायमान जैसे धूम्र की राजि दिखाई दे रही हो ॥ ८ ॥ वर्षा काल में कुछ भी ऊपर वस्त्र न लेकर घास के बिछोने पर सो जाती। वह कोमलाङ्गी दोनों सन्ध्याओं में केवल धूम्र ही पी लिया करती ॥ ९ ॥ इस प्रकार के उसके उग्रतप को सुनकर इन्द्र चिन्ता में पड़ गये। देवता जिसे कठोर समझते हैं एवं महर्षि जिसकी प्रशंसा करते

हैं ॥ १० ॥ इस प्रकार के तप में नृपनन्दन ! प्रवृत्त हुए उसे नौ हजार वर्ष व्यतीत होगये ॥ ११ उसकी तपस्या से भगवान् पार्वती नाथ शंकर प्रसन्न हुए, सब के अगोचर उन्होंने अपना दर्शन जाकर दिया ॥ ११ ॥ उनके दर्शन पाकर वह बाला झट पट खड़ी होगई मानो उसके शरीर में प्राण आ गये हों तप से कृश हुई भी उस समय हृष्ठ पृष्ठ होगई ॥ १३ ॥ बहुत

गतान्यब्दसहस्राणिनवराजन्यभूषण ॥ ११ ॥ संतुष्टस्तपसातस्याभगवान्पार्वतीपतिः ॥ दर्शयामासबाला-येनिजंरूपमगोचरम् ॥ १२ ॥ तद्दृष्ट्वासहसोत्तस्थौदेहःप्राणमिवागतम् ॥ तपःकृशापिसावालाहृष्टपुष्टातदा-भवत् ॥ १३ ॥ भूरिवातपसंक्लिष्टादेवमीढागरीयसी ॥ सावालाऽवनताभूत्वाववंदेगिरिजापतिम् ॥ १४ ॥ मानसै रुपचारैस्तंसंपूज्यविश्ववंदितम् ॥ तुष्टावजगतांनाथंभक्तियुक्तेनचेतसा ॥ १५ ॥ बालोवाच ॥ अयेशैलजावल्लभप्राणनाथप्रभोभर्गभूतेशगौरीशशंभो ॥ नमः सोमसूर्याग्निदिव्यत्रिनेत्रमदाधारमुंडास्थि-मालिन्नमस्ते ॥ १६ ॥ नरोनेकतापाभिभूताङ्गपीडःपरंघोरसंसारवार्धौनिमग्नः ॥ खलव्यालकालोग्रदंष्ट्राभि-

सी सरदी गरमी वर्षा आदि झेल २ कर तप से क्लिष्ठ हुई भी उस बालाने सिर झुका कर शंकर जी को प्रणाम किया ॥ १४ ॥ उन विश्व वन्दित श्रीमहादेव जी का मानसिक भावनाओं से पूजन करके भक्ति पूर्वक स्तुति करने लगी ॥ १५ ॥ वह बाला बोली—हे पार्वती जी के प्राण बल्लभ ! हें भर्ग ! हे भूतों के नाथ ! हे गौरी के स्वामी ! हे शम्भो ! हे चन्द्र सूर्य अग्नि के दिव्यनेत्र धारिन् ! हे मेरे आश्रय ! मुण्डों की तथा अस्थियों की माला धारने वाले ! आपको मेरी नमस्कार हो ॥ १६ ॥

हे प्रभो जो भी आपकी शरण में आता है, वह घोर संसार सागर में डूबा हुआ भी हो, एवं अनेक तापों से उसके अङ्ग प्रत्यंग पीड़ित भी हो रहे हों, दुष्ट काले सर्प रूप काल को कठोर दंष्ट्राओं से काटा भी जा रहा हो, वह झट पट इन सन्तापों से मुक्त हो जाता है ॥ १७ ॥ हे समर्थ ! आपने बाणासुर को अपना लिया, अलर्क राजा की मृत पत्नी को जीवित कर दिया, हे दया

दृष्टोविमुच्येद्भवंतंशरण्यंप्रपन्नः ॥ १७ ॥ विभोयेनबाणःस्वकीयीकृतश्चमृताजीवितालर्कभूपालपत्नी ॥ दयानाथभूतेशचंडीशभव्यभवत्राणमृत्युञ्जयप्राणनाथ ॥ १८ ॥ मखध्वंसकर्तःसमस्तारिहर्तःसदासेवकानां-भवाध्वंसकर्तः ॥ नमोजन्महर्तःपुरासृष्टिकर्तस्त्वदीयानवप्राणनाथाघहर्तः ॥१९॥ इत्येवंमनसावाचाशिवंस्तुत्वातपस्विनी ॥ विरराममहाभागामेधावितनयानृप ॥ २० ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ तत्कृतंस्तोत्रमाकर्ण्यतप-सोग्रतरेणच ॥ प्रसन्नवदनांभोजस्तामुवाचसदाशिवः ॥ २१ ॥ शिवउवाच ॥ वरंवरयभद्रंतेयस्तेमनसिवां

करने वाले भूतेश, चण्डी के अधिपति ! हे भव्य, संसार से रक्षा करने वाले, मृत्युंजय, प्राणेश्वर ॥ १८ ॥ यज्ञ के भंग करने वाले, सब शत्रुओं के विध्वंस करने वाले, अपने भक्तों के संसार बन्धन हटाने वाले, जन्म मरण से छुड़ाने वाले, पहिले सृष्टि के रचयिता, भक्तों के प्राणजीवन पाप नाशक प्राण नाथ ! नमस्कार हो ॥ १९ ॥ इसी प्रकार मन तथा वाणी से उस तपस्विनी ने शिव की स्तुति की । हे राजन् । वह महा भागा मेधावि पुत्री स्तुति करके चुप होगई ॥ २० ॥ श्रीकृष्ण बोले—उसकी स्तुति सुनकर उसके उग्रतप से प्रसन्न हुए मुख कमल वाले सदाशिव बोले ॥ २१ ॥ शिव बोले—हे भद्रे जो तुम्हारे मनमें हो वह

पु. मा. ७०

भा. टी. अ. ११

वर मांग । हे तपस्विनि दुःखी न हो दुःखी न हो मैं अति प्रसन्न हूं ।। २२ ।। ऐसा सुनकर वह कुमारी आनन्द में निमग्न होकर हे राजन् ! सदा शिव से कहने लगी ।। २३ ।। बाला बोली—हे दीनानाथ दयासागर यदि आप प्रसन्न हैं तो मेरी मन की इच्छा पूर्ण करें, विलम्ब न दो ।।२४।। हे महादेव मुझे पति देवें । मैं पति की चाहना रखती हूं । मेरे चित्त में पति है और कुछ

छितं.।। प्रसन्नोस्मिमहाभागेमामाखिदतपस्विनि ।। २२ ।। तदाकर्ण्यकुमारीयंमहानंदपरिप्लुता ।। उवाच वचनंराजन्सुप्रसन्नंसदाशिवम् ।। २३ ।। बालोवाच ।। दीननाथदयासिंधोप्रसन्नश्चेन्ममोपरि ।। तदामत्कामितंदेहिमाविलंबंकुरुप्रभो ।। २४ ।। पतिंदेहिपतिंमह्यंपतिंपतिमहंवृणे ।। पतिंदेहिमहादेवनान्यन्मेचिंतितंहृदि ।। २५ ।। एवमुक्त्वातदाषैंयोविररामकपर्दिनम् ।। तदाकर्ण्यमहादेवोजगादमुनिकन्यकाम् ।। २६ ।। शिवउवाच ।। त्वयायत्स्वमुखेनोक्तंतदस्तुमुनिकन्यके ।। पंचकृत्वस्त्वयायस्मात्पतिःसंप्रार्थितोऽधुना ।।२७।। तस्मात्पंचभविष्यंतिपतयस्तवसुंदरि ।। शूराःसकलधर्मज्ञाःसाधवःसत्यविक्रमाः ।। २८ ।। यज्वानःस्वगुणख्या-

विचार नहीं, पति, पति, ही दीजिये ।। २५ ।। महादेव जी से ऐसा कह कर वह बाला चुप होगई । तब उस बाला से महादेवजी कहने लगे ।। २६ ।। शिव बोले-हे मुनि कन्ये तूने अपने मुख से मेरे सामने पांच बार पति पाने की प्रार्थना की है ।। २७ ।। हे सुन्दरि इसी कारण तेरे पाँच पति होंगे, वे शूर वीर सब धर्मों के ज्ञाता, साधु एवं सत्य पराक्रमी ।। २८ ।। यज्ञ कर्ता, गुणों

से प्रख्यात, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, तुम्हारे मुख की ओर देखने वाले गुणशाली राजा होंगे ॥ २९ ॥ श्रीकृष्ण बोले—ऐसा श्रीमहादेव का बचन सुन जो इतना प्रिय नहीं था वह बाला अवनत होकर बचन चातुरी से बोली ॥ ३० ॥ बाला बोली-हे सदा शिव गिरिजा कान्त संसार में मेरा इस प्रकार तो उपहास न कराइये। एक स्त्री का एक ही पति होता है ॥ ३१ ॥ एक स्त्री पांच

ताःसत्यसंधाजितेंद्रियाः ॥ त्वन्मुखप्रेक्षकासर्वेराजन्यागुणशालिनः ॥ २९ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ इत्याकर्ण्य-
वचस्तस्यधूर्जटेरनतिप्रियम् ॥ उवाचावनताभूत्वाबालावाक्यविशारदा ॥ ३० ॥ बालोवाच ॥ एवंमेगिरि-
जाकांतमास्तुलोकेऽतिकौतुकम् ॥ एकस्याएकएवास्तिभर्तानार्याःसदा शिवः ॥ ३१ ॥ नदृष्टानश्रुताक्वा-
पिनार्येकापंचभर्तृका ॥ एकस्यपंचपत्न्यस्तुपुरुषस्यभवंतिहि ॥ ३२ ॥ त्वदीयाहंकथंशंभोभवेयंपंचभर्तृका ॥
नैवार्हंशिववचस्त्वेवंमयिवक्तुं कृपानिधे ॥ ३३ ॥ तवैवजायतेलज्जात्वदीयाहंयतःप्रभो ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्याः
शंकरः प्राहतांपुनः ॥ ३४ ॥ शिवउवाच ॥ मास्तुतेस्मिन्भवेभीरुभव्यंतत्परजन्मनि ॥ अयोनिसंभवातत्र-

भर्ता वाली न कहीं देखने में आई न सुनी गई है। हाँ एक पुरुष की पांच पत्नियां हुआ करती हैं ॥ ३२ ॥ हे शंभो मैं आपकी सेविका होते हुए पांचभर्ता वाली क्यों होऊं। हे कृपानिधे! इस प्रकार कहना क्षमा करें उचित तो नहीं ॥ ३३ ॥ हे प्रभो यह लज्जा तो आपको हो क्योंकि मैं तो आपकी ही हूं। इस प्रकार सुनकर शंकर फिर कहने लगे ॥ ३४ ॥ हे भीरू तूं डर

नहीं, अगले जन्म में तपोबल से तू योनि से उत्पन्न नहीं होगी उसी जन्म में ही मुझे पति प्राप्त होंगे ।। ३५ ।। पति सुख पाकर तू परमपद भी प्राप्त करेगी। दुर्वासा तो मेरी प्रिय मूर्ति हैं उनका तू अपमान कर चुकी है ।। ३६ ।। यदि वे क्रोध में आजाय तो त्रिलोकी जला सकने हैं तूने गर्व की मात्रा से उस ब्रह्म तेज का तिरस्कार किया था ।। ३७ ।। पुरुषोत्तम मास तो भगवत्प्रिय

भविष्यसितपोबलात् ।। ३५ ।। भर्तृजंसुखमासाद्यततोगंत्रीपरंपदम् ।। दुर्वासामेप्रियामूर्तिःसत्वयाऽवमतः पुरा ।। ३६ ।। सचेत्कोपावृतःसुभ्रु निर्दहेद्भुवनत्रयम् ।। त्वयागर्वातिरेकेणब्रह्मतेजःप्रमर्दितम् ।। ३७ ।। पुरुषोत्तमस्त्वयामासोनकृतोभगवत्प्रियः ।। यस्मिन्नर्पितमैश्वर्यंश्रीकृष्णेनात्मनःस्वकम् ।। ३८ ।। अहं ब्रह्मादयोदेवानारदाद्यास्तपस्विनः ।। यदादेशकराबालेतदाज्ञांकोविलंघयेत् ।। ३९ ।। समासोनत्वयामूढेपूजितोलोकपूजितः ।। अतस्तेपंचभर्तारोभविष्यंतिद्विजात्मजे ।। ४० ।। नान्यथाभावितद्बालेपुरुषोत्तमखंडनात् ।। योवैनिंदतितंमासंसयातिघोररौरवम् ।। ४१ ।। विपरीतंभवेत्तस्यनकदाप्यन्यथाभवेत् ।। पुरुषोत्तमस्ययेभक्ताःपुत्र-

मास है। उसका व्रत तैंने नहीं किया, श्रीकृष्ण भगवान् ने ही अपना ऐश्वर्य सौंप कर उसे अपना बनाया है ।। ३८ ।। मैं ब्रह्मादि देवता नारद आदि तपस्वी जिसकी आज्ञा पालन करते हैं भला कौन उनकी आज्ञा उल्लंघन करे ।। ३९ ।। हे मूढ़े उस लोक पूजित मास का तूने पूजन नहीं किया। हे ब्राह्मण पुत्री इसी कारण तेरे पाँच पति होंगे ।। ४० ।। हे बाले—पुरुषोत्तम की अवज्ञा हो जानेसे अत्र अन्यथा हो ही नहीं सकता। जो भी उस मास की निन्दा करता है वह घोर रौरव नरक में पड़ता है।।४१।।

उससे विपरीत रहने वाले का कभी मङ्गल नहीं। और पुरुषोत्तम के भक्त जन धन धान्य पुत्र पौत्र से सम्पन्न होकर ॥ ४२ ॥ इस लोक की तथा परलोक की सिद्धियां पाते हैं, पा चुके हैं और पाँयेगे। हम देवता लोग भी पुरुषोत्तम की सेवा करते हैं ॥ ४३ ॥ जिस पुरुषोत्तम मास की सेवा से श्रीपुरुषोत्तम शीघ्र प्रसन्न होते हैं। वह मास फिर क्यों न सेवनीय हो, एवं सुमध्यमे

पौत्रधनान्विताः ॥ ४२ ॥ ऐहिकामुष्मिकींसिद्धिंयातायास्यंतियांतिच ॥ वयंसर्वेपिगीर्वाणाःपुरुषोत्तमसेविनः ॥ ४३ ॥ यस्मिन्संसेवितेशीघ्रं प्रीयतेपुरुषोत्तमः ॥ सेवनीयंकथंमासंनभजामसुमध्यमे ॥ ४४ ॥ अत्युत्कटानांमहतांवचोमिथ्याकथंवद ॥ अनुनेयाहिमुनयःसदसद्वादवादिनः ॥ ४५ ॥ वदन्नेवंनीलकंठःक्षिप्रमंतर्दधेहरः ॥ चकितासाभवद्वालायूथभ्रष्टामृगीयथा ॥ ४६ ॥ सूतउवाच ॥ शशांकलेखांकितभालदेशेसदाशिवे-शैवदिशंप्रयाते ॥ चिंताबबाधेमुनिराजकन्यांहत्यायथावृत्रहणंमुनीशाः ॥ ४७ ॥

भजनीय ही ॥ ४४ ॥ बड़े २ महात्माओं के ये वचन भला किस प्रकार मिथ्या हों सत् असत् वक्ता मुनि जन प्रार्थनीय होते हैं ॥ ४५ ॥ इस प्रकार कहते २ नील कण्ठ सदाशिव तत्काल अन्तर्ध्यान होगये। वह बाला यूथ भ्रष्टामृगी की भान्ति चकित होगई ॥ ४६ ॥ सूतजी बोले—हे मुनिजन! जब कि अपने मस्तक पर चन्द्रमा की रेखा रखने वाले सदाशिव शिवलोक में पधारे तब वृत्रासुर की हत्या करने वाले इन्द्र की भांति मुनि राज की कन्या चिन्ता में पड़ गई ॥ ४७ ॥

॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

नारद जी बोले—हे महर्षे ! मैं आगे का वृत्त सुनना चाहता हूं, विनय यह है कि जब श्रीमहादेव चले गये गये शोक ग्रस्ता उस बाला ने फिर क्या किया ॥ १ ॥ श्रीनारायण बोले-जैसा कि तुम पूछ रहे हो इसी प्रकार पाण्डु पुत्र युधिष्ठिर जीने भी

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येशिववाक्यंनामएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

नारदउवाच ॥ शितिकंठेगतेनाथबालाकिमकरोच्छुचा ॥ तन्मेवदविनीतायशुश्रूषाधर्मसिद्धये ॥१॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एवमेवपुरापृष्टःश्रीकृष्णःपांडुसूनुना ॥ यदुवाचवचोरङ्गेतन्मेनिगदतःशृणु ॥ २ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ एवंगतेशिवेराजन्साबालाविगतप्रभा ॥ निःश्वासपरमाभीतासाश्रुनेत्राकृशोदरी ॥ ३ ॥ हृद्याग्निलसज्ज्वालाज्वलितांगीकुमारिका ॥ दावाग्निदग्धपत्रासालतेवासतपस्विनी ॥ ४ ॥ दुःखमीर्ष्यामाप्तन्त्यामेवंकालोमहानगतः । असौतामवचस्कंदताद्दशीतापसींप्रभुः ॥ ५ ॥ सहसातांसमापन्नांफणीवा·

श्रीकृष्ण भगवान् से पूछा था। उन्हीं के कथनानुसार श्रवण करो॥ २॥ श्रीकृष्णजी ने कहा था कि–जब शिव चले गये उस समय राजन् उस बाला का तेज नष्ट हो गया बड़ी डर गई सांस चलने लग गये आंखों में आंसु छल छला आये ॥३॥ उस कुमारि का के हृदय में आगे जल उठी उसके अंग प्रत्यंग जलने लगे दावाग्नि से जले पत्र वाली बेलकी भांति वह तपस्विनी झुलस गई ॥ ४॥ दुःख तथा ईर्षा प्राप्त होते २ उसे बहुत समय गुजरा, इसी दुःख ईर्षा में ही उस तपस्विनी का

प्रभु ने जीवन समाप्त किया ॥ ५ ॥ जिस प्रकार बिल में घुसते चूहे को सर्प भागकर पकड़ लेता है उसी प्रकार उस तपस्विनी को भी बलवान् काल ने अपने वश कर लिया ॥ ६ ॥ वर्षा कालीन मेघों से घिरे हुए आकाश मण्डल में जिस प्रकार बिजली चमक कर लुप्त हो जाती है,वैसे ही अपने आश्रम में वह तपद्वारा निष्पाप होकर मृत्युकोप्राप्त हुई ॥७॥ उसी समय यज्ञसेन धर्मिष्ठ

खुनिवेशनम् ॥ इतिकालेनबलिनावशंनीतातपस्विनी ॥ ६ ॥ प्रावृण्मेघावृतेव्योम्निविद्युत्सौदामिनीयथा ॥ तथाऽऽश्रमेस्वकेनष्टातपसादग्धकल्मषा ॥ ७ ॥ तदानीमेवधर्मिष्ठोयज्ञसेनोनराधिपः ॥ बृहत्संभारसंपन्नमकरोद्यज्ञमुत्तमम् ॥ ८ ॥ तद्यज्ञकुण्डादुद्भूताकुमारीकनकप्रभा ॥ सेयंद्रुपदशार्दूलतनयाप्रथिताभुवि ॥ ॥ ९ ॥ द्रौपदीसर्वलोकेषुह्यार्षेयीयापुराऽभवत् ॥ सेयंस्वयंवरेराजन्मत्स्यवेधेकृतेसति ॥ १० ॥ लब्धार्जुनेनपांचालीक्षुभितेराजमंडले ॥ तृणीकृत्यनृपान्सर्वान्भीष्मकर्णादिकान्बहून् ॥ ११ ॥ सेयंकचग्रहंप्राप्तादुष्टदुःशासनान्मुने ॥ वचांसिकर्णशूलानिश्राविताखर्णिनी ॥ १२ ॥ मयाचोपेक्षिताराजन्पुरुषोत्तमहेलनात् ॥

द्रुपद राजा यज्ञ की बड़ी सामग्री इकट्ठी करके उत्तम यज्ञ कर रहे थे ॥ ८ ॥ उसी ही यज्ञ कुण्ड से वही कुमारी स्वर्ण की तरह प्रभावली प्रकट हो गयीं, हे राजन् यह वही अब द्रुपद कन्या करके प्रसिद्ध द्रौपदी है जिसेस्वयंवर में मत्स्यवेध करके ॥९॥१०॥ सब राजाओं के मण्डल में बड़े २ भीष्म कर्ण आदि सब राजाओं को निस्तेज करके अर्जुन ने स्वयंवरमें प्राप्त किया॥११॥कानों में शूल की तरह चुभने वाले वचन सुना२ कर दुष्ट दुःशासन ने जिसे बालों से घसीटा था ॥ १२ ॥ हे राजन् उस समय मैंने भी इसकी उपेक्षा करदी थी क्योंकि इसने पुरुषोत्तम मास का अपराध किया था फिर

जब स्नेह द्वारा बार २ मुझे पुकारा ॥१३॥ मेरे नाम ले लेकर पुकार ने लगी–हे कृष्ण ! जगत्पति कृष्ण ! दामोदर ! दयासागर ! नाथ ! लक्ष्मीकान्त ! क्लेश नाशक केशव ॥ १४ ॥ हे हृषीकेश ! मेरे माता, पिता, भ्राता सम्बन्धी सखी सहेली कोई नहीं और न मैं भैन, भानजा, इष्ट, प्राण पति, कुछ भी नही जानती, हे दयालो मेरे लिये तो आप ही सब कुछ हैं ॥ १५ ॥ हे गोविन्द,

यदामयिकृतस्नेहामन्नामान्यवदन्मुहुः ॥ १३ ॥ दामोदरदयासिंधोकृष्णकृष्णजगत्पते ॥ हेनाथहेरमानाथं-केशवक्लेशनाशन ॥ १४ ॥ नमातानतातोनचभ्रातृवर्गोनसख्योनजामिर्नवैभागिनेयः ॥ नबन्धुर्नचेष्टोन-वैप्राणनाथोहृषीकेशसर्वंभवानेवमेऽस्ति ॥ १५ ॥ गोविंदगोपिकानाथदीनबन्धोदयानिधे ॥ दुःशासनपरा-भूतांकिंनजानासिमांप्रभो ॥ १६ ॥ दुःशासनपराभूतातदाद्रुपदनंदिनी ॥ मदीयस्मरणंप्राप्ताविस्मृतापिम-यापुरा ॥ १७ ॥ शीघ्रंगरुडमारुह्यतत्रागत्यस्थितेनवै ॥ पूरितानिमयाराजन्नस्यैवासांस्यनेकशः १८ ॥ सदामयिकृतस्नेहामत्प्राणामत्परायणा ॥ ममातिवल्लभासाध्वीसखीमेप्राणसन्निभा ॥ १९ ॥ तथाप्युपेक्षिते-

गोपीजन वल्लभ, दीन बन्धो, दयानिधे ! मैं दुष्ठ दुःशासन के हाथ पड़ गई हूं प्रभो क्या आप नहीं जान रहे ॥ १६ ॥ श्रीकृष्ण बोले—इस प्रकार दुःशासन के हाथ पड़कर द्रौपदी ने मेरी शरण पकड़ी मैं चाहे उसे भूल भी चुका था ॥ १७ ॥ झट पट गरुड़ पर सवार होकर वहां पहुँच गया। वहां ठहर कर मैंने उसे अनेकों वस्त्रों से पूर्ण कर दिया ॥ १८ ॥ हे भारत वह द्रौपदी मुझ में पूर्ण स्नेह करती है, मुझे अपने प्राण समझती हैं मेरी भक्ति में परायण होकर वह मुझे अत्यन्त प्रिय है सखी

है एवं प्राण समान है ॥ १६ ॥ ऐसा होने पर भी पुरुषोत्तम मास की अवहेलना से मैंने उस की उपेक्षा कर रखी थी। हे राजन्! पुरुषोत्तम के तिरष्कार कर्त्ता को मैं गिरा दिया करता हूं ॥ २० ॥ मुनि देवता आदि सबका यह पुरुषोत्तम सर्व था सेव्य है। सब प्रकार के अर्थ रूप फल देने वाले इस पुरुषोत्तम की फिर मनुष्य क्यों न सेवा करें ॥ २१ ॥ इसी कारण अत्र आने वाले इस

यंसापुरुषोत्तमहेलनात् ॥ पुरुषोत्तमतिरस्कारकर्तारंपातयाम्यहम् ॥ २० ॥ सर्वथामुनिदेवानांसेव्योयंपुरुषोत्तमः ॥ किंपुनर्मानुषाणांतुसर्वार्थफलदायकः ॥ २१ ॥ तस्मादाराधयस्वैनमागामिपुरुषोत्तमम् ॥ वर्षेचतुर्दशेपूर्णेसर्वंतेभविताशुभम् ॥ २२ ॥ व्यलोकिचिकुरव्रातोयैरस्याःपांडुनंदन ॥ तन्नारीणामहंराजन्निर्वापिष्येऽलकान्रुषः ॥ २३ ॥ सुयोधनादिभूपालान्सर्वान्नेष्येयमक्षयम् ॥ सर्वशत्रुक्षयंकृत्वात्वंचराजाभविष्यसि ॥ २४ ॥ नमेक्षीरोदतनयाप्रियानापिहलायुधः ॥ नतथादेवकीदेवीप्रद्युम्नोनापिसात्यकिः ॥ २५ ॥ यादृशामेप्रियाभक्तास्तादृशोनास्तिकश्चन ॥ येनमेपीडिताभक्तास्तेनाहंपीडितःसदा ॥ २६ ॥ द्वेष्योमेनास्तित

पुरुषोत्तम मास की तुम आराधना करो। जब चौदह वर्ष पूर्ण हो जांयगे तब तुम्हारा मंगल होगा ॥ २२ ॥ दुर्योधन आदि जिन दुष्टों ने इस द्रौपदी के केश देखे हैं उन दुष्टों की स्त्रियों के अब बाल मैं उखाड़ने वाला हूं ॥ ॥ २३ ॥ दुर्योधन आदि सब पापी राजाओं को यमपुर भेजकर तथा सब शत्रुओं का क्षय करके तू राजा होगा ॥ २४ ॥ हे राजन् मुझे उतनी प्रिय लक्ष्मी नहीं है, और न भ्राता बलदेव जी प्रिय हैं। न माता देवकी प्रद्युम्न एवं सात्यकि प्रिय है ॥ २५ ॥ जितने कि मुझे अपने भक्त प्रिय

हैं वैसा तो प्रिय मुझे कोई दिखाई नहीं देता। जिसने मेरे भक्त दुःखाए उसने मुझे ही दुःखाया ॥ २६ ॥ उसके समान मेरा और
कोई शत्रु नहीं। यम उसे फल देता है मैं उसे देखता भी नहीं अतः दण्ड नहीं देता। हे पाण्डव ! यमराज ही उसे दण्ड देता
है ॥ २७ ॥ श्रीनारायण बोले—श्रीकृष्ण भगवान् ने इस प्रकार द्रौपदी तथा पान्डवों को आश्वासन दिया, तब द्वारका जाने

त्तुल्योयमस्तस्यफलप्रदः ॥ नावलोक्योमयादुष्टोदंडार्थमपिपांडव ॥ २७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ श्रीकृष्ण
स्तान्समाश्वास्यपांडवान्द्रौपदींतथा ॥कुशस्थलींजिगमिषुरुवाचमधुसूदनः ॥ २८ ॥ राजन्नद्यगमिष्यामिद्वा-
रकांविरहाकुलाम् ॥ वसुदेवोमहाभागोबलदेवोममाग्रजः ॥ २९ ॥ मन्मातादेवकीदेवीगदसांबादयोऽपरे ॥
आहुकाद्याश्चयदवोरुक्मिण्याद्याश्चयाःस्त्रियः ॥ ३० ॥ सर्वेतेऽनिमिषैर्नेत्रैर्मदागमनकांक्षिणः ॥ मामेवचित-
यंत्येवंमद्दर्शनसमुत्सुकाः ॥ ३१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्तवंतंदेवेशंकथंचित्पांडुनंदनाः ॥ हरिप्रयाण
मालक्ष्यतमूचुर्गद्गदाक्षरम् ॥ ३२ ॥ जीवनंनोभवानेवयथावारिजलौकसाम् ॥ पुनर्दर्शनमल्पेनकालेनास्तु-

की इच्छा से कहने लगे ॥ २८ ॥ हे राजन् ! अब द्वारका मेरे विरह से व्याकुल है मैं आज ही द्वारका जा रहा हूं। महा भाग्य
वसुदेव जी तथा बड़े भैया बलदेव जी ॥ २९ ॥ मैया देवकी, और भी गद सांब आहुक आदि यादव एवं रुक्मिणी आदि पत्नियां
॥ ३० ॥ ये सब मेरे मार्ग में पलकें बिछाये मेरे आने की प्रतीक्षा में हैं। मेरे देखने का उन्हें उत्साह है एवं मेरे चिन्तन में हैं
॥३१॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार कहते हुए भगवान् का प्रस्थान देखकर वे पाण्डव गद्गद् वाणी से बोले ॥ ३२ ॥ हे प्रभो!

जलचर जीवों के जीवन रूप जल की भान्ति आप हमारे जीवन हैं। हे जनार्दन ! फिर जल्दी २ दर्शन देने की कृपा करना॥३३॥
हे नाथ ! इस त्रिलोकी में पाण्डवों के तो आप ही नाथ हो इस प्रकार हे स्वामिन् ! आप हमारी रक्षा करें ऐसे वे बोले ॥ ३४ ॥
हे जगत्पते ? हमें कहीं भुला न देना हमारे चित्तरूप भ्रमरों का तो जीवन आपके चरण कमल हैं ॥ ३५ ॥ आप ही हमारे

जनार्दन ॥ ३३ ॥ पांडवानांहरिर्नाथोनान्यःकश्चिज्जगत्त्रये ॥ इत्थंसर्वेवदंत्यद्धातस्मान्नःपाहिसर्वदा ॥३४॥ नविस्मार्यवियंसर्वैत्वदीयाजगदीश्वर ॥ अस्मच्चेतोमिलिंदानांजीवनंत्वत्पदांबुजम् ॥ ३५ ॥ अवलंबनमेवास्तुप्रार्थयामोमुहुर्मुहुः ॥ असकृत्पांडुपुत्रेषुगृणत्स्वेवंयदूद्वहः ॥ ३६ ॥ मंदंमंदंसमारुह्यरथंप्रेमपरिप्लुतः ॥ ययौद्वारवतीमेतान्पराकृत्यानुगच्छतः ॥ ३७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ अथश्रीद्वारकानाथेगतेद्वारवतीतदा ॥ राजापिसानुजस्तप्यंस्तीर्थानिचचचारह ॥ ३८ ॥ पुरुषोत्तमेमनःकृत्वाब्रह्मच्छ्रीभगवत्प्रिये ॥ अनुजानाहकृष्णांचविष्वक्सेनवचःस्मरन् ॥ ३९ ॥ अहोश्रुतमतीवोग्रंमाहात्म्यंपौरुषोत्तमम् ॥ कथंसुखानिलभ्यंतेना-

आश्रय हैं। हम आपकी बार २ प्रार्थना करते हैं लगातार इस प्रकार कहते हुए पाण्डवों के वे श्रीकृष्ण भगवान् ॥ ३६ ॥ प्रेम में विभोर होकर धीरे २ रथ पर सवार होगये। पाण्डवों को कुछ आगे चलकर लौटा दिया आप द्वारका पधारे ॥३७॥ श्रीनारायण बोले श्रीद्वारकानाथ के द्वारका पधार जाने पर राजा युधिष्ठिर तप करते हुए भाइयों के साथ तीर्थ यात्रा करने लगे ॥ ३८ ॥ हे ब्रह्मन् ! श्रीभगवान् के प्रिय पुरुषोत्तम मास का विचार करके राजा श्रीकृष्ण के वचन स्मरण करके अपने भाई तथा द्रौपदी से

बोले ॥ ३६ ॥ हे आताओं ! तुमने पुरुषोत्तम मास का महान् महात्म्य तो सुन लिया है। पुरुषोत्तम की पूजा के बिना भला किस प्रकार सुख प्राप्त हो ॥ ४० ॥ इस भारत वर्ष में वही पुरुष धन्य है वही पूज्य एवं श्रेष्ठ है जिसने पुरुषोत्तम का अनेक नियमों से पूजन किया है ॥ ४१ ॥ इसी प्रकार सर्व तीर्थों पर भ्रमण करते २ पाण्डवों ने पुरुषोत्तम मास लगने पर नियम पूर्वक व्रत

भ्यर्च्यपुरुषोत्तमम् ॥ ४० ॥ सधन्योभारतेवर्षेसपूज्यःश्रेष्ठएवसः ॥ विविधैर्नियमैर्यस्तुपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ॥ ४१ ॥ एवंसर्गेषुतीर्थेषुभ्रमंतःपांडुनंदना ॥ पुरुषोत्तममासाद्यव्रतंचेरुर्विधानतः ॥ ४२ ॥ तदंतेराज्यमतुलमवापुर्गतकंटकम् ॥ पूर्णेचतुर्दशेवर्षेश्रीकृष्णकृपयामुने ॥ ४३ ॥ दृढधन्वानृपःपूर्वंसूर्यवंशसमुद्भवः ॥ पुरुषोत्तममासस्यसेवनान्महतींश्रियम् ॥ ४४ ॥ पुत्रपौत्रसुखंचैवभुक्त्वाभोगाननेकशः ॥ जगामभगवल्लोकमगम्यंयोगिनामपि ॥ ४५ ॥ एतन्मासस्यमाहात्म्यमतुलंमुनिसत्तम ॥ नाहंवक्तुंसमर्थोस्मिकल्पकोटिशतैरपि ॥ ४६ ॥ सूतउवाच ॥ पुरुषोत्तममासस्यकृष्णद्वैपायनादहम् ॥ माहात्म्यंश्रुतवान्विप्राःसोपिवक्तुं-

धारण किया ॥ ४२ ॥ उसके अन्त में चौदह वर्ष पूर्ण होने पर श्रीकृष्ण की पूर्ण कृपा से उन्होंने निष्कण्टक राज्य प्राप्त किया ॥४३॥ इससे पहिले भी सूर्य वंशी राजा दृढ़धन्वा पुरुषोत्तम मास के व्रत के प्रभाव से बड़ी भारी लक्ष्मी ॥ ४४ ॥ तथा पुत्र पौत्र आदि का अनन्त सुख एवं अनेकों भोग भोगकर योगीजनों से अगम्य भगवान् के लोक में प्राप्त हुआ ॥ ४५ ॥ हे मुनिसत्तम ! मैं करोड़ों कल्पों तक भी इस मास का अतुलनीय महात्म्य वर्णन करने में असमर्थ हूं ॥४६॥ सूत बोले—हे ऋषियों ! श्रीवेदव्यास

जीसे श्रीपुरुषोत्तम मास का महात्म्य मैंने सुना है, वे भी वर्णन करने में असमर्थ हैं ॥४७॥ इसका सब महात्म्य तो स्वयं नारायण जानते हैं, अथवा वैकुण्ठाधिपति साक्षात् भगवान् विष्णु जानते हैं ॥ ४८ ॥ ब्रह्मादि देवता जिनकी चरण चौकी को प्रणाम करते हैं उन्हीं गोलोकनाथ प्रभुने जिसे अपना लिया है उस पुरुषोत्तम मास का माहात्म्य देवता भी नहीं जान पाते वहां

शशाकनो ॥ ४७ ॥ अस्यमाहात्म्यमखिलंवेत्तिनारायणःस्वयम् ॥ अथवाभगवान्साक्षाद्वैकुंठनिलयोहरिः ॥ ४८ ॥ ब्रह्मादिदेवानतपादपीठगोलोकनाथेनस्वकीकृतस्य ॥ सर्वंमहात्म्यंपुरुषोत्तमस्यदेवोनजानातिकुतो-मनुष्यः ॥ ४९ ॥ इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तमव्रतोपदेशो-नामद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतमहाभागवदनोवदतांवर ॥ दृढधन्वाकथंप्रापपुरुषोत्तमसेवनात् ॥ १ ॥ सौरा-ज्यंपुत्रपौत्रादींललनांचपतिव्रताम् ॥ कथंचभगवल्लोकमवापयोगिदुर्लभम् ॥ २ ॥ शृण्वतांतेमुखांभोजात्कथा-

मनुष्यों की क्या गणना है ॥ ४९ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां द्वादशोऽध्याय ॥ १२ ॥

ऋषि बोले—सूतजी हे महाभाग सूत ! बोलने में चतुर ! हमें यह सुनाइये–दृढ धन्वाराजाने–पुरुषोत्तम व्रत से किस प्रकार ॥१॥ निष्कण्टक राज्य पतिव्रता सुन्दर पत्नी पुत्र पौत्रादि का अनन्त सुख तथा योगिजन दुर्लभ भगवल्लोक प्राप्त किया ॥ २ ॥

हे परमप्रिय ! जिस प्रकार अमृत पान से तृप्ति नहीं होती वैसे ही आपके मुखारविन्द से कथातत्त्व को सुनते हुए हम अघाते ही
नहीं ॥ ३ ॥ अतः एव इस प्राचीन इतिहास को विस्तार से सुनाएं । हमारे भाग्यों के उदय से ही विधाता ने आपके दर्शन कराये
हैं ॥ ४ ॥सूतजी बोले-हे ब्राह्मणों ! यह इतिहास भी नारायण जी ने नारदजी के प्रति कहा है उसी प्रकारमैं सुनाता हूँ ॥५॥हेमुनि

सारंमुहुर्मुहुः ॥ अलबुद्धिर्नस्तातयथापीयूषपानतः ॥ ३ ॥ अतोविस्तरतोब्रूहिइतिहासंपुरांतनम् ॥ अस्म-
द्भाग्यबलेनैवधात्रासंदर्शितोभवान् ॥ ४ ॥ सूतउवाच ॥ सनातनमुनिर्विप्रानारदायपुरातनम् ॥ इतिहास-
मुवाचेमंसएवप्रोच्यतेधुना ॥ ५ ॥ शृण्वन्तुमुनयःसर्वेचरित्रंपापनाशनम् ॥ यथाधीतंगुरुमुखाद्राज्ञोवैदृढध-
न्वनः ॥ ६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुब्रह्मन्प्रवक्ष्येहंभूपस्यदृढधन्वनः ॥ कथांपुरातनींरम्यांस्वधुनीमिव
पावनीम् ॥ ७ ॥ आसीद्धैहयदेशस्यगोप्ताश्रीमान्महीपतिः ॥ चित्रधर्मेतिविख्यातोधीमान्सत्यपराक्रमः ॥
॥ ८ ॥ तस्यपुत्रोतितेजस्वीदृढधन्वेतिविश्रुतः ॥ ससर्वगुणसंपन्नःसत्यवाग्धार्मिकःशुचिः ॥ ९ ॥ आकर्णा-

जन ! यह चरित्र पाप नाशकहैजैसे कि मैंने गुरु मुखसे सुना है वही राजा दृढधन्वा को कथा सुनिये॥६॥श्रीनारायण बोले-हेब्रह्मन्!
उस दृढ़धन्वा राजाकी प्रचीन एवं गंगाकी भांति पवित्र सुन्दर कथा सुनो ॥ ७ ॥ हेहय देशके शासक श्रीमान् बुद्धिमान् एवं सत्य-
वादीचित्रधर्मानामसे प्रसिद्ध एकराजा हुए हैं॥८॥उन्हीं के पुत्र ही दृढ़धन्वा हुए हैं वे परम तेजस्वी थे । सर्वगुण सम्पन्न सत्यवादी
परम धर्मात्मा एवं सदाचारी थे ॥ ९ ॥ कानों पर्यन्त विशाल तो उसके नेत्र थे विशाल वक्षस्थल था, लम्बी २ भुजाएं थीं ।

वे परम तेजस्वी गुणगणों के साथ बढ़ने लगे ॥ १० ॥ उन्होंने गुरु कुल में अंगों के साथ चारों वेद गुरु के एक बार कथन मात्र से ही अध्ययन कर लिये ॥ ११ ॥ गुरुवर्य को गुरु दक्षिणा देकर उनकी विधि पूर्वक पूजा करके आज्ञा लेकर वे बुद्धिमान् नगर में पिता जी के पास आये ॥ १२ ॥ नगर निवासियों के नेत्रों को आनन्दित करते हुए अपने पिता के पास पहुँच कर उन्हें

पु. मा. ८३ तविशालाक्षःपृथुवक्षामहाभुजः ॥ अवर्धतमहातेजाःसार्धंगुणगणैरसौ ॥ १० अधीत्यसांगान्निगमांश्चतुरो मुदा ॥ सकृन्निगदमात्रेणप्रागधीतानिवस्फुटम् ॥ ११ ॥ दक्षिणांगुरवेदत्वासंपूज्यविधिवच्चतम् ॥ गुरोरनुज्ञयाधीमान्पितुःपुरमजीगमत् ॥ १२ ॥ जनयन्नयनानंदंनिजपत्तनवासिनाम् ॥ चित्रधर्मापितंपुत्रंदृष्ट्वा लेभेपरांमुदम् ॥ १३ ॥ युवानंसर्वधर्मज्ञंप्रजानांपालनेक्षमम् ॥ अतःपरंकिमत्रास्तिसंसारेसारवर्जिते ॥१४॥ आराधयामिश्रीकृष्णंद्विभुजंमुरलीधरम् ॥ प्रसन्नवदनंशांतंभक्तानामभयप्रदम् ॥ १५ ॥ ध्रुवांबरीषशर्यातिययातिप्रमुखान्नृपाः ॥ शिबिश्चरंतिदेवश्चशशबिंदुर्भगीरथः ॥ १६ ॥ भीष्मश्चविदुरश्चैवदुष्यंतोभर- आ. टी. अ. १३

परम आनन्दित कर दिया ॥ १३ ॥ असार संसार में राजा को इससे बढ़ कर और क्या प्रसन्नता हो जो नवयुवक परम धर्मज्ञ प्रजापालन में समर्थ पुत्र आगये हैं ॥ १४ ॥ तब राजाने विचार किया कि अब तो भक्तों को अभय देने वाले परम शान्त प्रसन्न वदन द्विभुज मुरली मनोहर श्रीकृष्ण की आराधना करूं ॥ १५ ॥ जिस प्रकार ध्रुव, अम्बरीष, शर्य्याति, ययाति, आदि बड़े बड़े राजा एवं शिवि, रन्तिदेव, शशबिन्दु, भगीरथ ॥ १६ ॥ भीष्म, विदुर, दुष्यन्त, भरत, पृथु, उत्तानपाद, प्रह्लाद, एवं विभीषण

॥ १७ ॥ इस प्रकार अन्य राजाओंने अनेक भोगों का त्याग करके पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण की आराधना करके नश्वर मर्त्य लोक से सनातन गति प्राप्त की ॥ १८ ॥ अतः एव मैं भी वनमें जाकर श्रीकृष्ण की आराधना में परायण होऊं घर पुत्र पत्नी आदि के स्नेहमय बन्धन को काट देना उचित है ॥ १९ ॥ ऐसा दृढ़ निश्चय करके राज्यभार समर्थ दृढ़धन्वा पर छोड़कर वैराग्य प्राप्त

तोपिवा ॥ पृथुरुत्तानपादश्चप्रल्हादोथविभीषणः ॥ १७ ॥ एतेचान्येचराजानस्त्यक्त्वाभोगाननेकशः ॥ ध्रुवेणध्रुवंप्राप्ताआराध्यपुरुषोत्तमम् ॥ १८ ॥ अतोमयापिकर्तव्यमरण्येहरिसेवनम् ॥ छित्वास्नेहमयंपाशंदारागारसुतादिषु ॥ १९ ॥ इतिनिश्चित्यमनसासमर्थेदृढधन्वनि ॥ धुरंन्यस्यजगामाशुविरक्तःपुलहाश्रमम् ॥ २० ॥ तत्रगत्वातपस्तेपेश्रीकृष्णंमनसास्मरन् ॥ निस्पृहःसर्वकामेभ्योनिराहारोनिरंतरम् ॥ २१ ॥ कियत्कालंतपस्तप्त्वाहरेर्धामजगामसः ॥ दृढधन्वापिशुश्रावस्वपितुर्वैष्णवींगतिम् ॥ २२ ॥ हर्षशोकसमाविष्टो ह्यकरोदौर्ध्वदेहिकम् ॥ पितृभक्त्यामहीपालोविद्वज्जनवचःस्थितः ॥ २३ ॥ पुष्करावर्तकेपुण्येनगरेऽस्यंतशो

हो वे राजा पुलह ऋषिके आश्रम पर चले गये ॥२०॥ वहां सर्व कामनाएं छोड़कर निरन्तर निराहार रहते हुए मनमें श्रीकृष्ण का ध्यान करके तप करने लगे ॥ २१ ॥ चित्र धर्मा इस प्रकार तप करते २ समय पाकर वैकुण्ठ में पहुँच गये। दृढ़ धन्वाने अपने पिताका वैकुण्ठ वास सुना ॥ २२ ॥ हर्ष एवं शोक में आकर विद्वानों के कथनानुसार पितृ भक्त दृढ़धन्वा महाराज ने पिताकी और्ध्वदैहिक क्रिया की ॥२३॥ तव पुष्करावर्तक पवित्रनगर में नीति शास्त्र में निपुण उन्होंने राज्य करना आरम्भ किया ॥ २४ ॥

उनकी परम सुन्दरी विदर्भ राजा की पुत्री गुणवती शीलवती नाम से प्रसिद्ध धर्म पत्नी थी ॥ २५ ॥ उसने परम चतुर चार सुन्दर पुत्र उत्पन्न किये । और सर्व लक्षणों से संयुक्त चारुमती नाम की एक कन्या भी उत्पन्न की ॥ २६ ॥ उनके चारों पुत्र परम माननीय शूरवीर थे जिनके पृथक २ नाम ये थे-चित्रवाक्, चित्रवाह, मणिमान्, चित्रकुण्डल ॥ २७ ॥ इनका पिता दृढ़धन्वा भी

भिते ॥ राज्यंचकारभूपालोनीतिशास्त्रविशारदः ॥ २४ ॥ तस्यशीलवतीभार्यानाम्नायागुणसुन्दरी ॥ विदर्भराजतनयारूपेणाप्रतिमाभुवि ॥ २५ ॥ पुत्रान्सासुषुवेदिव्यांश्चतुरश्चतुराञ्छुभान् ॥ पुत्रींचारुमतींनाम्ना सर्वलक्षणसंयुताम् ॥ २६ ॥ चित्रवाक्चित्रवाहश्चमणिमांश्चित्रकुण्डलः ॥ सर्वेतेमानिनःशूराविख्याता-नामभिःपृथक् ॥ २७ ॥ दृढधन्वागुणैःख्यातःशांतोदांतोदृढव्रतः ॥ रूपवान्गुणवाञ्छूरःश्रीमान्प्रकृति-सुन्दरः ॥ २८ ॥ वेदवेदांगविद्वाग्मीधनुर्विद्याविशारदः ॥ सुनिर्जितारिषड्वर्गःशत्रुसंघविदारणः ॥२९॥ क्षमयापृथिवीतुल्योगांभीर्येसागरोपमः ॥ पितामहसमःसाम्येप्रसादेगिरिशोपमः ॥ ३० ॥ एकपत्नी

सर्व गुण सम्पन्न थे, परमशान्त दानवीर दृढ़व्रती, गुणवान् स्वभाव से सुन्दर ॥ २८ ॥ वेद वेदांग ज्ञाता, बोलने में चतुर, धनुर्विद्या में निपुण थे, उन्होंने काम, क्रोध, लोभ, मद, मात्सर्य आदि छः शत्रुओं को जीत लिया था वे शत्रुओं को नाश करने वाले थे ॥ २९ ॥ वे क्षमा में पृथ्वी के समान थे, गंभीरता में समुद्र के समान, समानता में ब्रह्माके समान एवं कृपा करने में महादेव

के समान थे ॥ ३० ॥ एक पत्नी के व्रत में तो वे दूसरे श्रीरघुनाथजी थे । अत्यन्त उग्र पराक्रम में तथा सत् धर्म में दूसरे कार्तिक स्वामी थे ॥ ३१ ॥ श्रीनारायण बोले—एक बार वे राजा रात्रि को शयन कर रहे थे उन्हें विचार उत्पन्न हुआ इतना वैभव किस पुण्य से प्राप्त हुआ होगा ॥ ३२ ॥ वे सोचने लगे—मैंने कोई तप भी नहीं किया, न दान किया है न कहीं हवन किया है ।

व्रतधरोरघुनाथइवापरः ॥ अत्युग्रवीर्यःसद्धर्मेकार्तवीर्यइवापरः ॥ ३१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एक-
दानिशिसुप्तस्यचिंतासीत्तस्यभूपतेः ॥ अहोऽयंवैभवःकेनपुण्येनमहताभवेत् ॥ ३२ ॥ नमयाचतपस्तप्तं नद-
त्तंनहुतंक्वचित् ॥ कमिदंपरिपृच्छामिममभाग्यस्यकारणम् ॥ ३३ ॥ एवंचिंतयतस्तस्यरजनीविरतिंगता ॥
ब्राह्मे मुहूर्तेउत्थायस्नानंकृत्वायथाविधि ॥ ३४ ॥ उपस्थायार्कमुद्यंतंसंतर्प्यभगवत्कलाः ॥ दत्त्वादानानिवि-
प्रेभ्योनमस्कृत्वाऽश्वमारुहत् ॥ ३५ ॥ ततोरण्यंजगामाशुमृगयासक्तमानसः ॥ मृगान्वराहाञ्छार्दूलान्
जघानगवयान्बहून् ॥ ३६ ॥ कश्चिन्मृगोहतोरण्येबाणेनदृढधन्वना ॥ वनाद्वनांतरंयातोबाणमादायसत्व-

अब किस से जाकर अपने भाग्यों का कारण पूछूं ॥ ३३ ॥ इसी प्रकार के विचार में ही उनकी रात बीती । प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठकर विधि से स्नान आदि किया ॥३४॥ सन्ध्यावन्दन करके उदय होते हुए सूर्य को अर्घ्य देकर भगवत्कलाओं की पूजा करके ब्राह्मणों को नमस्कार तथा दान देकर घोड़े पर सवार हुए ॥ ३५ ॥ शिकार खेलने के लिये वे वन में पहुंचे । मृग, वाराह, सिंह, एवं बहुत से हिंशक पशुओं का शिकार किया ॥ ३६ ॥ एक मृग को दृढधन्वा महाराज ने ज्यों ही बाण मारा तब

वह बाण विद्ध होकर उस वन से जल्दी २ दूसरे वनमें भागा ॥३७॥ उसकी मार्ग पर पड़ी हुई रुधिर बिन्दुओं के अनुसार राजाने भी पीछा किया, मृग कहीं जाकर छुप गया राजा वन में फिरते रहे ॥ ३८ ॥ फिरते २ राजा प्यास से व्याकुल हो गये, सामने सागर तुल्य एक सरोवर उन्हें दिखाई दिया। वहाँ जल जाकर पान किया फिर उसके किनारे पर आये ॥ ३९ ॥ वहां राजाने

रम् ॥ ३७ ॥ शोणितस्रुतिमार्गेणराजाप्यनुययौमृगम् ॥ मृगःकुत्रापिसंलीनोराजाबभ्रामतद्वनम् ॥३८॥ तृषाक्रांतःसकासारंददर्शसागरोपमम् ॥ तत्रगत्वाशुपीत्वासौपानीयंतीरमागतः ॥ ३९ ॥ ततोददर्शन्यग्रोधं-घनच्छायंमहातरुम् ॥ तज्जटायांनिबद्ध्याश्वंनिषसादमहीपतिः ॥ ४० ॥ तत्रागमत्खगःकश्चित्कीरःपरम-शोभनः ॥ मानुषीमीरयन्वाणीमतुलांनृपमोहिनीम् ॥ ४१ ॥ शुकःपपाठसुश्लोकमेकमेवपुनःपुनः ॥ संबोध्य दृढधन्वानमेकाकिनमुपस्थितम् ॥ ४२ ॥ विद्यमानातुलसुखमालोक्यातीवभूतले ॥ नचिंतयसितत्त्वंत्वंत-त्कथंपारमेष्यसि ॥ ४३ ॥ वारंवारमिदंपद्यं पपाठनृपतेःपुरः ॥ श्रुत्वातस्यवचोराजामुमुदेमुमुहेपिच ॥४४॥

घनी छाया दार बड़े भारी बढ़ के वृक्ष को देखा। उसकी जटा में घोड़ा बान्धकर राजा बैठ गये ॥ ४० ॥ उस वृक्ष पर परमसुन्दर एक तोता पक्षी आकर बैठा। वह राजा को मोहित करने वाली मनुष्यों जैसी वाणी में ॥ ४१ ॥ एक सुन्दर श्लोक एकाकी बैठे हुए राजा दृढधन्वा को सम्बोधन करके बार २ पढ़ने लगा ॥ ४२ ॥ उस श्लोक का तात्पर्य यह था कि हे राजन्! इस संसारमें अनन्त सुख प्राप्त हैं, उन्हें देखकर तू परमतत्त्व का विचार नहीं कर रहा, इस संसार से भला किस प्रकार पार पहुंचोगे ॥ ४३ ॥

राजाके सामने वह बार २ इस श्लोक को पढ़ने लगा। सुनकर राजा प्रसन्न भी हुए एवं मोहित भी ॥ ४४ ॥ विचार करने लगे-यह तोता नारियल के समान अगम्य कठिनता से समझ में आने वाले सार पूर्ण एक श्लोक को बार २ पढ़ते २ क्या कह रहा है ॥ ४५ ॥ क्या ये वेद व्यासजी के पुत्र श्री शुकदेवजी तो नहीं जो संसार सागर में निमग्न महा मूर्ख मुझ श्रीकृष्ण के

किमेतदुक्तवान्कीरएकंपद्यं पुनः पुनः ॥ नारीकेलमिवागम्यंदुर्बोधंसारसंभृतम् ॥४५॥ किंवानायंभवेत्कृष्णद्वै-पायनसुतःपरः ॥ श्रीकृष्णसेवकंमूढंमग्नंसंसारसागरे ॥ ४६ ॥ विष्णुरातमिवोद्धर्तुं कृपयामाससमागतः ॥ इतिचिंतयतस्तस्यतत्सेनासमुपागता ॥४७॥ कीरस्त्वदर्शनंप्राप्तोबोधयित्वानराधिपम् ॥ राजास्वपुरमागत्य-कीरवाक्यमनुस्मरन् ॥ ४८ ॥ वाच्यमानोपिनावोचद्विनिद्रस्त्यक्तभोजनः ॥ राज्ञीरहःसमागत्यराजानंपर्य-पृच्छत ॥ ४९ ॥ गुणसुंदर्युवाच ॥ भोभोपुरुषशार्दूलदौर्मनस्यमिदंकुतः ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठभूपालभुंक्ष्व-

सेवक का ॥ ४६ ॥ परीक्षित् राजाकी भ्रान्ति उद्धार करने के लिये तो नहीं आये। इस प्रकार वे बार २ सोचने लगे। तब वहां सेना भी आगई ॥ ४७ ॥ वह तोता तो राजा को बोध देकर उड़ गया। और राजा अपने नगर में आये। तोते के वचन स्मरण करते हुए ॥४८॥ राजाने खाना, पीना, बोलना, सोना, सब कुछ छोड़ दिया ॥ तब रानी ने एकान्त में जाकर राजा से पूछा॥४९॥ गुण सुन्दरी बोली--हे पुरुषसिंह राजन्! आपको इस प्रकार की उदासीनता कहां से प्राप्त हुई है। उठो उठो भोग पदार्थ प्राप्त करो

बातचीत करो ॥ ५० ॥ इस प्रकार रानी ने बहुत ही अनुनय विनय की राजा कुछ भी न बोले, उन्हें तो देवताओं की समझ में न आने वाले तोते के तथ्य वचन स्मरण हो रहे थे ॥ ५१ ॥ उनकी धर्म पत्नी ने दीर्घ निश्वास छोड़ा पति दुःख में अत्यन्त दुःखित होगई । वह सोचते २ पति की चिन्ता का कारण न समझ सकी ॥ ५२ इस प्रकार सोच में पड़े २ राजाको भी बहुत

भोगान्वचोवद ॥ ५० ॥ एवंस्त्रियानुनीतोपिनकिंचिदवन्नृपः ॥ स्मरञ्छुकवचस्तथ्यंदुर्ज्ञेयममरैरपि ॥५१॥ सापिबालाविनिःश्वस्यभर्तृदुःखातिपीड़िता ॥ नबुबोधनिजस्वामीचिंताकारणमुत्कटम् ॥ ५२ ॥ एवंचिंता-ग्निमग्नस्यराज्ञःकालःकियान्गतः ॥ संदेहसागरोत्तारेहेतुनैवाभिपश्यत ॥ ५३ ॥ नारदउवाच ॥ इतिचिंत-यतोधरापतेर्वदजातंदृढधन्वनश्चकिम् ॥ विमलंचरितंहिवैष्णवंकलुषंहंतिमनाकूछ्रुतंमुने ॥ ५४ ॥ इतिश्री वृहन्नारदीयपुराणे पुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वनोपाख्यानेदृढधन्वनोमनःखेदोनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

सा समय व्यतीत होगया । उन्हें सनेह समुद्र से निकलने का कोई भी कारण दृष्टिगत न हुआ ॥ ५३ ॥ नारद बोले—हे मुने! इसी चिन्ता में आतुर दृढ़धन्वा राजाके आगे का वृत्त सुनाइये, फिर क्या हुआ । वैष्णवों का चरित्र परम निर्मल होता है उसे थोड़ा भी सुना जाय तो पाप नाश हो जाते हैं ॥ ५४ ॥

इति श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

श्रीनारायण बोले--इस प्रकार वे राजा अत्यन्त चिन्तातुर हो रहे थे उनके घर में जिन्होंने श्रीराम चरित लिखकर अद्भुत काव्य रचना की है वे ही वाल्मीकि ऋषि आये ॥ १ ॥ राजाने उन्हें दूर से ही देख लिया तब संभ्रम के साथ उठकर खड़े हो गये पास जाकर अत्यन्त भक्तिपूर्वक उनके चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया ॥ २ ॥ उनका पूजन करके उत्तम आसन पर बिठाया,

श्रीनारायणउवाच ॥ अथचिंतातुरस्यास्यगृहंवाल्मीकिराययौ ॥ योरामचरितंदिव्यंचकारपरमाद्भुतम् ॥ १ ॥ दूरादालोक्यभूपालःसमुत्थायससंभ्रमम् ॥ अनीनमत्तच्चरणौदंडवद्भक्तिसंयुतः ॥ २ ॥ संपूज्यस्थापयामासतमृषिंपरमासने ॥ पादावंकगतौकृत्वाकराभ्यांसमलालयत् ॥ ३ ॥ पादावनेजनीरापःशिरसाधारयन्मुदा ॥ उवाचस्निग्धयावाचास्मरन्कीरवचोनृपः ॥ ४ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ भगवन्कृतकृत्योहंभाग्यवानस्मिसांप्रतम् ॥ अद्यमेसफलंजन्मह्यद्यार्थोधिगतःप्रभो ॥ ५ ॥ श्रुतंमेसफलंजातंयद्भवानक्षिगोचरः ॥ किंवर्ण्यमेमहद्भाग्यंजगत्पावनपावन ॥ ६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्त्वामुनिशार्दूलंविरराससभूपतिः ॥

उनके चरण अपनी गोदी में लेकर अपने दोनों हाथों से सहलाने लगा ॥ ३ ॥ फिर उनके चरणों को धोया, वह धोवन जल परम प्रसन्नता से अपने माथे पर चढ़ाया, फिर उस तोते की वाणी स्मरण करते हुए राजा मधुर वाणी द्वारा कहने लगा ॥ ४ ॥ दृढ़धन्वा बोला—हे भगवन् ! आज मैं कृतकृत्य हूं, मेरे भाग्यों का उदय हुआ है। मेरा जन्म भी आज सफल हुआ है एवं आज ही मेरे मनोरथ पूर्ण हुए हैं ॥ ५ ॥ मेरा स्वाध्याय श्रवण आज ही सफल है जो आपके साक्षात् दर्शन हुए हैं। हे

जगत् पवित्रकर्ता पवित्र स्वरूप मैं अपने भाग्योंकी महत्ताका क्या वर्णन करूं ॥६॥ श्रीनारायण बोले-इस प्रकार उन श्रेष्ठ मुनि से प्रार्थना करके वे राजा मौन हो गये । श्रीवाल्मीकिजी ने भी अत्यन्त नम्रता से पूर्ण उस राजा को देखा ॥ ७ ॥ अपनी प्रसन्नता दिखाते हुए हर्ष से मुनि जी उस राजा से बोले—हे राजन् ! धन्य हो इस प्रकार की नम्रता हे श्रेष्ठ नृप ! तुम्हारे में शोभित है ॥ ८ ॥ राजन् ! तुम चिन्तातुर दिखाई देते हो अपने मनोगत भाव शीघ्र स्पष्ट कर कहो जो कुछ भी कहना चाहते

वाल्मीकिरपितंदृष्ट्वाराजानंविनयान्वितम् ॥ ७ ॥ उवाचपरमप्रीतोहर्षञ्जनयतंमुनिः ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ साधुसाधुनृपश्रेष्ठत्वय्येतदुपपद्यते ॥ ८ ॥ चिंतातुरःकथंराजन्वदसर्वंमनोगतम् ॥ किंचिद्वक्तुंस्पृहातेस्ति-तद्वदस्वमहामते ॥ ९ ॥ दृढधन्वोवाच ॥ भवदीयपदांभोजकृपयामेसुखंसदा ॥ परंत्वेकोमहान्विद्वन्संदेहो हृदयेमम ॥ १० ॥ तमपाकुरुशल्यंत्वंवन्यकीरमुखोद्गतम् ॥ कदाचिन्मृगयाकामोगतोहंगहनेवने ॥११॥ श्रमन्नपश्यंकासारंतत्रपीतंजलंमया ॥ श्रमापनोदनाकांक्षीमहान्यग्रोधमाश्रितः ॥ १२ ॥ स्निग्धच्छायंमुनि-

हो उसमें विलम्ब न करो ॥ ९ ॥ दृढ़धन्वा बोले—हे स्वामिन आपके चरणों के प्रताप से मुझे सदा सर्व प्रकार का सुख है,किन्तु हृदय में एक बड़ा भारी संदेह आकर उत्पन्न हुआ है ॥ १० ॥ वह तीर की तरह चुभ रहा है कृपा करके उसे हटाइये । वह संशय बनमें किसी तोते के मुखसे कुछ सुनकर उत्पन्न हुआ है । सुनिये एक बार में मृगया करने को घने वन में चला गया था ॥ ११ ॥ वहां भ्रमण करते २ मैंने एक तालाब देखा, उस पर चला गया, जाकर जल पिया, थक गया था, कुछ सुस्ताने के

लिये मैं एक बढ़ वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गया ॥ १२ ॥ वह घना वृक्ष था, उसकी छाया मन एवं नयनों को शीतल करने वाली अत्यन्त स्निग्ध थी, वहाँ एक तोता बैठा था, उसे देखकर मन अतीव प्रसन्न हुआ ॥ १३ ॥ मैं उस तोते को प्रेम से देखने लगा, उस समय उसने मेरी तरफ मुंह करके एक श्लोक पढ़ दिया ॥ १४ ॥ वह पढ़ने लगा कि–इस पृथ्वी पर तुझे अतुलनीय

विडंमनोनयननंदनम् ॥ तत्रापश्यंस्थितंकीरंमनोमोदविधायकम् ॥ १३ ॥ दत्तदृष्टिरहंयावज्जातस्तस्मिन्प तत्रिणि ॥ तावन्मांसंमुखीभूयश्लोकमेकंपपाठह ॥ १४ ॥ विद्यमानातुलसुखमालोक्यातीवभूतले ॥ नचिंतयसितत्वंत्वंतत्कथंपारमेष्यसि ॥ १५ ॥ इतिवाचःशुकेनोक्ताआकर्ण्याहंसुविस्मितः ॥ नतज्जानाम्यहंब्रह्मन् किमुवाचहरिच्छदः ॥ १६ ॥ इमंमेहार्दसंदेहंभवानुच्छेत्तु मर्हति ॥ ममराज्यसुखंपुत्राश्चत्वारश्चारुदर्शनाः ॥ ॥ १७ ॥ पत्नीपतिव्रतारम्यागजाश्वरथपत्तयः ॥ समृद्धिरतुलाब्रह्मन्केनपुण्येनमेऽधुना ॥ १८ ॥ एत-

सुख प्राप्त हैं उन्हें देखकर तू तत्त्व का चिन्तन नहीं कर रहा, भला किस प्रकार पार पहुंचेगा ॥ १५ ॥ यह उस तोते से पठित श्लोक था, उसे सुनकर मैं अत्यन्त आश्चर्य में पड़गया । हे ब्रह्मन् ! उस तोते ने क्या कहा, यह मैं भली भाँति नहीं जान सका ॥ १६ ॥ हे भगवन् यही मेरे हृदय का संदेह है कृपा करके इसका निवारण करें । मुझे राज्य का सुख भी है, और अति सुन्दर चार पुत्र भी हैं ॥ १७ ॥ पत्नी भी सुन्दरी तथा पतिव्रता मिली है, हाथी, घोड़े रथें पत्ति आदि समृद्धि भीअतुलनीय प्राप्त है। हे ब्रह्मन् यह सब किस पुण्य से मुझे इस समय मिला हैं ॥ १८ ॥ यह सब विचार करके संक्षेप से कहें । इस प्रकार राजा के

वचन सुनकर मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि जी ॥ १६ ॥ प्राणायाम चढ़ाकर एक घण्टाभर ध्यान में स्थित रहे। तब उन्हें हाथ में आये हुए आंवले की तरह विश्व दिखाई देने लगा, भूत, भविष्य, वर्तमान सब को जान गये ॥ २० ॥ देखकर हृदय में निश्चय करके राजाके प्रति वाल्मीकिजी बोले-हे राजसिंह! अब अपने पूर्व जन्म का चरित्र सुनो ॥ २१ ॥ तुम पहिले जन्म में हे राजेन्द्र! द्रविड़

त्सर्वंसमासेनविचार्यवक्तुमर्हसि ॥ श्रुत्वावाक्यानिभूपस्यवाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥ १६ ॥ प्राणायामपरोभू-त्वामुहूर्तंध्यानमास्थितः ॥ करामलकवद्विश्वंभूतंभव्यंभवच्चयत् ॥ २० ॥ विलोक्यहृदिनिश्चत्यराजानंप्रत्यु वाचसः ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ शृणुभूपतिशार्दुलप्राग्जन्मचरितंतव ॥ २१ ॥ पुराजन्मनिराजेंद्रभवान्द्रवि-डदेशजः ॥ द्विजःकश्चित्सुदेवाख्यस्ताम्रपर्णीतटेवसन् ॥ २२ ॥ धार्मिकःसत्यवादीचयथालाभेनतोषवान् ॥ वेदाध्ययनसंपन्नोविष्णुभक्तिपरायणः ॥ २३ ॥ अग्निहोत्रादियागैश्चतोषयामासतंहरिम् ॥ सदैवंवर्तमान-स्यभार्यासीद्वरवर्णिनी ॥ २४ ॥ गौतमीतिसुविख्यातागौतमस्यसुताशुभा ॥ पतिंपर्यचरत्प्रेम्णाभवानीवभवं

देश में सुदेव नाम करके कोई ब्राह्मण थे, ताम्रपर्णी नदी के किनारे तुम्हारा निवास था ॥ २२ ॥ उस समय तुमको जो भी प्राप्त हो जाय उसी पर सन्तोष करने वाले धार्मिक, एवं सत्य वक्ता थे, वेदों के स्वाध्याय से सम्पन्न थे, सर्वदा विष्णु भक्ति में तत्पर रहते थे ॥ २३ ॥ अग्नि होत्र आदि अनेकों यज्ञों के द्वारा तुमने विष्णु भगवान् को अत्यन्त सन्तुष्ट किया, गृहस्थ धर्म में गृहिणी भी तुमको अति सुन्दरी तथा गुणवती मिली थीं ॥ २४ ॥ वह गौतम ऋषि की कन्या थी, गोमती उसका शुभ नाम था,

शंकर भगवान् की सेवा करने वाली पार्वती की तरह वह प्रेम से पति की सेवा करती थी ॥२५॥गृहस्थ धर्म का जन्म उस में तुम धर्म पूर्वक पालन कर रहे थे, इसीप्रकार बहुत सा समय व्यतीत हुआ, किन्तु घर में संतति नहीं हुई ॥ २६ ॥ एक वार तुम आसन पर बैठे हुए थे, पत्नी सेवा कर रही थी। उस समय बहुत दुःखी होकर गद्‌गद् वाणी द्वारा ब्राह्मण शरीर में तुमने कहा

प्रभुम् ॥ २५ ॥ गृहमेधविधौतस्यवर्तमानस्यधर्मतः ॥ व्यतीतःसुमहान्कालःप्रापासौसंततिंनहि ॥ २६ ॥ एकदासनसंविष्टःसेव्यमानःस्वकांतया ॥ उवाचवचनंविप्रोविषण्णोगद्‌गदाक्षरम् ॥ २७ ॥ अयिसुन्दरिसंसारे सुखंनास्तिसुतात्परम् ॥ लोकांतरसुखंपुण्यंतपोदानसमुद्भवम् ॥ २८ ॥ सन्ततिःशुद्धवंश्याहिपरत्रेहचशर्मणे तमप्राप्यवरंपुत्रंजीवितंममनिष्फलम् ॥ २९ ॥ नलालितोमयापुत्रोवेदार्थोनप्रबोधितः ॥ नोद्वाहश्चकृतस्त- स्यवृथाजन्मगतंमम ॥ ३० ॥ सद्योमेमृतिरेवास्तुनह्यायुश्चप्रियंमम ॥ इत्थंप्रियवचःश्रुत्वासुंदरीखिन्नमा-

॥ २७ ॥ हे सुन्दरि पुत्र से अधिक और कोई सुख इस संसार में नहीं है तप दान आदि पुण्य के द्वारा तो दूसरे लोक में सुख होता है ॥ २८ ॥शुद्ध वंशोत्पन्न सन्तति तो इस लोक में तथा परलोक में कल्याण के लिये होती है। अतः उत्तम पुत्र को प्राप्त न करने से मेरा जन्म भी निरर्थक है॥२९॥मैंने पुत्र पाकर उसे लाड़ लड़ाया नहीं और न उसे वेदों के अर्थ पढ़ाये अपनी आँख से उसका विवाह भी न देखा इसी कारण मेरा सारा जन्म ही व्यर्थ गया ॥ ३० ॥ इससे तो उत्तम है मैं शीघ्र मर जाऊं मुझे जीना

अच्छा नहीं लग रहा। इस प्रकार पतिके वचन सुनकर पत्नी भी उदास होगई ॥३१॥ तब वह धैर्य धारण करके मधुर वाणी से
आश्वासन देती हुई पति प्रेम से परिपूर्ण सुन्दर वचन बोली ॥ ३२ ॥ गौतम ने कहा—हे प्राण प्रिय ! आप भगवद्भक्त हैं
पूर्ण विद्वान् हैं इस समय आप इस प्रकार के तुच्छ वचन क्यों कह रहे हैं, आप जैसे विद्वानों को ऐसा कहना उचित नहीं ॥३३॥
नसा ॥ ३१ ॥ समाश्वासयितुं धीराप्रियवाक्यविशारदा ॥ अवीवदद्वचःसौम्यंप्रियप्रेमपरिप्लुता । ३२ ॥
गौतम्युवाच ॥ मामाप्राणेश्वरब्रूहितुच्छवाक्यानिसांप्रतम् ॥ भवद्विधाभागवतानैवमुह्यंतिसूरयः ॥ ३३ ॥
सत्यधर्मपरोसित्वंजितःस्वर्गस्त्वयाविभो ॥ कथंपुत्रैःसुखावाप्तिर्ज्ञानिनस्तवसुव्रत ॥ ३४ ॥ चित्रकेतुःपुराब्र-
ह्मन्पुत्रशोकेनतापितः ॥ सनारदेनांगिरसाभ्येत्यसंतारितोभवत् ॥ ३५ ॥ तथांगराजादुष्पुत्राद्वेनाद्वनम-
गान्निशि ॥ तथातेसंततिःस्वामिन्दुःखदाचभविष्यति ॥ ३६ ॥ तथापितवसत्पुत्रलालसाचेत्तपोधन ॥
आराधयजगन्नाथंहरिंसर्वार्थदंमुदा ॥ ३७ ॥ यमाराध्यपुराब्रह्मन्कर्दमःपुत्रमाप्तवान् ॥ सांख्याचार्यस्तुतंदेवं
सत्य धर्म में आप परायण हैं इसी से स्वर्ग पर भी आपकी विजय है। आप इतने ज्ञानवान् होते हुए पुत्र सुख के लिये इतने क्यों
तरस रहे हैं॥ ३४ ॥ हे ब्रह्मन् ! चित्र केतु राजा पहिले पुत्र के शोक से अत्यन्त संतप्त था अंगिरा एवं नारदजी ने आकर उसे
समझाया ॥ ३५ ॥ उसी प्रकार राजा अंग भी कुपुत्र वेन से दुःखी होकर रात को बनमें निकल गया। उसी प्रकार हे स्वामिन् ।
कही ऐसा न हो कि आपकी संतान भी दुःखदायक निकले ॥ ३६ ॥ हे तपोधन ! फिर आपको श्रेष्ठ पुत्र पाने की इच्छा उग्र

हो तो जगत् [illegible] ॥ जिनकी आराधना करके कर्दम ऋषिने भी पुत्र पा लिया था जिसका नाम योगिराज कपिल देव था, सांख्याचार्य जिसकी स्तुति करते थे ॥ ३८ ॥ धर्म पत्नी के इस प्रकार बचन सुनकर वह ब्राह्मण शिरोमणि निश्चय करके पत्नी के साथ ताम्र पर्णी नदी के किनारे पहुँचा॥ ३९॥

कपिलंयोगिनांवरम् ॥ ३८ ॥ धर्मपत्न्यावचश्चेत्थंश्रुत्वाविप्रशिरोमणिः ॥ निश्चित्यैवंतयासार्धंताम्रपर्णीतटंगतः ॥ ३९ ॥ स्नात्वाथविरजेपुण्येचचारपरमंतपः ॥ शुष्कपर्णजलाहारःपंचमेपंचमेदिने ॥ ४० ॥ चत्वार्यब्दसहस्राणिगतान्येवंतपोनिधेः ॥ तस्यैतत्तपसाब्रह्मंस्त्रयोलोकाश्चकंपिरे ॥ ४१ ॥ अत्युग्रंतत्तपोदृष्ट्वा भगवान्भक्तवत्सलः ॥ प्रादुर्बभूवतरसागरुडोपरिसंस्थितः ॥ ४२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ तंदृष्ट्वानवजलदोपमंमुरारिंदोर्दंडैर्जगवदनत्क्षमैश्चतुर्भिः ॥ संलक्ष्यंमुदितमुखंसुदेवशर्मासाष्टांगंनतिमकरोन्मुदामुकुन्दम् ॥

वहां जाकर परमपवित्र पुण्य तीर्थ पर स्नान किया, उसके अनन्तर कठोर तप करने लगा आहार तो उसका पांचवे दिन शुष्कपत्ते तथा जलपान था॥४०॥ इस प्रकार तप करते २ उस तपोनिधि को चर सहस्र वर्ष बीत गये। उसके तप द्वारा हे ब्रह्मन् तीनों लोक काम्पने लगे ॥ ४१ उसका इतना उग्र तप देखकर भक्तों पर दया करने वाले भगवान् गरुड़ पर चढ़कर झट वहां प्रकट होगये ॥ ४२ ॥ श्रीनारायण बोले- हे महर्षे अपूर्व प्रकाश जगमगा उठा, जल पूर्ण नये मेघ के समान श्याम सुन्दर, जगत्

के पालन रक्षण में समर्थ, चार भुजाओं वाले हास्ययुक्त मुखार विन्द वाले, मुरारि के साक्षात् दर्शन करके सुदेव शर्मा ब्राह्मण खड़े होगये बड़ी प्रसन्नता से मुकुन्द भगवान् को साष्ठाङ्ग दण्डवत् प्रणाम किया ॥ ४३ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्दशोऽध्याय ॥ १४ ॥

॥ ४३ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

श्रीनारायणउवाच ॥ ततस्तुष्टावतंदेवंश्रीकृष्णंभक्तवत्सलम् ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वासुदेवोगद्गदाक्षरम् ॥ १ ॥ नमस्तेदेवदेवेशत्रैलोक्याभयदप्रभो ॥ सर्वेश्वरनमस्तेस्तुत्वामहंशरणंगतः ॥ २ ॥ पाहिमांपरमेशानशरणागतवत्सल ॥ जगद्वंद्यनमस्तेस्तुप्रपन्नाभयभंजन ॥ ३ ॥ जयस्वरूपंजयदंजयशंजयकारणम् ॥ विश्वाधारंविश्वसंस्थंविश्वकारणकारणम् ॥ ४ ॥ विश्वैकरक्षकंदिव्यंविश्वघ्नंविश्वपंजरम् ॥ फलबीजंफ-

श्रीनारायण बोले—हे नारदजी ! तब सुदेव शर्मा हाथ जोड़कर गद्गद् वाणी द्वारा भक्त वत्सल श्रीकृष्ण भगवान् की स्तुति करने लगे ॥ १ ॥ हे देवेश तीनो लोकों को अभय देने वाले प्रभो सब के ईश्वर आपको नमस्कार हो ! मैं आपकी शरण हूं ॥ २ ॥ हे परम ईशान ! शरणागत पुरुषों की रक्षा करने वाले, जगत् के वन्दनीय अनेकों संकटों से रक्षक भय भंजक, मेरी रक्षा करो ॥ ३ ॥ आप जय देने वाले साक्षात् जयरूप हो जय के कारण भी आप हो सारे विश्व के आश्रय, विश्व में ही स्थित, विश्व के कारणों के भी कारण हो ॥ ४ ॥ आप विश्व के एक ही रक्षक हो, दिव्यरूप हो, विश्व के संहारक भी आप हो,

विश्व के निवासार्थ पञ्जररूप हो फलों के मूलरूप, फलदाता फल के आधार बीज फल, सब आप हो ॥ ५ ॥ तेज के स्वरूप, तेज के दाता, तेजस्वियों में श्रेष्ठ हे भगवन् आप ही हो, हे दीन दयालो ! हे कृष्ण, हे वासुदेव, मैं आपकी बन्दना करताहूँ॥६॥ हे जगत् के नाथ ब्रह्मा आदि देवता भी आपकी स्तुति करने में समर्थ नहीं, मैं तो मनुष्य हूं हे जनार्दन, मन्द तथा अल्प बुद्धि

लाधारंफलमूलंफलप्रदम् ॥ ५ ॥ तेजःस्वरूपंतेजोदंसर्वतेजस्विनांवरम् ॥ कृष्णंविष्णुवासुदेवंनंदेहंदीनवत्स-
लम् ॥ ६ ॥ नत्वांब्रह्मादयोदेवाःस्तोतुःशक्ताजगत्प्रभो ॥ कथंमंदोमनुष्योहमल्पबुद्धिर्जनार्दन ॥ ७ ॥
अतिदुःखतरंदीनंत्वद्भक्तं मामुपेक्षसे ॥ तत्कथंलोकबंधुत्वंप्रभोलोकेवृथागतम् ॥ ८ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥
इत्यभिष्टूयभूमानंद्विजस्तस्थौहरेःपुरः ॥ तदाकर्ण्यहरिर्वाक्यमुवाचजलदस्वनः ॥ ९ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥
सम्यक्संपादितंवत्सयत्त्वयाचरिततपः ॥ किमिच्छसिमहाप्राज्ञतपोधनवदस्वमे ॥ १० ॥ तत्तोहंवितरिष्यामि-

होते हुए आपकी स्तुति कैसे कर सकता हूं ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! मैं अत्यन्त दुःखी एवं दीन हूँ पर हूं आपका भक्त, मेरी उपेक्षा आप क्यों करते हो, लोक बन्धु तो आपका नाम है क्या उसे व्यर्थ करोगे ॥ ८ ॥ वाल्मीकिजी बोले-हे राजन् इस प्रकार उस ब्राह्मण जन्म में तुमने भगवान् के सम्मुख स्तुति की, उसे सुनकर मेघ की तरह गंभीर वाणी द्वारा हरि कहने लगे ॥ ९ ॥ श्रीहरि बोले— हे वत्स ! तुमने तप भली भान्ति कर लिया है, हे बुद्धिमान् तपस्विन् ! मुझे कहो तुम क्या चाहते हो ॥ १० ॥ मैं तुम्हारे तप से सन्तुष्ट हूं इस प्रकार का तपरूप कर्म पहिले किसी ने भी नही किया, मैं तुम्हें मन

मांगी वस्तु दूंगा ॥ ११ ॥ सुदेव बोला—हे नाथ, दीनबन्धो, दयानिधे ! यदि आप प्रसन्न हैं तो पुराण पुरुषोत्तम विष्णो मुझे श्रेष्ट पुत्र प्रदान करें ॥ १२ ॥ हे हरे ! पुत्र के बिना गृहस्थ शून्य है, मुझे वह भाता नहीं । इस प्रकार ब्राह्मण के बचन सुनकर ईश्वर हरि कहने लगे ॥ १३ ॥ श्री हरि बोले—हे द्विज ! एक पुत्र न मांगों बाकी जो चीज अदेय भी होगी मैं दे दूंगा । हे

संतुष्टस्तपसातव ॥ एतादृशंमहत्कर्मनकेनापिकृतंपुरा ॥ ११ ॥ सुदेवउवाच ॥ यदिप्रीतोसिहेनाथदीनबंधो दयानिधे ॥ सत्पुत्रंदेहिमेविष्णोपुराणपुरुषोत्तम ॥ १२ ॥ हरेपुत्रंविनाशून्यंगार्हस्थ्यंमेनरोचते ॥ इतिविप्रवचःश्रुत्वाजगादहरिरीश्वरः ॥ १३ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ अदेयमपितेसर्वंदास्येपुत्रंविनाद्विज ॥ तवपुत्रसुखंवत्सविधात्रानैवनिर्मितम् ॥ १४ ॥ त्वदीयभालफलकेवर्णाःसर्वेमयेक्षिताः ॥ तत्रनैवास्तितेपुत्रसुखंसप्तसुजन्मसु ॥ १५ ॥ इत्याकर्ण्यहरेर्वाक्यंवज्रनिर्घातनिष्ठुरम् ॥ सपपातमहीपृष्ठेच्छिन्नमूलइवद्रुमः ॥ १६ ॥ पतिंपतितमालोक्यप्रमदात्यंतदुःखिता ॥ पश्यंतीस्वामिनंपुत्रस्पृहाशून्यमरूरुदत् ॥ १७ ॥ पश्चाद्धैर्यंसमलं-

वत्स ब्रह्माने पहिले से पुत्र का सुख तुम्हें नहीं दे रखा ॥ १४ ॥ तुम्हारे मस्तक पट्ट पर मैंने सारे अक्षर पढ़ लिये हैं उसमें तुम्हें सात जन्मों में पुत्र का सुख नहीं ॥ १५ ॥ बिजली जिस प्रकार पड़ जाय इस प्रकार श्री हरि के निष्ठुर बचन सुनकर कटे हुए मूल वाले वृक्ष की तरह वह पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥ १६ ॥ इस प्रकार पति को पृथ्वी पर पड़ा देख कर उसकी पत्नी अत्यन्त दुःखी हुई, अपने पति की पुत्र प्राप्ति की इच्छा पूरी होते न देखकर रोने लग गई ॥ १७ ॥ बड़ी कठिनता से धैर्य करके गिरे हुए

पतिदेव से गौतमी बोली—हे नाथ ! उठिये, उठिये, आपको क्या मेरा वचन याद नहीं ॥ १८ ॥ जो कुछ भी विधाता ने लिख दिया, वही सुख दुःख प्राप्त होता है, लक्ष्मीनाथ भी इसमें क्या करें, मनुष्य तो अपने किये कर्मों को भोगता है ॥ १९ ॥ भाग्य हीन पुरुष का किया हुआ उद्यम भी तो मृत्यु होते हुए पुरुष को औषध पिलाने की तरह व्यर्थ जाता है ॥ २० ॥ अतएव दैव

व्यसावोचत्पतितंपतिम् ॥ गौतम्युवाच ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठहेनाथकिंनस्मरसिमेवचः ॥ १८ ॥ विधात्रालिखितं भालेतल्लभेतसुखासुखम् ॥ किंकरोतिरमानाथःस्वकृतंभुञ्जतेनर ॥ १९ ॥ अभाग्यस्यकृतोद्योगोमुमूर्षोरिव भेरुजम् ॥ तस्यसर्वंभवेद्व्यर्थंयस्यदैवमदक्षिणम् ॥ २० ॥ क्रतुदानतपःसत्यव्रतेभ्योहरिसेवनम् ॥ श्रेष्ठसर्वे-षुवेदेषुनतोदैवबलंवरम् ॥ २१ ॥ तस्मात्सर्वत्रविश्वासंविहायोत्तिष्ठभूसुर ॥ दैवमेवावलंब्याशुहरिणाकिंप्र योजनम् ॥ २२ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यास्तीव्रशोकसमन्वितम् ॥ वैनतेयोऽवदद्विष्णुं क्षोभसंजातवेपथुः ॥ ॥ २३ ॥ गरुड़उवाच ॥ शोकसागरसंमग्नांब्राह्मणींवीक्ष्यहेहरे ॥ तथैवब्राह्मणंनेत्रगलद्बाष्पकलाकुलम् ॥

सबसे बलवान् है, यज्ञ, दान, तप, सत्यव्रत, हरि पूजा आदि से अधिक सारे वेदों में दैवबल माना गया है ॥ २१ ॥ हे ब्राह्मण देव ! इन सबका विश्वास छोड़कर उठो, केवल दैव का आश्रय लो, अब हरि का क्या प्रयोजन है ॥ २२ ॥ इस प्रकार उसकी पत्नी अत्यन्त शोक के साथ वचन बोल रही थी उन्हें सुनकर भगवान् के वाहन गरुड़ को अत्यन्त दुःख हुआ तब काँपते २ विष्णु भगवान् के प्रति कहने लगा ॥ २३ ॥ गरुड़ बोला—हे हरे ! देखिये यह ब्राह्मणी शोक समुद्र में डूबी जा रही है, और

ब्राह्मण भी तो आंखों से आंसुए गिराता हुआ वैसे ही व्याकुल हो रहा है ॥ २४ ॥ हे दीन बन्धो ! दयासागर भक्तों के दुःखों को न सहन करने वाली आपकी वह दया आज कहाँ छुप गई है ॥ २५ ॥ आप तो ब्राह्मणों की रक्षा करने वाले हैं यह धर्म आपका नाथ आज कहाँ चला गया, आपके तो भक्तों के हाथ में चारों प्रकार की मुक्ति रहा करती है ॥ २६ ॥ फिर भी वे

॥ २४ ॥ दीनबन्धोदयासिंधोभक्तानामभयङ्कर ॥ भक्तदुःखासहिष्णोस्तेदयाद्यक्वगताप्रभो ॥ २५ ॥ अहो-ब्रह्मण्यदेवस्त्वंत्वद्धर्मःक्वगतोधुना ॥ त्वद्भक्तस्यचतुर्धापिमुक्तिःकरतलेस्थिता ॥ २६ ॥ अहोतथापिनेच्छं-तिविहायभक्तिमुत्तमाम् ॥ तदग्रेसिद्धयश्चाष्टौकिंकर्योभूयसंस्थिताः ॥ २७ ॥ त्वदाराधनमाहात्म्यमेवंसर्वत्र-विश्रुतम् ॥ तर्हिविप्रस्यपुत्रेच्छापूरणेकःपरिश्रमः ॥ २८ ॥ गजमर्पयतःपुंसोह्यंकुशेकःपरिश्रमः ॥ अतः परंनकेनापिसेव्यतेतेपदांबुजम् ॥ २९ ॥ यद्दृष्टगतंपुंसस्तदेवभविताध्रुवम् ॥ इतिलोकेप्रथाजातात्वद्भक्ति-

आपकी उत्तम भक्ति छोड़ कर मुक्ति नहीं चाहते, उनके आगे ही आठों प्रकार की सिद्धियें दासी बनकर खड़ी रहती हैं, वे तो उनकी तरफ देखते भी नहीं ॥ २७ ॥ आपके आराधन करने का महात्म्य सर्वत्र प्रसिद्ध है इससे इस ब्राह्मण पुत्र की इच्छा पूर्ण करने में आपको क्या परिश्रम है ॥ २८ ॥ जो पुरुष हाथी दे सकता है उसे अंकुश देने में क्या कष्ठ होता है । यह समझ लीजिये-आज के बाद आपके चरण कमलों की कोई भी सेवा नहीं करेगा ॥ २९ ॥ जो भी पुरुष का दैव लिखित है, वही

अवश्य मिलना है, इस प्रकार की प्रथा यदिलोक में प्रसिद्ध हो गई तो आपकी भक्ति भी लीन हो जायगी ॥ ३० ॥ न करने वाले काम को भी आप करने की सामर्थ रखते हैं इस प्रकार की सामर्थ आपकी जगत् में प्रसिद्ध हो रही है। अब इसको यदि पुत्र न दिया तो, यह महिमा भी लुप्त हुई ॥ ३१ ॥ अतः इस ब्राह्मण को एक पुत्र आप अवश्य देवें। देखिये सुदामा जी भी

विलयंगता ॥ ३० ॥ कर्तुमकर्तुं सामर्थ्यंतवसर्वत्रविश्रुतम् ॥ तदेवाद्यगतंनाथनचेतस्मैसुतप्रदः ॥ ३१ ॥ अतस्त्वंसर्वथादेहिपुत्रमेकंद्विजन्मने ॥ सुदामात्वांसमाराध्यलेभेवैभवमुत्तमम् ॥ ३२ ॥ सांदीपिनिर्मृतंपुत्रमवापकृपयातव ॥ इतितेशरणंप्राप्तौदंपतीपुत्रलालसौ ॥ ३३ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिगरुड़वचोनिशम्यविष्णुर्वचनमुवाचखगंसुधोपमानम् ॥ अयिखगवरपुत्रमेकस्मैवितरमनोगतमाशुवैनतेय ॥ ३४ ॥ इतिहरिवचनंनिजानुकूलंझटितिनिशम्यखगोतिहृष्टचेताः ॥ अददददतिविषण्णमानसायसुतमनुरूपमिलासुराय-

आपकी आराधना से अतुल ऐश्वर्य का स्वामी बन गया ॥ ३२ ॥ और आपकी ही कृपा से सान्दीपन ब्राह्मण ने भी मृत पुत्र को प्राप्त किया था। अब ये दोनों पति पत्नी पुत्र की इच्छा से आपकी शरण आये हैं ॥ ३३ ॥ श्रीनारायण बोले — गरुड़ की बातें सुनकर भगवान् विष्णु गरुड़ के प्रति अमृतमय वचन कहने लगे—हे पक्षिश्रेष्ठ ! तू हो शीघ्र इन्हें कामनामय एक पुत्र प्रदान करदे ॥ ३४ ॥ इस प्रकार श्रीहरि के अपने अनुकूल वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न होकर गरुड़जी ने उस दुःखी ब्राह्मण को इसकी

इच्छा के अनुकूल सुन्दर पुत्र होने का वरदान दे दिया ॥ ३५ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषा टीकायां पञ्चदशोऽध्याय ॥ १५ ॥

श्रीनारायण बोले—हे नारदजी श्रीवाल्मीकि जी ने उस दृढ़धन्वा के प्रति यह परम अद्भुत जो चरित्र सुनाया है उसका

रम्यम् ॥ ३५ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येदृढधन्वोपाख्यानेश्रीनारायणनारदसंवादेसुदेववरप्रदानंनामपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्येहंयदुक्तंदृढधन्वने ॥ वाल्मीकिनामहाप्राज्ञचरितंपरमाद्भुतम् ॥ ॥ १ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ दृढधन्वन्महाराजशृणुष्ववचनंमम ॥ सुपर्णःकेशवादेशादिदमाहद्विजेश्वरम् ॥ ॥ २ ॥ गरुड़उवाच ॥ सप्तजन्मसुतेपुत्रसुखंनास्तीतियद्वचः ॥ हरिणोक्तंद्विजश्रेष्ठनत्तथैवतवाधुना ॥३॥ तथापिस्वामिनाज्ञप्तःकृपयाददिमतेसुतम् ॥ मदंशसंभवःपुत्रोभवितातेतपोधन ४ ॥ येनत्वमाशिष.सत्या-

अग्रिम भाग भी सुनो ॥ १ ॥ श्रीवाल्मीकिजी बोले—हे दृढ़धन्वा, महाराज ! अब आगे की कथा सुनो-भगवान् की आज्ञा पाकर उस ब्राह्मण के प्रति गरुड़ कहने लगे ॥ २ ॥ हे द्विज श्रेष्ठ ! जैसा कि श्री हरि भगवान् ने तुम्हें अभी २ आज्ञा की है वैसे ही तुम्हें सात जन्मों तक पुत्र सुख तो नहीं होना था ॥ ३ ॥ किन्तु हे तपोधन ! स्वामी की आज्ञा पाकर में ही तुम्हें पुत्र वर देता हूं । मेरे अंश से तुम्हारा पुत्र होगा ॥ ४ ॥ हे ब्राह्मण देव ! तुम इस आशीर्वाद से सत्य ही पुत्र अवश्य पाओगे किन्तु इस गौतमी

के साथ उसके उत्पन्न होने का दुःख भी तुम्हें अवश्य होगा ॥ ५ ॥ हे द्विजेन्द्र ! तुम धन्य हो, तुम्हारी मति श्रीहरि भगवान् में हुई है, सकाम हो अथवा निष्काम हरि भक्ति हरिको अत्यन्त प्रिय है ॥ ६ ॥ पुरुष मात्र का शरीर तो जल के बुलबुले की भांति क्षण भंगुर है। उस शरीरको पाकर वही धन्य होगया जिसने श्रीहरि का हृदय में चिन्तन किया ॥ ७ ॥ श्रीहरि के बिना इस

लप्स्यसेगौतमीयुतः ॥ परंतज्जनितंदुःखंयुवयोर्भविताध्रुवम् ॥ ५ ॥ धन्योद्विजशार्दूलयत्तेजाताहरौमतिः सकामाप्यथनिस्कामाहरिभक्तिर्हरेःप्रिया ॥ ६ ॥ जलबुद्बुदवत्पुंसांशरीरंक्षणभंगुरम् ॥ तदासाद्यहरेःपादं धन्यश्चिंतयतेहृदि ॥ ७ ॥ हरेरन्योनसंसारात्तारयेद्बहुदुस्तरात् ॥ हरेरेवकृपालेशान्मयादत्तःसुतस्तव ॥ ॥ ८ ॥ मनसिश्रीहरिंधृत्वाविचरस्वयथासुखम् ॥ उदासीनतयास्थित्वाभुंक्ष्वसंसारजंसुखम् ॥ ९ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ दंपत्योःपश्यतोःसद्योदत्वावरमनुत्तमम् ॥ खगद्वाराहरिःशीघ्रंययौनिजनिकेतनम् ॥ १० ॥ सुदेवोपिसपत्नीकोवरंलब्ध्वामनोगतम् ॥ आसाद्यस्वगृहंभेजेगार्हस्थ्यसुखमुत्तमम् ॥ ११ ॥ कियत्कालक्रमे-

दुस्तर संसार सागर से और कोई नहीं तर सकता। उसी श्रीहरि की कृपा के कण से मैंने तुमको पुत्र वर दे दिया ॥ ८ ॥ अब अपने मनमें श्रीहरि को धारण करके सुख पूर्वक विचरण करो। सांसारिक सुखोंसे उदासीन होकर उनका सुख भोगते रहो॥९॥ श्रीवाल्मीकिजी बोले–इस प्रकार पति पत्नी को उत्तमवर देकर उनके देखते २ गरुड़ के द्वारा श्रीहरि शीघ्र ही अपने लोक में पधारे ॥ १० ॥ सुदेव भी मनोगत वर पाकर पत्नी के साथ घर में आया उत्तम गृहस्थ सुख को पाने लगा ॥ ११ ॥ कुछ समय

के व्यतीत हो जाने पर श्रीगौत्तमी गर्भवती हुई दशवें महीने के लगने पर उसका गर्भ पूर्ण हुआ ॥ १२ ॥ प्रसूति समय के आने पर गौत्तमी ने सुन्दर बालक उत्पन्न किया। तब तो सुदेव को प्रसन्नता की सीमा न रही ॥ १३ ॥ उसने अत्यन्त प्रसन्नता से विद्वान ब्राह्मणों को बुलवा कर जात कर्म संस्कार कराया, स्नान करके उस श्रेष्ठ ब्राह्मण ने उन ब्राह्मणों को बहुत दान दिया।

णास्यादोहदःसमपद्यत ॥ दशमेमासिसंप्राप्तेपूर्णोगर्भोबभूवह ॥ १२ ॥ प्रसूतिकालेसंप्राप्तेसासूतसुतमुत्तमम् ॥ सुदेवस्त्वात्मजेजातेजाताल्हादोबभूवह ॥ १३ ॥ आहूयजातकंकर्मचकारद्विजसत्तमान् ॥ बृहद्दानंददौतेभ्यःसुस्नातोद्विजसत्तमः ॥ १४ ॥ नामचास्याकरोद्धीमान्ब्राह्मणैःस्वजनैर्वृतः ॥ अयंमुतःसुपर्णेनदत्तःप्रेम्णाकृपालुना ॥ १५ ॥ शारदेंदुरिवप्रोद्यत्तेजस्वीमुकसन्निभः ॥ शुकदेवेतिनामायंपुत्रोस्तुममवल्लभः ॥ ॥ १६ ॥ अवर्धतसुतःशीघ्रंशुक्लपक्षइवोडुपः ॥ पितुर्मनोरथैःसाकंमातृमानसनंदनः ॥ १७ ॥ उपनीयसुतंतातःसावित्रींदत्तवान्मुदा ॥ संस्कारंवैदिकंप्राप्यब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः ॥ १८ ॥ तत्तेजसान्वितोरेजे-ाक्षा-

॥ १४ ॥ ब्राह्मण तथा बन्धु बान्धवों से मिलकर अपने पुत्र का उस बुद्धिमान ने नाम करण भी किया ॥ १५ ॥ परम कृपालु श्रीगरुड़जी ने प्रेम से यह पुत्र प्रदान किया है और शरद की पूर्णमासी के चन्द्रमा की भांति यह उदय हो रहा है। श्रीशुकदेवजी के समान तेजस्वी है अतएव मेरा प्यारा नाम इसका शुकदेव हां हो ॥ १६ ॥ वह बालक पिता के मनोरथ पूर्ण करता हुआ एवं माता के चित्त को भी आनन्दित करता हुआ शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की भांति बढ़ने लगा ॥ १७ ॥ पिता ने उसका यज्ञो-

पवीत संस्कार कराया अत्यन्त प्रसन्नता से उसे गायत्री मंत्र की दीक्षा दी इसप्रकार वह वैदिक संस्कार से ब्रह्मचर्य आश्रम में स्थित हुआ ॥ १८ ॥ ब्रह्मचर्य के तेज से वह दूसरा तेजस्वी साक्षात् सूर्य दिखाई देता था, उस बुद्धिके सागर ने वेद पढ़ने आरंभ किये ॥ १९ ॥ अपनी तीव्र बुद्धि से उस गुरु भक्त विद्यार्थी ने गुरु को सन्तुष्ट कर दिया, एकवार ही पढ़ने से उसने सारी विद्या

त्सूर्यइवापरः ॥ वेदाध्ययनमारेभेकुमारोबुद्धिसागरः ॥१९॥ सद्बुद्ध्यानंदयामासस्वगुरुं गुरुवत्सलः ॥ सकृन्निगदमात्रेणविद्यांसर्वामुपेयिवान् ॥ २० ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ एकदादेवलोऽभ्यागतःकोटिसूर्यसमप्रभः ॥ तमालोक्यसुदेवोसौननामदंडवन्मुदा ॥ २१ ॥ पूजयामासविधिवदर्घ्यपाद्यादिभिर्मुनिम् ॥ आसनंकल्पयामासदेवलायमहात्मने ॥ २२ ॥ तत्रोपविष्टोभगवान्देवलोदेवदर्शनः ॥ चरणेपतितंतंदृष्ट्वाकुमारंदेवलोऽब्रवीत् ॥२३॥ देवलउवाच ॥ भोभोसुदेवधन्योसितुष्टस्तेभगवान्हरिः ॥ यतस्त्वंप्राप्तवान्पुत्रंदुर्लभंसुंदरंवरम्

पाली ॥ २० ॥ श्रीवाल्मीकिजी बोले-एकवार देवल ऋषि वहाँ आये उनकी शोभा तेज करोड़ों सूर्य के समान था, उनका दर्शन करके सुदेव ने दण्डवत् प्रणाम किया ॥ २१ ॥ उस मुनि की अर्घ्य पाद्य आदि से पूजा करके उस महात्मा देवल को उत्तम आसन पर बिठाया ॥ २२ ॥ जब देवदर्शन भगवान् देवल आसन पर बैठ गये तब वह ब्रह्मचारी उनके चरणों पर आकर पड़ा उस कुमार को देखकर देवल बोले ॥ २३ ॥ हे सुदेव ! तुम धन्य हो, तुम्हारे भाग्य धन्य है, भगवान् श्रीहरि तुम पर

अतीव प्रसन्न हैं, इसी कारण तुम्हें अतीव सुन्दर पुत्र का दुर्लभ वर प्राप्त हुआ है ॥ २४ ॥ इस प्रकार का पुत्र तो कहीं पर किसी का देखने में नहीं आया। यह अत्यन्त नम्र, सुशील, बुद्धिमान्, बोलने में चतुर, वेदों के पढ़ने के स्वभाव वाला है ॥ २५ ॥ हे पुत्र थोड़ा मेरे पास आओ मैं तुम्हारा हाथ देखूं हे पुत्र! तुम्हारे हाथ में तो अद्भुत रेखाएं देख रहा हूं। इसमें छत्र, दो चमर

॥ २४ ॥ एतादृशःसुतःक्वापिकस्याप्यनवलोकितः ॥ विनीतोबुद्धिमान्वाग्मीवेदाध्ययनशीलवान् ॥२५॥ एहिपुत्रकिमेतत्ते करेपश्यामिकौतुकम् ॥ सच्छत्रंचामरयुगंकमलंयवसंयुतम् ॥ २६ ॥ आजानुलंबिनौ-हस्तौहस्तिहस्तसमौतव ॥ आकर्णांतविशालेचचक्षुषीमधुपिंजरे ॥ २७ ॥ वपुर्वर्तुलकंमध्यंवलित्रय विभूषितम् ॥ एवमुक्त्वासुतंदृष्ट्वापुनराहोत्सुकंद्विजम् ॥ २८ ॥ अहोसुदेवतनयस्तवायंगुणसागरः ॥ गूढ-जत्रुःकंबुकंठःस्निग्धकुंचितमूर्धजः ॥ २९ ॥ तुंगवक्षाःपृथुग्रीवःसमकर्णोवृषांसकः ॥ सर्वलक्षणसंपूर्णः

कमल एवं जौ की रेखा पड़ी हुई हैं ॥ २६ ॥ और हाथ भी हाथी के सूंड़ की भांति जानु पर्यन्त दीर्घ हैं, अत्यन्त मिठास से पूर्ण कानों तक विस्तृत विशाल नेत्र हैं ॥ २७ ॥ शरीर भी गोलाकार है उदर में तीन रेखाएं शोभित हैं। इस प्रकार कुमार के लक्षण देखकर प्रसन्न होते हुए उस ब्राह्मण के प्रति फिर देवल ऋषि बोले ॥ २८ ॥ हे सुदेव! यह तुम्हारा पुत्र गुणों का तो समुद्र है, इसके ऊँचे स्कन्ध हैं, शंख की भांति कण्ठ है स्निग्ध तथा घुंघराले बाल हैं ॥ २९ ॥ विशाल वक्षस्थल है, भरी हुई

ग्रीवा है, कान भी बहुत सुन्दर दोनों समान हैं बैल की तरह ऊँचे स्कन्ध है इन सम्पूर्ण लक्षणों से तो तेरा पुत्र महा भाग्यवान् है ॥ ३० ॥ एक ही बड़ा भारी दोष है वह सब लक्षणों को व्यर्थ कर रहा है। यह कहकर सिर हिलाते २ सांस भर कर मुनि बोले ॥ ३१ ॥ पहिले आयु की परीक्षा करें उसके अनन्तर शेष लक्षण काम के होते हैं। जब आयु ही न हो तो कुमार के अन्य

पुत्रोभाग्यनिधिर्महान् ॥ ३० ॥ एकएवमहान्दोषोयेनसर्ववृथाकृतम् ॥ इत्युक्त्वामौलिमाधुन्वन्विनिःश्वस्याब्रुवन्मुनिः ॥ ३१ ॥ पूर्वमायुःपरीक्षेतपश्चाल्लक्षणमादिशेत् ॥ निरायुषःकुमारस्यलक्षणैःकिंप्रयोजनम् ॥ ॥ ३२ ॥ सुदेवतनयोयंतेद्वादशेहायनेजले ॥ मृत्युमेष्यतितस्मात्त्वंशोकंमाकुरुमानसे ॥ ३३ ॥ अवश्यंभाविनोभावाभवंत्येवनसंशयः ॥ तत्रप्रतिविधिर्नास्तिमुमूर्षोरिवभेषजम् ॥ ३४ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ इत्युदीर्यगतोब्रह्मलोकंदेवलकोमुनिः ॥ सुदेवःसहगौतम्यापपातधरणीतले ॥ ३५ ॥ विललापचिरंभूमौदेवलो

लक्षणों से प्रयोजन ही क्या है ॥ ३२ ॥ सुनिये सुदेव ! यह तुम्हारा पुत्र बारहवें वर्ष की अवस्था में जल में डूब कर मृत्यु को प्राप्त होगा, इसका मनमें शोक न करना ॥३३॥ जा होनहार होती है वह होकर ही मिटती है, इसमें संशय ही नहीं। इसका कोई उपाय ही नहीं, मृत्यु शय्या पर पड़े हुए पुरुष को औषध पिलाने की तरह सब व्यर्थ है ॥ ३४ ॥ वाल्मीकिजी बोले-यह कह कर देवल मुनि ब्रह्मलोक में चले गये। सुदेव तथा गौतमी दोनों पृथ्वी पर गिर पड़े ॥ ३५ ॥ सुदेव ब्राह्मण देवल के वचन याद

मा. १०६

कर २ के बहुत विलाप करने लगे। गौतमी ने कुछ धैर्य करके पुत्र को गोदी में ले लिया ॥ ३६ ॥ अत्यन्त प्रेम के साथ उसका मुख चुम्बन करके पति से बोली हे द्विजराज ! होनहार की बातों में आप भय न करें ॥ ३८ ॥ न होने वाली बातें तो कभी होती नहीं, होनहार अवश्य होता है, क्यां नल, श्री राम, युधिष्ठिर आदि ने दुःख नहीं, प्राप्त किये ॥ ३८ ॥ देखिये बलि राजा बान्धे

क्तं वचःस्मरन् ॥ अथसागौतमीपुत्रंस्वांकमारोप्यधैर्यतः ॥ ३६ ॥ चुचुंबवदनंप्रेम्णापश्चात्पतिमुवाचसा ॥ गौतम्युवाच ॥ द्विजराजनकर्तव्याभीतिर्भाव्येषुवस्तुषु ॥ ३७ ॥ नाभाव्यंभविताकुत्रभाव्यमेवभविष्यति ॥ किंनुनोदुःखमापन्नानलरामयुधिष्ठिराः ॥ ३८ ॥ बंधनंबलिराजापिप्राप्तवान्यदवःक्षयम् ॥ हिरण्याक्षोवधंघोरंवृत्रोपिनिधनंगतः ॥ ३६ ॥ कार्तवीर्यःशिरश्छेदंरावणोपितथाप्तवान् ॥ विरहंरघुनाथोपिजानक्याःप्राप्तवान्मुने ॥ ४० ॥ परीक्षिदपिराजर्षिर्ब्राह्मणान्मृत्युमाप्तवान् ॥ एवंयेभाविनोभावाभवंत्येवमुनीश्वर ॥४१॥ अतउत्तिष्ठहेनाथहरिंभजसनातनम् ॥ शरण्यंसर्वजीवानांनिर्वाणपददायकम् ॥ ४२ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥

गये, यादवों का क्षय हुआ, हिरण्याक्ष का निर्दय वध हुआ, वृत्रासुर की मृत्यु हुई ॥ ३६ ॥ कार्तवीर्य तथा रावण के सिर कटते रहे, श्रीरामचन्द्र जी ने जानकी जी के विछोड़े का दुःख उठाया ॥ ४० ॥ राजर्षि परीक्षित् भी ब्राह्मण द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुए। इसी प्रकार हे मुनीश्वर ! होनहार होकर ही मिटती है ॥ ४१ ॥ इसलिये हे नाथ ! उठो सनातन श्रीहरि का भजनकरो वे ही सब जीवों के आश्रय एवं रक्षक हैं, मोक्षपद देने वाले हैं ॥ ४२ ॥ वाल्मीकि जी बोले—इस प्रकार अपनी पत्नी के बचन सुनकर वे

आ. टी. अ. १६ फा. १०

सुदेव शर्मा अपने प्राकृतः य में श्री हरि के चरण कमलों को धारण करके अपने पुत्र के भविष्य का शोक निवारण किया ।।४३ ।। इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायांषोड़शोऽध्याय ।। १६ ।।

श्री नारद जी बोले—हे कृपा सागर इस प्रकार जब श्री वाल्मीकि जी ने राजा दृढ़धन्वा को समझाया उसके अनन्तर

इतिनिजवनितावचोनिशम्यप्रकृतिमुपागतवान्सुदेवशर्मा ॥ हृदिहरिचरणांबुजंनिधायझटितिजहौशुचमात्मजाद्भवित्रीम् ॥४३॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेसुदेवप्रतिबोधोनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

नारदउवाच ॥ ततःकिमभवत्तस्यप्रबुद्धस्यमहीपतेः ॥ तन्मेवदकृपासिंधोशृण्वतांपापनाशनम् ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ स्वकीयचरितंश्रुत्वाप्राक्तनंचकिताननम् ॥ राजानंपुनरेवाहवाल्मीकिःश्रवणोत्सुकम् ॥ ॥ २ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ इतिताःशीतलावाचः समाकर्ण्यप्रियामुखात् ॥ सुदेवोधैर्यमालंब्यहरौचित्तमधारयत् ॥ ३ ॥ निःश्वस्यदीनवदनोयद्भाव्यंतद्भविष्यति ॥ इतिनिश्चित्यमनसापुष्पाद्यर्थंवनंययौ ॥ ४ ॥

क्या कहा, यह तो इतिहास सुनते ही पाप नाश करने वाला है ।।१।।श्री नारायण बोले—राजा दृढ़धन्वा ने जब अपने पूर्व जन्म का इस प्रकार इतिहास सुना अत्यन्त आश्चर्य करने लगा । श्री वाल्मीकि जी फिर उसे कहने लगे ।। २ ।। श्रीवाल्मीकि जी बोले—हे राजन् अपनी भार्या की शीतल वाणी सुनकर सुदेव ने धैर्य धारण किया, श्रीहरि का चिन्तन करने लगे ।। ३ ।। लम्बा

सांस खींच कर दीन वदन होकर कह उठे अच्छा जो होना है सो होले। ऐसा निश्चय करके वन में पुष्प आदि लेने को चल पड़े ॥ ४ ॥ इसी प्रकार वन में पुष्प आदि चुनकर घर में आये पूजन आदि किया, इसी काम में उन्हें कुछ समय क्रम से व्यतीत होगया ॥ ५ ॥ फिर किसी दिन सुदेव मन में श्रीहरि का ध्यान करते हुए समिधा कुशा फल आदि लेने को वन में गये। उसी

एवंकृतवतस्तस्यकियान्कालोगतःक्रमात् ॥ समित्कुशफलाद्यर्थंकदाचित्काननंययौ ॥ ५ ॥ सुदेवोमनसाध्यायन्हरेःपादसरोरुहम् ॥ तस्मिन्नेवदिनेगच्छद्वापींसूनुसुहृद्वृतः ॥ ६ ॥ प्रविश्यवापींचिक्रीडेन्वयस्यैःसहवारिणि ॥ जलयंत्रैःक्षिपन्वारिबालकेषुस्मयन्मुहुः ॥ ७ ॥ जलेक्रीडांमुहुःकुर्वन्ग्रीष्मेमोदमुपाययौ ॥ एवंसर्वेषुबालेषुक्रीडत्सुप्रेमनिर्भरम् ॥८॥ अगाधसलिलेतिष्ठन्बालकैरुपमर्दितः ॥ सपलायनमन्विच्छन्सुहृद्वर्गभयाद्द्रुतम् ॥ ९ ॥ विधिनानोदितस्तत्रनियम्यश्वासमात्मनः ॥ ममज्जागाधतोयेसौवंचयन्नात्मनःसखीन् ॥

ही दिन शुकदेव भी मित्रों के साथ बावड़ी पर पहुंचा ॥ ६ ॥ मित्रों के साथ जल क्रीड़ा करने को वह बावड़ी में उतरा। गरमी के दिन थे जल क्रीड़ा में एक दूसरे पर जल उछालने लगे, उसमें वह अत्यन्त प्रसन्न था ॥ ७ ॥ इसी प्रकार वे सब बालक प्रेम से निर्भर होकर आगे २ बढ़ते गये खूब खेलते रहे ॥ ८ ॥ तब अगाध जल में अन्य बालकों ने उसे धकेल दिया वह मित्रों के भय से वहां से भागने की इच्छा करने लगा ॥ ९ ॥ विधि बलवान् थी उसने अपना श्वास रोक लिया, अपने मित्रों को छलने

के लिये उसने गहरे जल में डुबकी लगादी ॥ १० ॥ किन्तु उसमें वह संभल न सका अत्यन्त व्याकुल होकर निकलना चाहा, अगाध जल था निकल न सका, वहीं झट ही उसकी मृत्यु होगयी ॥ ११ ॥ वे सब बालक एक आयु के थे, पानी से निकलते उसे न देखकर हा हा कार करते हुए वहां से भागे ॥ १२ ॥ गौतमी के पास पहुंच कर यह दुःखद समाचार सुनाया, उनकी

॥ १० ॥ तत्रापिव्याकुलीभूयततोनिर्गंतुमुन्मनाः ॥ सहसामृतिमापन्नःकुमारोगाधवारिणि ॥ ११ ॥ जलादनिर्गतंवीक्ष्यसर्वेचकितमानसाः ॥ समानवयसःसर्वेहाहाकृत्वाप्रधाविताः ॥ १२ ॥ गौतम्यैकथयामासुर्बृहच्छोकपरायणाः ॥ वज्रपातसमांवाचंबालानामनतिप्रियाम् ॥ १३ ॥ श्रुत्वाभूमौपपाताशुगौतमीपुत्रवत्सला ॥ एतस्मिन्नेवसमयेवनाद्विप्रःसमाययौ ॥ १४ ॥ निशम्यपुत्रमरणंवृक्षवावापतद्भुवि ॥ ततउत्थायतौविप्रदंपतीवापिकांगतौ ॥ १५ ॥ मृतंपुत्रंसमालिंग्यस्वांकेकृत्वाकलेवरम् ॥ सुदेवःपुत्रवदनंचुचुंबचमुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥ ततःस्वांकेस्थितंपुत्रंमृतंवीक्ष्यमुहुर्मुहुः ॥ सरुदन्विलपन्नेवगद्गदाक्षरमब्रवीत् ॥ १७ ॥

बातें जैसे बिजली पड़ जाय वैसी दुःख देने वाली तथा शोक वर्धक थीं ॥ १३ ॥ उन्हें सुनते ही पुत्र प्रिया गौतमी पृथ्वी पर पड़ गई, उसी समय सुदेव ब्राह्मण भी वन से आगये ॥ १४ ॥ पुत्र मृत्यु को सुनकर कटे वृक्ष की भांति वह भी पृथ्वी पर पड़ गये। तब दोनों पति पत्नी उठकर बावड़ी पर गये ॥ १५ ॥ वहां पुत्र के शव को निकाल कर उसे गोदी में लेकर सुदेव पुत्र के मुख को बार बार चूमने लगे ॥ १६ ॥ इस प्रकार पुत्र मुख बार २ देखते रोते विलाप करते सुदेव गद्गद् वाणी से बोलने लगे ॥ १७ ॥

सुदेव बोले—पुत्र पुत्र मेरे शोक नाश करने वाली परम शीतल वाणी द्वारा बोलो मेरे मन को प्रसन्न करो ॥ १८ ॥ हे पुत्र ! वृद्ध माता पिता को छोड़कर इस प्रकार तुम्हें चले जाना उचित नहीं । हे बेटा वेद पढ़ने के लिये मित्र बुला रहे हैं ॥१६॥ गुरुदेव भी तुम्हें पढ़ाने को प्रसन्न होकर बुला रहे हैं, हे पुत्र झट पट उठो, अब सो क्यों रहे हो ॥ २० ॥ मैं तुम्हें छोड़ कर जाता ही

पु. भा. सुदेवउवाच ॥ वदपुत्रशुभांवाणींममशोकविनाशिनीम् ॥ शीतलांललितांवत्समनसोमोदमावह ॥ १८ ॥ भा. टी.

११३ विहायपितरौवृद्धौनत्वंगंतुमिहार्हसि ॥ वत्साव्हतिसन्मित्रंवेदाध्ययनहेतवे ॥ १६ ॥ मुदाव्हयत्युपाध्याय- अ. १७

स्त्वामध्यापनहेतवे ॥ तूर्णमुत्तिष्ठहेपुत्रकथंसुप्तोसिसांप्रतम् ॥ २० ॥ त्वाँविहायनगच्छामिगृहेकिंमेप्रयोजनम्

शून्यारण्यमिवाद्यैवत्वद्दृतेसदनंमम ॥ २१ ॥ वनेपिनैवगच्छामिगमनेकिंप्रयोजनम् ॥ फलमूलप्रियत्वंचे-

न्नोत्तिष्ठसिममाग्रतः ॥ २२ ॥ नमयाचरितंगर्ह्यंब्रह्महत्यापिनोकृता ॥ केनकर्मविपाकेनपुत्रोमेनिधनंगतः

॥ २३ ॥ अहोधातःकिमेतावत्फलंलब्धंत्वयामहत् ॥ लोचनंममदीनस्यवृद्धस्याकृष्यनिर्दय ॥ २४ ॥ निर्ध-

नहीं मुझे घर में क्या प्रयोजन है । हे पुत्र तुम्हारे बिना आज घर भी सुनसान वन है ॥ २१ ॥ वनमें भी नहीं जाता, वहां भी मुझे कोई प्रयोजन नहीं तुम को फल मूल प्रिय नहीं, इसी कारण तो तुम नहीं उठ रहे ॥ २२ ॥ मैंने कभी ऐसा निन्दित कर्म नहीं किया, ब्रह्म हत्या भी नहीं की फिर किस कर्म के फल स्वरूप मेरे पुत्र की मृत्यु हुई ॥ २३ ॥ हे विधाता ! तुम्हें इसमें कौन सा बड़ा लाभ हुआ जो मुझ दीन वृद्ध की हे निर्दय ! तुमने आंखें निकाल लीं ॥२४॥हम निर्धनों का धन यही एक बालक था,

पति पत्नी का आश्रय था उसको छीनते हुए तुम्हें लज्जा भी नहीं आयी॥२५॥हे विधाता औरों के लिये तो तुम सर्वत्र दयालु हो, फिर मेरे लिये निर्दय क्यों हुए,क्या मेरे भाग्योंके कारण तुम्हारा स्वभाव भी बदल गया॥२६॥कहां पर जाकर अबमैं प्रकृति से सुन्दर पुत्र को ढूंढूंगा। हे पुत्र तुम्हारा सुन्दर मुखड़ा सुन्दर नेत्रों वाला कहाँ देखूंगा ॥ २७ ॥ देखिये बादल भी वैसे बरसते रहेंगे,

नस्यधनंबालंदंपत्योरवलंबनम् ॥ हरतस्तेकथंलज्जाजायतेनहिकुत्रच्चित् ॥ २५ ॥ सर्वत्रसदयस्त्वंभोमयि निर्दयतांगतः ॥ कथमित्यन्यथाभावोममभाग्यवशादहो ॥ २६ ॥ कुत्राहंशोधयाम्यद्यपुत्रंप्रकृतिसुन्दरम् ॥ द्रक्ष्येतवाननंकुत्रपुत्रचारुसुलोचनम् ॥ २७ ॥ पर्जन्यःस्रवतेवारिसूतेधान्यंवसुन्धरा ॥ गिरयोरत्नजातानि-मुक्तासारंपयोनिधि ॥ २८ ॥ नतंदेशंप्रपश्यामियत्रपुत्रंमृतंलभेत् ॥ यद्गात्रंतुसमालिंग्यहृद्गततापमुत्सृजेत् ॥ २९ ॥ हेवत्सत्वंसकृद्वाचंश्रावयाशुदयांकुरु ॥ विलपत्यतितेमाताकुररीवगतत्रपा ॥ ३० ॥ तांदृष्ट्वातुक-

पृथ्वी भी वैसे ही धान्यादि देती रहेगी, पर्वत भी वैसे ही रत्न उगलते रहेंगे, समुद्र भी वैसे ही मोती निकालता रहेगा ॥ २८ ॥ ये सब अपने २ स्थान पर वैसे ही दिखाई देते रहेंगे पर ऐसा कोई भी स्थान नहीं दिखाई देगा जहां मृतक पुत्र फिर दिखाई दे जाय जिसके अंगों का आलिंगन करके हृदय का दुःख मिटाया जाय ॥ २९ ॥ पुत्र एक बार ही थोड़ा बोलो दया करो यह तुम्हारी माता कुररी की भांति लज्जा त्याग कर विलाप कर रही है ॥ ३० ॥ हे पुत्र उसे देखकर तुम्हें दया नहीं आ रही। पहिले तो कभी माता पिता की आज्ञा के बिना पुत्र कहीं नहीं जाते थे ॥ ३१ ॥ अब हम से बिना पूछे महामार्ग

में चले गये । हे पुत्र अब मैं किस से वेदों के अध्ययन की उत्तम वाणी सुनूंगा ॥ ३२ ॥ हे वत्स ! जब भी तुम्हारे तुतले मनोहर वाक्य याद आते हैं तब यह दुष्ट हृदय सौ टुकड़े क्यों नहीं हो जाता ऐसा यह लोहे का है ॥ ३३ ॥ इससे तो राजा दशरथ धन्य हुए हैं अपने पुत्र श्रीरामचन्द्रजी के वन में चले जाने पर अपने प्राणों का भी उन्होंने विसर्जन कर दिया, वे पुत्र विरह से दग्ध

थंपुत्रदयानोत्पद्यतेतव ॥ अग्रेनुज्ञाप्यपितरौनकदापिभवान्गतः ॥ ३१ ॥ आवामपृष्ट्वाकिंदीर्घमार्गंयातोसि-पुत्रक ॥ वेदाध्ययनसद्वाणींकस्यश्रोष्यामिसाँप्रतम् ॥ ३२ ॥ त्वामनुस्मरतोवत्सकलवाक्यंमनोहरम ॥ शत-धादीर्यतेनोद्यह्यायसंहृदयंमम ॥ ३३ ॥ मन्येसुधन्यंकिलकोशलेंद्रोयः काननंदाशरथौप्रयाते ॥ दधारनो-ऽसून्सुततापदग्धोधिङ् मांसुतस्यप्रलयेप्यनष्टम् ॥ ३४ ॥ गोविंदविष्णोयदुनाथनाथश्रीरुक्मिणीप्राणपते-मुरारे ॥ दीनानुकंपिन्भगवन्दयालोमांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥३५॥ देवाधिदेवाखिललोकनाथगोपीशर थांगपाणे ॥ कालिंदीकन्याविषदोषहारिन्मांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥ ३६ ॥ वैकुँठविष्णोनरकासुरारेचरा-

होगये, मुझे तो धिक्कार है पुत्र के मर जाने पर भी मैं जीवित हूं ॥ ३४ ॥ हे नाथ ! गोविन्द, विष्णो, हे यदुनाथ, श्रीरुक्मिणी प्राणवल्लभ, मुर के शत्रो, दीनों पर दया करने वाले, दयालु भगवन् पुत्र शोकाग्नि से सन्तप्त मेरी रक्षा करो ॥ ३५ ॥ हे देवाधि देव, समस्त लोकों के नाथ, हे गोपाल, गोपीजन वल्लभ, सुदर्शन चक्र को हाथ में धारने वाले, श्री यमुना के विष दोष को दूर करने वाले, पुत्र ताप से सन्तप्त होते हुए मेरी रक्षा कीजिये ॥ ३६ ॥ वैकुण्ठ, विष्णो, नरकासुर के शत्रो, चराचर जगत् के आधार,

संसार सागर से पार करने वाले जहाज, ब्रह्मादि देवता प्रभो आपकी चरण चौकी को नमस्कार करते हैं हे नाथ पुत्राग्नि सन्तप्त मेरी रक्षा कीजिये ॥ ३७ ॥ मेरे समान और कोई दुष्ठ नहीं हो सकता जिसने देवकीनन्दन श्रीकृष्ण भगवान् के वचनों का उल्लंघन कर दिया, भाग्य हीन होने के कारण पुत्र प्राप्ति की दुराशा में लगा रहा, मुझ जैसा और कौन अभागा हो सकता है

चराधारभवाब्धिपोत ॥ ब्रह्मादिदेवानतपादपीठमांपाहिपुत्रानलतापतप्तम् ॥३७॥ शठोमदन्योभवितानकोपियोदेवकीसूनुवचोविलंघ्य ॥ पुत्रेदुराशांकृतवानभाग्योलभेतकोहृष्टविनष्टवस्तु ॥ ३८ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वापाख्यानेसुदेवविलापोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

नारदउवाच ॥ दृढधन्वामहीपालंकिमुवाचततःपरम् ॥ वाल्मीकिर्भगवान्साक्षात्तद्वदस्वतपोनिधे ॥ ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ दृढधन्वासराजर्षिःश्रुत्वाप्राक्तनमात्मनः ॥ सविस्मयःसमापृच्छद्वाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ दृढधन्वोवाच ॥ ब्रह्मंस्तववचोरम्यंसुधाकल्पंनवंनवम् ॥ पीत्वापीत्वानतृप्तोस्मिभूयोवदततःपरम्

जो प्रत्यक्ष रूप नश्वर वस्तु को पाने की चेष्ठा करे, ॥ ३८ ॥

॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

श्रीनारद जी बोले—हे तपोनिधे ! दृढ़धन्वा राजा को भगवान् वाल्मीकि जी ने इसके अनन्तर क्या कहा कृपा करके वह मुझे सुनावें ॥ १ ॥ श्रीनारायण बोले–दृढ़धन्वा राजर्षि अपने पूर्व जन्म का इतिहास सुनकर आश्चर्य में पड़ गये श्री वाल्मीकिजी

से अग्रिम वृत्त पूछने लगे ॥ २ ॥ दृढ़धन्वा बोले–हे ब्रह्मन्! आपके वचन तो अमृत जैसे मधुर एवं मनोहर हैं नूतन २ हैं! उन अमृत सम वचनों का पान करके तृप्ति ही नहीं होती, अग्रिम वृत्त सुनाइये ॥ ३ ॥ वाल्मीकि जी बोले–सुनिये-राजन्! जब वह ब्राह्मण इस प्रकार पुत्र शोकातुर हो विलाप कर रहे थे उस समय, दश दिशाओं में गर्जना करता हुआ अकाल का मेघ

॥ २ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ ३ ॥ एवंविलपतस्तस्यविप्रस्यजगतीपते ॥ अकालजलदोऽभ्यागादुगर्जयंश्च-दिशोदश ॥ ४ ॥ ववौवायुःखरस्पर्शःकंपयन्निवपर्वतान् ॥ बृहल्लसन्महाविद्युत्स्वनेनापूरयन्दिशः ॥ ॥ ५ ॥ यावन्मासंववर्षैवमहीपूर्णजलाभवत् ॥ नासौविज्ञातवान्किंचित्पुत्रशोकाग्नितापितः ॥ ६ ॥ नपपौ बुभुजेचैवपुत्रपुत्रइतिब्रुवन् ॥ एवंविलपतस्तस्यमासोयोविगतस्तदा ॥ ७ ॥ श्रीकृष्णवल्लभोमासःसोभव-त्पुरुषोत्तमः ॥ अजानतोपितस्यासीत्पुरुषोत्तमसेवनम् ॥ ८ ॥ तेनात्यंतप्रसन्नःसन्प्रादुरासीद्धरिःस्वयम् ॥

घिर आया ॥ ४ ॥ पर्वतों को हिलाती हुई तीक्ष्ण स्पर्श वायु चल पड़ी, बिजली कड़कती हुई चमक रही थी, इस प्रकार मेघ ने अपनी गर्जना से दिशाएं भरदी ॥ ५ ॥ वर्षा की तार बंध गई, महीना भर वर्षा होती रही,सारी पृथ्वी पानी से भर गई, किन्तु पुत्रशोक की अग्नि से सन्तप्त वह ब्राह्मण कुछ भी न जान सका ॥ ६ ॥ वह तो केवल पुत्र २ पुकारता रहा, महीना भर न खाया न पिया इसी विलाप में महीना गुजर गया ॥ ७ ॥ वह महीना श्रीकृष्ण भगवान् का परमप्रिय पुरुषोत्तम मास था, ब्राह्मण को इसका ज्ञान भी नहीं था, फिर भी उससे पुरुषोत्तम भगवान् के स्मरण कीर्तन करते रहने से पुरुषोत्तम की सेवा हो ही, गई

॥ ८ ॥ उससे श्रीहरि अत्यन्त प्रसन्न होकर स्वयं प्रकट होगये। नये मेघ की भांति श्याम स्वरूप वनमाला से विभूषित ॥ ९ ॥ प्रभु जगन्नाथ भगवान् के प्रकट हो जाने से सब घन घटायें विलीन होगईं, तब ब्राह्मण ने श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम भगवान् के दर्शन किये ॥ १० ॥ तब झट पट अपनी गोदी में पड़े पुत्र के शरीर को एक तरफ जमीन पर रख कर खड़े हो गये, पत्नी के साथ

नवीनजलदश्यामोवनमालाविभूषितः ॥ ९ ॥ प्रादुर्भूतेजगन्नाथेविलीनाघनराजय ॥ ततोददर्शविप्रोसौ श्रीकृष्णंपुरुषोत्तमम् ॥ १० ॥ सहसांकगतंपुत्रदेहंभुविनिधायच ॥ सपत्नीकोनमश्चक्रे दंडवच्छ्रीहरिंमुदा ॥ ॥ ११ ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वासंस्थितःश्रीहरेःपुरः ॥ श्रीकृष्णएवशरणंममास्त्वितिविचिंतयन् ॥ १२ ॥ भगवानपितुष्टःसन्पुरुषोत्तमसेवनात् ॥ अवोचन्मधुरांवाणींबृहत्पीयूषवर्षिणीम् ॥ १३ ॥ श्रीहरिरुवाच ॥ भोभोसुदेवधन्योसिभाग्यवान्सांप्रतंभवान् ॥ त्वद्भाग्यंवर्णितुंकोवासमर्थोभुवनत्रये ॥ १४ ॥ शृणुवत्सप्रवक्ष्ये-

अत्यन्त प्रसन्नता के साथ श्रीहरि भगवान्को दण्डवत्प्रणाम किया ॥ ११ ॥ हाथ जोड़कर श्रीहरि के सामने खड़ा हो गया, श्रीकृष्ण ही मेरे आश्रय हैं, हृदय में इस प्रकार का विचार करने लगा ॥ १२ ॥ इस प्रकार पुरुषोत्तम मास की सेवा हो जाने से भगवान् परम सन्तुष्ठ होकर बहुत से अमृत की वर्षा करते हुए मधुरवाणी से बोले ॥ १३ ॥ श्रीहरि कहने लगे---हे सुदेव तुम धन्य हो, अब तो परम भाग्यशाली हो तुम्हारे भाग्यों को वर्णन करने में त्रिलोकी में कोई भी समर्थ नहीं ॥ १४ ॥ हे तपोधन, पुत्र सुनो

मैं तुम्हें तुम्हारा भविष्य कहता हूँ। हे ब्राह्मण तुम्हारे पुत्र की बारह हजार वर्ष की आयु हो जायगी ॥ १५ ॥ और तुम्हें पुत्र सुख मिलेगा प्रसन्न होकर मैंने तुम्हें यह पुत्र प्रदान कर दिया है ॥ १६ ॥ हे द्विजोत्तम ! मेरी कृपा द्वारा पुत्र का सुख पाते हुए तुम्हें देखकर देवता गन्धर्व एवं मनुष्य वैसा सुख पाने की इच्छा करेंगे, मेरी कृपा इसमें मुख्य है ॥ १७ ॥ इसमें एक

हंयत्तेभावितपोधन ॥ द्वादशाब्दसहस्रायुःपुत्रस्तेभविताद्विज ॥ १५ ॥ अतःपरंनसंदेहस्तवपुत्रोद्भवेसुखे ॥ मयायंतेसुतोदत्तःप्रसन्नेनद्विजोत्तम ॥ १६ ॥ तवपुत्रसुखंदृष्ट्वादेवगंधर्वमानवाः ॥ सस्पृहास्तेभविष्यंतिप्रसादान्मेद्विजोत्तम ॥ १७ ॥ अत्रतेकथयिष्यामिइतिहासंपुरातनम् ॥ मार्कंडेयेनमुनिनापुराप्रोक्तं रघुं नृपम् ॥ ॥ १८ ॥ पुरामुनीश्वरःकश्चिद्धनुर्नामामहामनाः ॥ पश्यन्पुत्राधिनिर्दग्धाँल्लोकान्दीनमनाअभूत ॥१९॥ अमरंपुत्रमन्विच्छंस्तपस्तेपेसुदारुणम् ॥ सहस्राब्देगतेकालेदेवास्तमब्रुवन्मुनिम् ॥ २० ॥ वरंवरयभद्रंतेय-

पुरातन इतिहास मैं तुम्हें सुनाता हूं वहीं इतिहास पहिले रघुराजा के प्रति मार्कण्डेय मुनि सुना चुके हैं ॥ १८ ॥ प्राचीन काल में धनुः नाम के मनस्वी महामुनि हुए हैं उन्होंने देखा कि यह सब लोक पुत्र सम्बन्धी मानसिक पीड़ाओं से दग्ध हो रहे हैं, तब तो उनका मन अतीव दुःखित हुआ ॥ १९ ॥ उन्होंने चाहा कि मुझे अमर रहने वाला पुत्र प्राप्त हो इस कारण उन्होंने कठोर तप करना आरम्भ कर दिया एक हजार वर्ष तक वे तप करते रहे, तब देवताओं ने आकर मुनिसे कहा ॥ २० ॥ हे मुनिवर

हम तुम्हारे तीव्र तप से प्रसन्न हो गये हैं अब मन वांछित वर मागों तुम्हारा कल्याण हो ॥ २१ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर वे अमृत के समान तृप्त हो,कर बोले-मुझे बुद्धिमान अमर पुत्र दीजिये ॥ २२ ॥ सब देवताओं ने कहा पृथ्वी पर ऐसा तो कभी नहीं हो सकता। उत्तर में मुनि बोले-अच्छा तो फिर किसी निमित्त तकबड़ी आयु वाला पुत्र हो

स्तेमनसिवांछितः ॥ प्रसन्नाःस्मोवयंसर्वेतीव्रेणतपसातव ॥ २१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इतिदेववचः श्रुत्वासुतृप्तोमृतसन्निभम् ॥ वव्रे तपोधनःपुत्रममरंबुद्धिशालिनम् ॥ २२ ॥ तमूचुर्निर्जराःसर्वेनैवंभूतोस्ति भूतले ॥ पुनराहमुनिर्देवान्निमित्तायुर्भवत्विति ॥ २३ ॥ सुराःप्रोचुर्निमित्तंकिंवदसोप्यवदन्मुनिः ॥ असौ महान्गिरिर्यावत्तावदायुर्विधीयताम् ॥ २४ ॥ एवमस्त्वितिसंपाद्यसेंद्रादेवादिवंययुः ॥ धनुःशर्मासुतंलेभेका लेनाल्पेनतादृशम् ॥ २५ ॥ सपुत्रोववृधेतस्यतारापतिरिवांबरे ॥ प्राप्ते तुषोडशेवर्षेपुत्रंप्राहमुनीश्वरः ॥ ॥ २६ ॥ हेवत्समुनयःसर्वेनावज्ञेयाःकदाचन ॥ शिक्षितोपितथापुत्रःसोद्वेगानकरोन्मुनीन् ॥ २७ ॥

॥ २३ ॥ देवता बोले—निमित्त क्या ? यह भी कहदो। मुनि बोले--देखो यह जो सामने महान् पर्वत हैं, यह जब तक रहे तभी तक आयुर्वान् ॥ २४ ॥ देवता उन्हें 'एवमस्तु' ऐसा ही हो यह कहकर स्वर्ग में चलेगये। धनुः शर्म्मा ने भी थोड़े समय के बाद वैसा ही पुत्र प्राप्त किया ॥ २५ ॥ तब वह मुनि पुत्र आकाश में चन्द्रमा की भांति बढ़ने लगा, जब वह षोड़ष वर्ष का हुआ तो उससे मुनीश्वर पिता बोले ॥ २६ हे पुत्र ! मुनिजनों का कभी अनादर न करना, इस प्रकार पिता ने उसे शिक्षा भी दे रखी

थी फिर भी मुनियों को निरादर करने लगा ॥ २७ ॥ क्योंकि वह निमित्तायु था, इसी बल पर उन्मत्त होकर वह ऋषि ब्राह्मणों को कुछ नहीं समझता था। एक बार बड़े क्रोधी महिष नाम के मुनि ॥ २८ ॥ विधि पूर्वक शालिग्राम की शुभ्र शिला का पूजन कर रहे थे, उसी समय वह निमित्तायु वहाँ आ पहुँचा, उस शिला को झट पट उठाकर ॥ २६ ॥ अपनी चंचलता से गहरे पानी

निमित्तायुर्बलोन्मत्तोब्राह्मणानवमन्यते ॥ कदाचिन्महिषोनाममुनिःपरमकोपनः ॥ २८ ॥ पूजयामासविधिनाशालग्रामशिलांशुभाम् ॥ तदानींससमागत्यतामादायत्वरान्वितः ॥ २६ ॥ चिक्षेपनिजचांचल्यात्कूपेपूर्णजलेहसन् ॥ ततःक्रोधसमाविष्टःकालरुद्रइवापरः ॥ ३० ॥ शशापधनुषःपुत्रमद्यैवम्रियतामयम् ॥ तमृतंपुत्रमालक्ष्यदध्यौमनसिकारणम् ॥३१॥ निमित्तायुरयंदेवैःकृतोयंधनुषःसुतः ॥ इतिचिंतापरेणाशुनिःश्वासःप्रकटिकृतः ॥ ३२ महिषाःकोटिशोजातास्तैर्गिरिःशकलीकृतः ॥ तदानीमृतिमापन्नोमुनिपुत्रोतिदुर्मदः ॥ ३३ ॥ धनुःशर्मातिदुःखेनविललापमुहुर्मुहुः ॥ विलप्यबहुधाविप्रोगृह्यपुत्रकलेवरम् ॥ ३४ ॥

वाले कूप में हंसते २ फैंक दिया। तब तो दूसरे भयानक काल की तरह क्रोध में आकर उस मुनि ने ॥ ३० ॥ धनुः शर्मा के पुत्र को शाप दे डाला कि यह आज ही मर जाय। परन्तु वह न मरा, ऐसा देखकर वह कारण सोचने लगा ॥ ३१ ॥ अरे! इस धनुः के पुत्र को तो देवताओं ने निमित्तायु कर दिया है इस चिन्ता में पड़ कर ऋषि ने शीघ्र एक श्वास निकाला ॥ ३२ ॥ उस श्वास से करोंड़ों भैंसे पैदा हो गये, उन्होंने जाकर पर्वत को टुकड़े २ कर डाला, उसी समय वह दुर्मद मुनि का पुत्र मर गया।

॥ ३३ ॥ धनुः शर्म्मा अत्यन्त दुःख से बार बार विलाप करने लगे, विलाप करते २ पुत्र के शरीर को लेकर ॥ ३४ ॥ पुत्र दुःख से पीड़ित होकर चिता की अग्नि में प्रवेश कर गये। इस प्रकार हठ पूर्वक पुत्र पाने वाले कहीं भी सुखी नहीं होते ॥३५॥ भगवान् बोले-हे तपोधन! यह पुत्र तो तुझे गरुड़ ने दिया है इसी कारण तू लोक में पुत्रपाकरप्रशंसनीयहोगा।३६।पुरुषोत्तम मास के

प्रविवेशचितावन्हिंपुत्रदुःखातिपीड़ितः ॥ एवंहठात्पुत्राप्येनसुखंयांतिकुत्रचित् ॥ ३५ ॥ वैनतेयेनयोदत्तस्त-नयोऽयंतपोधन ॥ तेनत्वंपुत्रवाँल्लोकेस्पृहणीयोभविष्यसि ॥ ३६ ॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यात्प्रसन्नेनमयानघ ॥ सुचिरंस्थापितोयंहितनयःसुखदोस्तुते ॥ ३७ ॥ गार्हस्थ्यमतुलंभुक्त्वासहपुत्रेणसर्वदा ॥ ततस्त्वंब्रह्मणोलो-कंगत्वातत्रमहत्सुखम् ॥ ३८ ॥ दिव्याब्दवर्षसाहस्रं भुक्त्वागंतासिभूतले ॥ ततोराजाचक्रवर्तीभविष्यसिद्वि-जोत्तम ॥ ३९ ॥ दृढधन्वेतिविख्यातःसमृद्धबलवाहनः ॥ संवत्सराणामयुतंराज्यंभोक्ष्यसिपार्थिवम् ॥४०॥

महात्म्य से प्रसन्नहोकर मैंने तुम्हारे इस पुत्र को चिरजीवी कर दिया है तुमको यह सुख देगा॥३७॥पुत्रके साथ तू गृहस्थ धर्म का सुख सर्वदा भोगकर ब्रह्मलोक में जायगा वहां पर भी तुझे महान् सुख होगा ॥ ३८ ॥ वहां एक हजार दिव्य वर्ष भोग भोगकर पृथ्वी तल पर तेरा जन्म होगा हे द्विजोत्तम! तब तू चक्रवर्ती राजा होगा ॥ ३९ ॥ दृढ़धन्वा तेरा नाम होगा बल तथा वाहन आदि से तू समृद्ध होगा राजा होकर तू दश हजार वर्ष सारी पृथ्वी का राज्य करेगा ॥ ४० ॥ उस समय तेरा बल तथा ऐश्वर्य

इन्द्र से भी अधिक होगा यही गौतमी आकर तुम्हारी अर्धांगिनी पटरानी होगी ॥ ४१ ॥ इसका नाम गुण सुन्दरी पति की सेवा करने वाली होगी । उस जन्म में राजनीति में निपुण तेरे चार पुत्र होंगे ॥ ४२ ॥ और एक कन्या भी सुशीला महाभागा अत्यन्त सुन्दरी होगी हे महाभाग ! देव दानवों को भी दुर्लभ अनेक भोग भोगकर ॥४३॥ उस समय तुम पृथ्वी पर अपने आप को कृतार्थ

अव्याहतबलैश्वर्यमाखंडलपदाधिकम् ॥ गौतमीयंतवांगार्धहारिणीमहिषीतदा ॥ ४१ ॥ पतिसेवारतानित्यंनाम्नाचगुणसुँदरी ॥ चत्वारस्तेसुताभाव्याराजनीतिविशारदाः ॥ ४२ ॥ कन्यकाचमहाभागासुशीलासुवरानना ॥ भुक्त्वाभोगान्महाभागसुरासुरसुदुर्लभान् ॥ ४३ ॥ कृतार्थोहंधरापीठेइत्यज्ञानविमोहितः ॥ अतिदुस्तरसंसारविषयाकृष्टमानसः ॥ ४४ ॥ यदाविस्मरसेविष्णुंसंसारार्णवतारकम् ॥ अयंतेतनयोविप्रशुकोभूत्वातदावने ॥ ४५ ॥ वटवृक्षंसमाश्रित्यत्वामेवंबोधयिष्यति ॥ वैराग्योत्पादकंपद्यंपठन्नेवमुहुर्मुहुः ॥ ४६ ॥ श्रुत्वावाक्यंशुकप्रोक्तंदुर्मनागृहमेष्यसि ॥ अथचिंतार्णवेमग्नंत्यक्त्वाविषयजंसुखम् ॥ ४७ ॥

मान बैठोगे, इस प्रकार के अज्ञान से मोहित होकर तुम्हारा मन अत्यन्त दुस्तर सांसारिक विषय वासनाओं की ओर खिंच जायगा ॥ ४४ ॥ तब तुम संसार समुद्र से तारने वाले विष्णु को भी भूल जाओगे, ठीक उसी समय यही तुम्हारा पुत्र द्विज ! तोता होकर वन में ॥ ४५ ॥ वड़ के वृक्ष पर बैठा हुआ तुम्हें प्रबोध देगा, संसार से वैराग्य प्राप्त कराने वाला श्लोक बार बार पढ़ेगा ॥ ४६ ॥ तब तुम तोते के वचन का आशय न समझ कर उदास होकर घर पहुंचोगे वहां विषय सुख को छोड़कर चिन्ता समुद्र में निमग्न

हो जाओगे ॥ ४७ ॥ उस समय हे ब्राह्मणोत्तम वाल्मीकि ऋषी आकर तुम्हें प्रबोध देंगे उनके कहने से तुम्हारे सब संशय निवृत्त होंगे फिर विषय वासना को त्याग कर श्रीहरि के पद को ॥ ४८ ॥ पत्नी के साथ प्राप्त होगा, जिससे फिर लौटना ही नहीं पड़ता, अभी इस प्रकार महा विष्णु कह ही रहे थे, तब वह ब्राह्मण पुत्र उठ खड़ा हुआ ॥ ४९ ॥ स्त्री पुरुष दोनों ने पुत्र को देखा

वाल्मीकिस्त्वांसमागत्यबोधयिष्यतिभूसुर ॥ तद्वाक्यैश्छिन्नसंदेहस्त्यक्त्वालिंगंहरेःपदम् ॥ ४८ ॥ गमिष्यसिसपत्नीकःपुनरावृत्तिवर्जितम् ॥ वदत्येवंमहाविष्णौसमुत्तस्थौद्विजात्मजः ॥ ४९ ॥ दंपतीतौसुतंदृष्ट्वामहानंदौबभूवतुः ॥ सुराःसर्वेपिसंतुष्टाववृषुःकुसुमाकरान् ॥ ५० ॥ ननामशुकदेवोपिश्रीहरिंपितरौचतौ ॥ गरुडोप्यतिसंहृष्टस्तंदृष्ट्वासमुतंद्विजम् ॥ ५१ ॥ ब्राह्मणश्चकितोभूत्वाननामश्रीहरिंतदा ॥ बद्धांजलिपुटोविप्रःप्रोवाचजगदीश्वरम् ॥ ५२ ॥ हृदिस्थंसंशयंछेत्तुँ हर्षगद्गदयागिरा ॥ ५३ ॥ चत्वार्यब्दसहस्त्रमेवमनिशंतप्तं तपोदुष्करंतत्रागत्यवचस्त्वयानिगदितंयन्मांहरेकर्कशम् ॥ हेवत्साद्यविलोकितंतवसुतोनैवास्तिनैवा-

बड़े आनन्द को प्राप्त हुए, एवं सारे देवता भी सन्तुष्ठ होकर उस पर पुष्पों की वर्षा करने लगे ॥ ५० ॥ शुकदेव भी उठकर श्रीहरि तथा पितामाता को प्रणाम करने लगा। उस ब्राह्मण पुत्र को देखकर गरुड़ अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ ५१ ॥ ब्राह्मण ने आश्चर्य में आकर श्रीहरि को प्रणाम किया। हाथ जोड़कर वह विप्र जगदीश्वर को कहने लगा ॥ ५२ । उसके हृदय में संशय था उसे निवारण करने को हर्ष से मधुर वाणी द्वारा बोला ॥ ५३ ॥ हे हरे ! चार हजार वर्ष तक मैं दिन रात कठोर तप करता रहा उस

समय आकर आपने मुझे कठोर वचन कहे कि हे पुत्र ! तुम्हें पुत्र नहीं है तेरा भाग्य ऐसा है, और फिर उस वचन का उल्लंघन करके अब मेरे मरे पुत्र को आकर जीवित कर दिया, इन दोनों बातों का कारण कृपा करके कहें ॥ ५४ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीयां अष्ठादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

स्तिहितद्वाक्यंव्यतिलंघ्यमेमृतसुतोत्थानेचहेतुं वद ॥ ५४ ॥ इतिश्रीवृहन्नारदीपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्ये श्रीनारायणनारदसंवादेसुदेवपुत्रजीवनंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

सूतउवाच ॥ इतिब्रुवाणंप्राचीनंमुनिमाहतपस्विनः ॥ प्रीणयन्निवसद्वाचानारदोमुनिसत्तमः ॥ १ ॥ किमुवाचोत्तरंब्रह्मन्सुदेवंतपसांनिधिम् ॥ प्रसन्नोभगवान्विष्णुस्तन्मेब्रूहितपोनिधे ॥२॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्थमावेदितोविष्णुःसुदेवेनमहात्मना ॥ प्रत्याहप्रीणयन्वाचाभगवान्भक्तवत्सलः ॥ ३ ॥ हरिरुवाच ॥ द्विजराजकृतंयत्तेनैतदन्यःकरिष्यति ॥ नतद्धेत्तिभवान्नूनंयेनाहंतुष्टिमाप्तवान् ॥ ४ ॥ अयंममप्रियोमासः

श्री सूतजी बोले—इस प्रकार कथा सुनाते हुए श्रीनारायण जी को मधुर वाणी से प्रसन्न करते हुए श्रेष्ठ मुनि नारद जी कहने लगे ॥ १ ॥ हे ब्रह्मन् सुदेव शर्म्मा परमतपस्वी ब्राह्मण को प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु ने क्या उत्तर दिया, हे तपोनिधे ! कृपा करके यह सुनावें ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार सुदेवशर्मा महात्माने जब श्रीविष्णुजी के सम्मुख प्रार्थना की तब प्रसन्न होकर भक्त वत्सल श्री हरि कहने लगे ॥ ३ ॥ हे द्विजराज ! जैसा कि तुमने तप किया है वैसा और कोई नहीं कर सकता,

किन्तु तू यह नहीं जानता कि मैं किस बात पर प्रसन्न होता हूं ॥ ४ ॥ यह मेरा परम प्रिय पुरुषोत्तम मास आया हुआ है, उसकी सेवा तूने स्त्री के साथ शोक में निमग्न होकर भी की है ॥ ५ ॥ हे तपोनिधे ! इस महीने में एक भी उपवास जो पुरुष कर लेता है, हे श्रेष्ठ ब्राह्मण ! उसके अनन्त पाप भस्म हो जाते हैं तब वह विमान पर चढ़कर वैकुण्ठ में चला जाता है ॥ ६ ॥

प्रयातःपुरुषोत्तमः ॥ तत्सेवातेसमजनिशोकमग्नस्यसस्त्रियः ॥ ५ ॥ एकमप्युपवासयःकरोत्यस्मिंस्तपोनिधे ॥ असावनंतपापानिभस्मीकृत्यद्विजोत्तम ॥ सुरयानंसमारुह्यवैकुण्ठंयातिमानवः ॥ ६ ॥ मासमात्रंनिराहारो-ह्यकालजलदागमात् ॥ त्रिषुकालेषुतेस्नानंसंजातंप्रतिवासरम् ॥ ७ ॥ अभ्रस्नानंत्वयालब्धंमासमात्रंतपोधन उपवासाश्चतेजातातावन्मात्रमखंडिताः ॥ ८ ॥ शोकसागरमग्नस्यपुरुषोत्तमसेवनम् ॥ अजानतोपिसंजा-तंचेतनारहितस्यते ॥ ९ ॥ त्वदीयसाधनस्यास्यप्रमाणंकःकरिष्यति ॥ एकतःसाधनान्येववेदोक्तान्दिवया-

तूतो महीना भर उपवास व्रत में निराहार रहा है, अकाल वर्षा के आजाने से तीनों काल तेरा प्रतिदिन का स्नान भी होता रहा है ॥ ७ ॥ हे तपोधन तूने आकाश स्नान प्राप्त किया है, महीना भर तेरे अखण्ड उपवास हुए हैं ॥ ८ ॥ शोक सागर में निमग्न रहने के कारण तू चेतना रहित होकर पुरुषोत्तम मास नहीं जान सका बिन जाने भी तुमसे पुरुषोत्तम मास की सेवा हो ही गई है ॥ ९ ॥ तुम्हारे इस साधन का तोल कौन कर सकता है । ब्रह्माजी ने लकड़ी के एक पलड़े पर वेदोक्त सब साधनों को संग्रह

करके रखा ॥ १० ॥ एवं दूसरे पलड़े पर पुरुषोत्तम मास को रखा, देवताओं के सन्निधान तोलने लगे ॥ ११ ॥ तब अन्य सब साधन बहुत कम हो गये, पुरुषोत्तम मास सबसे भारी हुआ। इसी कारण पृथ्वी के सब लोग पुरुषोत्तम की पूजा करने लगे ॥ १२ ॥ हेतपोधन! पुरुषोत्तममास सब लोकों में आता है। फिर भी पृथ्वी लोक पर इसका पूजन सफल होता है ॥ १३ ॥

निवे ॥ १० ॥ तानिसर्वाणिसंगृह्यह्यकृतःपुरुषोत्तमम् ॥ तोलयामासदेवानांसन्निधौचतुराननः ॥ ११ ॥ लघून्यन्यानिजातानिगुरुश्चपुरुषोत्तमः ॥ तस्माद्भूमिस्थितैर्लोकैःपूज्यतेपुरुषोत्तमः ॥ १२ ॥ पुरुषोत्तममासस्तुसर्वत्रास्तितपोधन ॥ तथापिपृथिवीलोकेपूजितःसफलोभवेत् ॥ १३ ॥ तस्मात्सर्वात्मनावत्सभवान्धन्योस्तिसांप्रतम् ॥ यदस्मिंतश्चवानुग्रंतपःपरमदारुणम् ॥ १४ ॥ मानुषंजन्मसंप्राप्यमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ स्नानदानादिरहितादरिद्राजन्मनि ॥ १५ ॥ तस्मात्सर्वात्मनासेव्योमत्प्रियःपुरुषोत्तमः ॥ समेवल्लभतांयातिधन्योभाग्ययुतोनरः ॥ १६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एवमुक्त्वाहरिःशीघ्रंजगामजगदीश्वरः ॥ वैनतेयं-

अतएव हे वत्स तुम सर्वात्म भाव से अब धन्य हो तुमने इसी मास में परम कठोर तप किया है ॥ १४ ॥ मनुष्य जन्म पाकर श्रीपुरुषोत्तम मास के आने पर जो पुरुष स्नान दान आदि नहीं करते वे जन्म २ में दरिद्र रहते हैं ॥ १५ ॥ इसी कारण प्रयत्न पूर्वक सर्वात्म भाव से मेरे प्रिय पुरुषोत्तम मास की सेवा अवश्य कर्तव्य है, पुरुषोत्तम की सेवा करने वाले पुरुष के भाग्य धन्य हैं एवं वह मुझे अत्यन्त प्रिय है ॥ १६ ॥ श्रीनारायण बोले-ऐसा कह कर मुनिजी! श्रीहरि भगवान् तो गरुड़ पर चढ़कर

तत्काल अपने निर्मल वैकुण्ठ में पधारे ॥ १७ ॥ सुदेव शर्मा पत्नी के साथ पुरुषोत्तम मास के सेवन द्वारा अपने मृत पुत्र शुक को जीवित देखकर अत्यन्त आनन्दित हुआ ॥ १८ ॥ बिना जाने मुझसे पुरुषोत्तम सेवन हुआ है यही तप सफल हुआ है तभी तो मर कर भी मेरा पुत्र फिर जी उठा है ॥ १६ ॥ इस प्रकार का अन्य कोई भी मास दिखाई नहीं देता, न कभी देखा है।

समारुह्यवैकुण्ठममलंमुने ॥ १७ ॥ सपत्नीकःसुदेवस्तुमुमुदेहर्निशंभृशम् ॥ मृतोत्थितंशुकंदृष्ट्वापुरुषोत्तम सेवनात् ॥ १८ ॥ अजानतोममैवासीत्पुरुषोत्तमसेवनम् ॥ तदेवसफलंजातंयेनपुत्रोमृतोत्थितः ॥ १६ ॥ अहोएतादृशोमासोनैवदृष्टःकदाचन ॥ इत्येवंविस्मयाविष्टस्तंमासंसमपूजयत् ॥ २५ ॥ तेनपुत्रेणमुमुदेसपत्नीकोद्विजोत्तमः ॥ पितरंनंदयामासशुकदेवोपिसत्कृतैः ॥२१॥ स्तुवन्मासंचविष्णुंचपूजयामाससादरम् ॥ कर्ममार्गस्पृहांत्यक्त्वाभक्तिमार्गैकसस्पृहः ॥ २२ ॥ सर्वदुःखापहंमासंवरिष्ठंपुरुषोत्तमम् ॥ जपहोमादिभिस्तस्मिन्नभजच्छ्रीहरिंस्त्रिया ॥ २३ ॥ भुक्त्वाथविषयान्सर्वान्सहस्राब्दमहर्निशम् ॥ जगामपरमंलोकंसपत्नी-

इस प्रकार के आश्चर्य में आकर अब वह उसी मास की पूजा करने लगा ॥ २० ॥ उस पुत्र को पाकर पति पत्नी आनन्द में रहने लगे, एवं शुकदेव भी सत्कार द्वारा पिता को प्रसन्न रखने लगा ॥ २१ ॥ उस महीने की स्तुति तथा विष्णु पूजन वह आदर से करने लगा। कर्म मार्ग की सब चाहना छोड़ कर भक्ति मार्ग में रहने लगा ॥ २२ ॥ सब दुःखों के नाशक सर्व श्रेष्ठ पुरुषोत्तम मास की पूजा के निमित्त ही स्त्री के साथ उस ब्राह्मण के जप होम आदि होने लगे उसीके द्वारा श्रीहरि का भजन होने

लगा ॥ २३ ॥ इसी प्रकार एक सहस्र वर्ष पर्यन्त दिन रात विषय सम्बन्धी सब उत्तम भोगों को भोग कर पत्नी के साथ वह ब्राह्मण परम लोक में प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ वह परमलोक वैकुण्ठ योगी जनों के लिये भी दुष्प्राप्य है फिर यज्ञ करने वालों को कहाँ से प्राप्त हो, जहाँ पहुँच कर भगवान् के सन्निधान निवास करते हुए कोई शोक नहीं रहता ॥ २५ ॥ वहाँ पत्नी के साथ

कोद्विजोत्तमः ॥ २४ ॥ योगिनामपिदुष्प्रापंयाजकानांतुतत्कुतः ॥ यत्रगत्वानशोचंतिवसंतोहरिसन्निधौ ॥ ॥ २५ ॥ तत्रत्यंसुखमासाद्यसपत्नीकोभवंगतः ॥ सएवदृढधन्वात्वंप्रथितःपृथिवीपतिः ॥ २६ ॥ पुरुषोत्तममासस्यसेवनात्सकलर्द्धिभाक् ॥ महिषीयंपुराराजन्गौतमीपतिदेवता ॥ २७ ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंपृष्टवान-सियन्मम ॥ शुकस्तुतवभूपालपूर्वजन्मनियःसुतः ॥ २८ ॥ शुकदेवइतिख्यातोहरिणायोनुजीवितः ॥ द्वादशाब्दसहस्रायुर्भुक्त्वावैकुण्ठमेयिवान् ॥ २९ ॥ सएवारण्यसरसिवटवृक्षंसमाश्रितः ॥ त्वामेवागतमा-

सुख प्राप्त करके फिर यहाँ आकर तुमने जन्म लिया है तुम वही सुदेव इस जन्म में पृथ्वी पति दृढ़धन्वा नाम करके प्रसिद्ध हो ॥ ॥ २६ ॥ उसी पुरुषोत्तम मास की सेवा करने से ही तुम महान् ऋद्धि शाली हुए हो । हे राजन् ! यह तुम्हारी रानी वही पतिव्रता गौतमी है ॥ २७ ॥ हे राजन् ! जैसा तुमने पूछा था वह सब कुछ मैंने तुम्हें सुना दिया । हे भूपाल ! जो तुम्हारे पूर्व जन्म में शुक पुत्र हुए हैं ॥ २८ ॥ और जिन्हें श्रीहरि भगवान् ने जीवित किया था वे शुकदेवजी नाम करके प्रसिद्ध हुए वही बारह हजार वर्ष की आयु भोगकर वैकुण्ठ को प्राप्त हुए हैं ॥ २९ ॥ उन्होंने ही वनमें तालाब के किनारे तोते के रूप में बड़ वृक्ष पर

वैठ कर तुम्हे आया देखकर अपने पूर्व जन्म के पिता के नाते उपदेश दिया ॥ ३० ॥ उन्होंने यह विचार किया था–कि यह मेरे हित का उपदेश कर ने वाले प्रत्यक्ष देवता है अब इस समय विषयरूप सर्प से दूषित संसार सागर में डूब रहे हैं ॥ ३१ ॥ उन्हें वड़ी दया आई, विचार करने लगे, यदि इस समय अपने पूर्व जन्मके पिता राजा को ज्ञान न दूं तो मुझ को भी बन्धन है॥३२॥

लोक्यपितरंपूर्वजन्मनः ॥ ३० ॥ हितानामुपदेष्टारंप्रत्यक्षंदैवतंमम ॥ संसारसागरेमग्नंविषयव्यालदूषिते ॥ ३१ ॥ अत्यंतकृपयाविष्टश्चिंतयामासकीरजः ॥ नबोधयामिचेद्भूपंममापिबंधनंभवेत् ॥ ३२ ॥ पुन्नामनरकाद्यस्तुत्रायतेपितरंसुतः ॥ इतिश्रुत्यर्थबोधोपिस्यादेवाद्यान्यथामम ॥ ३३ ॥ तस्मादुपकरिष्यामिपितरंपूर्वजन्मनः ॥ अवधार्यवचश्चेत्थंकीरजोऽजीगदन्नृप ॥ ३४ ॥ इत्येतत्कथितंसर्वंयद्यत्पृष्टंत्वयानघ ॥ अतःपरंगमिष्यामिसरयूंपापनाशिनीम् ॥ ३५ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्येवंप्रथमजनुश्चरित्रमुक्त्वाभूप·

पुत्र शब्द का अर्थ भी यही है कि जो पुं नाम नरक से पिता की रक्षा करे, मैं वेद के इस अर्थ को भली भान्ति जानता हूं यदि रक्षा न की तो मेरा यह ज्ञान भी आज अन्यथा चला जायगा ३३ ॥ इसी कारण मैं आज पूर्व जन्म के पिता का उपकार करूंगा ऐसा विचार करके उन्हों ने तोते के रूप में हे राजन् तुम्हें उपदेश दिया ॥ ३४ ॥ हे महाराज ! अब तुम्हारा संशय निवृत्त हो गया अब पापनाशिनी सरयू पर जाऊंगा ॥ ३५ ॥ श्री नारायण बोले—इस प्रकार परमयशस्वी महाराज दृढ़ धन्वा के पूर्व जन्म का

वृतान्त सुनाकर जब वे मुनि जी जाने लगे तब उन्हें बड़े पुण्यात्मा राजाने अनुनय पूर्वक निवेदन किया ॥ ३६ ॥
॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां एकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥ १६ ॥
सूतजी बोले—श्रीनारदजी ने जब दृढ़ धन्वा राजा के पूर्व जन्म का वृतान्त श्रीनारायण के मुंह से सुना तब वे अतृप्त

स्यप्रथितयशस्विनश्चिराय ॥ गच्छंतंमुनिमनुनीयराजराजःप्रावोचत्किमपिनमन्नगण्यपुण्यः ॥ ३६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्ये श्रीनारायणनारदसंवादेवाल्मीकिनोक्तदृढधन्वोपाख्यानेपुरुषोत्तम-माहात्म्यकथनंनामनैकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सूतउवाच ॥ नारायणमुखाच्छ्रुत्वाप्राक्तनंदृढधन्वनः ॥ नातितृप्तमनाविप्रानारदःपृष्टवान्मुनिम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ किमुवाचमहाराजोवाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ तन्मेवदविनीतायतपोधनसुविस्तरम् ॥ २ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्येहंयदुक्तं दृढधन्वना ॥ अनुनीयमहाप्राज्ञंवाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ ३ ॥

होकर फिर मुनि जी से पूछने लगे ॥ १ ॥ नारद बोले—हे मुनिवर। उन महाराजा दृढ़ धन्वा ने मुनिवर श्रीवाल्मीकिजी को क्या निवेदन किया, हे तपोधन मैं विनय करता हूं उसे विस्तार पूर्वक सुनाइये ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले-हे नारदजी सुनो जो अनुनय विनय पूर्वक दृढ़धन्वाने महा प्राज्ञ वाल्मीकिजी से निवेदन किया था ॥ ३ ॥ दृढ़धन्वा ने कहा था-कि हे मुनिजी ! इस

पुरुषोत्तम मास की सेवा मोक्षार्थी पुरुषों को किस प्रकार करनी चाहिये, किसकी पूजा कैसी होनी चाहिये दान कैसा हो एवं विधि क्या है ॥ ४ ॥ यह मैं सर्वलोकहित के लिये भी पूछ रहा हूं आप जैसे तो लोगों की भलाई के लिये विचरण करते हैं, अतएवं कृपाकरके यह सब कहें ॥ ५ ॥ यह महीना तो साक्षात् पुरुषोत्तम भगवान् हैं, इसकी सेवा करने से महान् पुण्य है यह

दृढधन्वोवाच ॥ पुरुषोत्तममासोयंकथंकार्योमुमुक्षुभिः ॥ कीदृशीकस्यपूजाचकिंदानंकोविधिर्मुने ॥ ४ ॥ एतत्सर्वसमाचक्ष्वसर्वलोकहितायमे ॥ सर्वलोकहितार्थायचरंतिहिभवादृशाः ॥ ५ ॥ असौमासःस्वयंसाक्षाद्भगवान्पुरुषोत्तमः ॥ तस्मिन्कृतेमहत्पुण्यंत्वन्मुखात्संश्रुतंमया ॥ ६ ॥ पूर्वजन्मन्यहंभूत्वासुदेवोब्राह्मणोत्तमः ॥ विधिनाकृतवान्मासंदृष्ट्वापुत्रंमृतोत्थितम् ॥ ७ ॥ अजानतोपिमेब्रह्मन्पुत्रशोकादचेतसः ॥ निराहारस्यसततंगतश्चपुरुषोत्तमः ॥ ८ ॥ तस्याप्येतत्फलंजातंशुकदेवोमृतोत्थितः ॥ अनुभूतमिमंमासंसेवेहरिणोदितः ॥ ९ ॥ इहजन्मनितत्सर्वंविस्मृतंमेतपोधन ॥ एतत्पूजाविधानंमेवदविस्तरतःपुनः ॥ १० ॥

मैं आपके मुखसे सुन चुका हूं ॥ ६ ॥ पूर्व जन्म में सुदेव नाम के उत्तम ब्राह्मण होते हुए मैंने विधि पूर्वक इस मास की सेवा की थी जिससे मेरा मृत पुत्र भी जीवित हुआ यह मैं देख चुका हूं ॥ ७ ॥ हे ब्रह्मन् यद्यपि मैंने पुत्र शोक से मूर्छित होकर निराहार रह कर विना जाने पुरुषोत्तम मास निरंतर गुजार दिया था ॥ ८ ॥ फिर भी यह फल मिला शुकदेव मर कर उठा, यह श्रीहरि भगवान् ने आकर कहा, इस प्रकार इस मास की सेवा का मैंने अनुभव कर लिया है ॥९॥ और इस जन्म में हे तपोधन !

वह मुझे सब भूल गया है अब इसकी पूजा का विधान फिर से मुझे विस्तार पूर्वक समझावे ॥ ११ ॥ वाल्मीकि जी बोले-सुनिये इस मास के प्रथम दिन से प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठ पड़े, उस समय ब्रह्म का चिन्तन करे। तब नैऋत्य दिशामें चल पड़े, हाथ में एक बड़ा सा पात्र जल का भरा हुआ हो ॥ ११ ॥ पुरुषोत्तम मास का व्रत धारण करने वाला पुरुष इसी प्रकार ग्राम से

वाल्मीकिरुवाच ॥ ब्राह्मे मुहूर्तेचोत्थायपरंब्रह्मविचिंतयेत् ॥ ततोव्रजेन्नैर्ऋतांशांवृहत्सोदकभाजनः ॥ ११ ॥ ग्रामाद्दूरतरंगच्छेत्पुरुषोत्तमसेवकः ॥ दिवासंध्यासुकर्णस्थब्रह्मसूत्रउदङ्मुखः ॥ १२ ॥ अंतर्धायतृणैर्भूमिंशिरःप्रावृत्यवाससा ॥ वक्त्रंनियम्ययत्नेननष्ठीवेन्नोच्छ्वसेदपि ॥ १३ ॥ कुर्यान्मूत्रपुरीषंचरात्रौचेद्दक्षिणामुखः ॥ गृहीतशिश्नश्चोत्थायगृहीतशुचिमृत्तिकः ॥ १४ ॥ गंधलेपक्षयकरंकुर्याच्छौचमतंद्रितः ॥ एकालिंगेगुदेपंचत्रिर्वामेदशचोभयोः ॥ १५ ॥ द्विसप्तपादयोश्चैवगार्हस्थ्यंशौचमुच्यते ॥ कृत्वाशौचंतुप्रक्षाल्य-

दूर जाकर दिन हो या सायं हो यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ावे, फिर उत्तर की ओर मुंह करके ॥ १२ ॥ पहिले पृथ्वी को तिनकों से ढक लेवे, उसका सिर भी साफे से ढका हो, मुँह को प्रयत्न से बन्द करके बैठ जावे, न थूके, न श्वास छोड़े ॥ १३ ॥ बैठकर मल मूत्र करे, यदि रात हो तो दक्षिण की ओर मुँह करले, मल मूत्र त्याग कर खड़ा हो शौच करने के लिये शुद्ध मिट्टी उठा ले ॥ १४ ॥ दुर्गन्धि को मिट्टी से हटावे एक बार लिंग पर पांच बार गुदा पर मिट्टी मर्दन करके सावधानता से शौच करे

जलसे धोवे फिर वांये हाथ,में तीन बार मिट्टी लगाकर फिर दस बार दोनों हाथो में मिट्टी लगावे ॥१५॥फिर चौदह बार दोनों पैरों को मिट्टी मर्दन करे, यह गृहस्थियो के लिये शौच कहा है, इस प्रकार शौच करके मिट्टी जल द्वारा हाथ पैर धोवे ॥ १६ ॥ यह शौच तीर्थ जल से न करे साथ में लाये हुए जल द्वारा करे । तीर्थ जलसे तो एक हाथ भर का स्थान छोड़ कर शुद्ध करे ॥ १७ ॥

पादौहस्तौचमृज्जलैः ॥ १६ ॥ तीर्थशौचंनकुर्वीतकुर्वीतोद्धृतवारिणा ॥ अरत्निद्वयसंचारित्यक्त्वाकुर्याद-नुद्धृते ॥ १७॥ पश्चात्तच्छोधयेत्तीर्थमशुद्धमन्यथाहितत् ॥ एवंशौचंप्रकुर्वीतपुरुषोत्तमसद्व्रती ॥१८॥ ततः षोडशगंडूषान्प्रकुर्याद् द्वादशैववा ॥ मूत्रोत्सर्गेतुगंडूषानष्टौवाचतुरोगृही ॥ १६ ॥ उत्थायनेत्रेप्रक्षाल्यदं-तकाष्ठंसमाहरेत् ॥ इमंमंत्रंसमुच्चार्यदंतधावनमाचरेत् ॥ २० ॥ आयुर्बलंयशोवर्चःप्रजाःपशुवसूनिच ॥ ब्रह्मप्रज्ञांचमेधांचत्वंनोदेहिवनस्पते ॥ २१ ॥ अपामार्गबादरवाद्वादशांगुलमव्रणम् ॥ कनिष्ठांगुलिवत्स्थू-

उसके अनन्तर तीर्थ शुद्धि भी करे, अन्यथा वह अशुद्ध रहता है इसी प्रकार पुरुषोत्तम व्रती शुद्धि करे ॥ १८ ॥ उसके अनन्तर गृहस्थी पुरुष १६ अथवा १२ कुल्ले करे, लघुशंका करने के अनन्तर गृहस्थी ८ अथवा ४ कुल्ले करे ॥ १६ ॥ फ़िर उठ खड़ा हो दोनों नेत्र धोले दाँतुन उठा लेवे, इस मन्त्र के द्वारा दान्तन करे ॥ २० ॥ मन्त्र का अर्थ— हे, वनस्पते ! तुम हमें आयु, बल, यश, तेज, संतान, पशु, धन, ब्रह्मतत्व, मेधाशक्ति एवं बुद्धि प्रदान करो ॥ २१ ॥ जिसमें कोई गांठ छिद्र व्रण न हो ऐसा बारह

अंगुल का छोटी अंगुलि प्रमाण मोटा अपामार्ग किंवा, वेर का दांतुन हो उस के पूर्वाध में कूंची बना लेवे ॥ २२ ॥ इस प्रकार दान्तन करके १२ कुल्लोंके द्वारा मुखको शुद्ध करे रविवार को दांतुन न करे। फिर आचमन करके सुप्रकार प्रातः स्नानकरे ।२३॥ स्नान कर लेने के अनन्तर तीर्थ देवताओं को तर्पण देवे। समुद्र गामिनी नदियों में स्नान उत्तम है। वापी, कूप, तालाब आदि

लंपूर्वार्द्धे कृतकूर्चकम् ॥ २२ ॥ शुचिर्द्वादशगंडूषैर्निषिद्धं भानुवासरे ॥ आचम्यप्रयतःसम्यक्प्रातःस्नानंसमाचरेत् ॥ २३ ॥ स्नानादनंतरंतावत्तर्पयेत्तीर्थदेवताः ॥ समुद्रगानदीस्नानमुत्तमंपरिकीर्तितम् ॥ वापीकूपतडागेषुमध्यमंकथितंबुधैः ॥२४॥ गृहेस्नानंतुसामान्यंगृहस्थस्यप्रकीर्त्तितम् ॥२५॥ ततश्चवाससीशुद्धे शुक्लेचपरिधायच ॥ उत्तरीयंसदाधार्यंब्राह्मणेनविजानता ।२६। उपविश्यशुचौदेशेप्राङ्मुखोवाउदङ्मुखः ॥ भूत्वाबद्धशिखःकुर्यादंतर्जानुभुजद्वयम् ॥२७॥ सपवित्रेणहस्तेनकुर्यादाचमनक्रियाम् ॥ नोच्छिष्टंतत्पवित्रंतुभुक्त्वो-

का स्नान मध्यम कहा गया है ॥ २४ ॥ गृहस्थी का घर में स्नान करना साधारण कहा है ॥ २५ ॥ तब शुद्ध तथा सफेद वस्त्र पहिने। ज्ञानवान् ब्राह्मण को अंगोछा अवश्य धारण करना चाहिये ॥ २६ ॥ उसके अनन्तर पवित्र स्थान पर आसन बिछाकर, पूर्वाभिमुख या उत्तरा भिमुख होकर बैठजावे,शिखा, को गांठ लगादेवे। दोनों घुटनोंके मध्यमें दोनों भुजाएं करके।२७।हाथ में पवित्री धारणकरे फिर आचमन करे, आचमन द्वारा पवित्री उच्छिष्ट नहीं हो जाती, भोजन के अनन्तर उच्छिष्ट हो जाती है उस समय उसे

त्याग देवे ।। २८ ।। फिर आचमन करके गोपीचन्दन की मृतिका द्वारा तिलक करे वह दण्डाकार सीधी दो रेखा वाला ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक कहाता है ।। २९ ।। इस प्रकार का ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक कर मध्य में छिद्र करे, अथवा त्रिपुण्ड्र लगावे । ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक में लक्ष्मी के साथ स्वयं श्रीहरि भगवान् का निवास है ।। ३० ।। त्रिपुण्ड्र में पार्वती के साथ सदा शिव का निवास है,

च्छिष्टंतुवर्जयेत् ।। २८ ।। आचम्यतिलकंकुर्याद्गोपीचंदनमृत्स्नया ।। ऊर्ध्वपुँड्रमृजुंसौम्यंदंडाकारंप्रकल्पयेत् ।। २९ ।। ऊर्ध्वपुँड्रंत्रिपुँड्रंवामध्येछिद्रंप्रकल्पयेत् ।। निवसत्यूर्ध्वपुँड्रेतुश्रियासहहरिःस्वयम् ।। ३० ।। त्रिपुँड्रेधूर्जटिःसाक्षादुमयासहसर्वदा ।। विनाछिद्रंतुतत्पुँड्रंशुनःपादसमंविदुः ।।३१।। श्वेतंज्ञानकरंप्रोक्तं-रक्तंवश्यकरंनृणाम् ।। पीतंसर्वर्द्धिदंप्रोक्तमन्यन्तुपरिवर्जयेत् ।। ३२ ।। शंखचक्रादिकंधार्यंगोपीचंदनमृत्स्नया ।। सर्वपापक्षयकरंपूजांगंपरिकीर्तितम् ।। ३३ ।। शंखचक्रादिचिन्हानिदृश्यंतेयस्यविग्रहे ।। मर्त्योंम-

ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक में छिद्र अवश्य करे, अर्थात् दो दण्डो के आकार में तिलक हो, ऐसा न करने पर वह पुण्ड्र कुत्ते के पूछ के समान है ।।३१।। श्वेत वर्ण का दण्डाकार ऊर्ध्वपुन्ड्र ज्ञानवान् करता है, और लाल वर्णमनुष्यों को वश करने वाला है, पीत वर्ण का सब ऋद्धियों को देता है, और किसी रंग का तिलक न करे ।। ३२ ।। गोपीचन्दन के द्वारा शंख चक्र आदि भी धारणकरे, शंख चक्रादि धारण तो सबपापोंकानाश करने वाला पूजा का अङ्गहै।।३३।। जिसके शरीर में शंख चक्र आदि के चिन्ह दिखाई देते

हैं वह शरीर मरण धर्मा मनुष्य नहीं वह तो नित्य ही भगवत्तनु है ।। ३४ ।। जो नित्य प्रति शंख चक्रादि चिन्ह धारता है उस देही के पाप भी पुण्य रूप हो जाते हैं ।। ३५ ।। नारायण के आयुधों से जिसका शरीर सदा चिन्हित रहता है वह कोटिशः पापों से युक्त भी होतो यम उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता ।। ३६ ।। उसके अनन्तर प्राणायाम करे, फिर सन्ध्या वन्दन करे,

र्त्योनविज्ञेयःसनित्यंभगवत्तनुः ।। ३४ ।। पापंसुकृतरूपंतुजायतेतस्यदेहिनः ।। शंखचक्रादिचिह्नानियोधारयतिनित्यशः ।। ३५ ।। नारायणायुधैर्नित्यंचिह्नितोयस्यविग्रहः ।। पापकोटियुतस्यापितस्यकिंकुरुतेयमः ।। ।। ३६ ।। प्राणायामंततःकृत्वासंध्यावंदनमाचरेत् ।। पूर्वसंध्यासनक्षत्रामुपासीतयथाविधि ।। ३७ ।। गायत्रीमभ्यसेत्तावद्यावदादित्यदर्शनम् ।। सावित्रैरनघैर्मंत्रैरुपस्थायकृतांजलिः ।। ३८ ।। आत्मपादौतथाभूमौसंध्याकालेऽभिवादयेत् ।। यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणयदूनंपरिपूरयेत् ।। ३९ ।। यस्तुसंध्यामुपासीतश्रद्धयाविधिवद्द्विजः ।। नतस्यकिंचिद्दुष्प्रापंत्रिषुलोकेषुविद्यते ।। ४० ।। दिवसस्यादिमेभागेकृत्यमेतदुदीरितम् ।। एवंकृ-

प्रातः काल की सन्ध्या तारा गण के रहते विधि पूर्वक होनी चाहिये ।। ३७ ।। सन्ध्या करके गायत्री को जपन करता रहे जब तक कि सूर्य उदय नहीं होते, सूर्य दर्शन करके सूर्य मन्त्रों के द्वारा हाथ जोड़ कर उपस्थान करे अर्घ्य देवे ।। ३८ ।। सन्ध्या समय में अपने पांव तथा पृथ्वी को नमस्कार करे 'यस्य स्मृतया' इस मन्त्रसे अपनी न्यूनता हो जाने की क्षमा याचना करके पूर्ति करे।।३९।। जो ब्राह्मण श्रद्धा तथा विधि के साथ सन्ध्या वन्दन करता है त्रिलोकी भर में ऐसी कोई वस्तु नहीं जो उसे न मिल सके ।। ४० ।।

दिन के पहिले भाग में कृत्य को करे, इस प्रकार नित्य कृत्य करके श्रीहरि भगवान् का पूजन करे ॥ ४१ ॥ उसके अनन्तर लिपी पुती हुई शुद्ध भूमिपर स्वयं शुद्धता पूर्वक वाणी का नियन्त्रण करके शुद्धमन से व्रती पुरुष गोबर द्वारा गोल किंवा चौकोर मण्डल बनावे ॥ ४२ ॥ तब चावलों के द्वारा व्रत की सिद्धि के लिये उस पर अष्ट दलों वाले कमल की रचना करके सोने, चान्दी, ताम्बे

त्वाक्रियांहरिपूजांसमाचरेत् ॥ ४१ ॥ उपलिप्तेशुचौदेशेनियतोवाग्यतःशुचिः ॥ वृत्तंवाचतुरस्रंवामंडलंगोमयेनतु ॥ ४२ ॥ विधायाष्टदलंकुर्यात्तंडुलैर्व्रतसिद्धये ॥ सौवर्णंराजतंताम्रंमृन्मयंसुदृढंनवम् ॥ ४३ ॥ अव्रणंकलशंशुद्धंस्थापयेन्मंडलोपरि ॥ तत्रोदकंसमापूर्यशुद्धतीर्थाहृतंशिवम् ॥ ४४ ॥ कलशस्यमुखेविष्णुःकण्ठेरुद्रःसमाश्रितः ॥ मूलेतत्स्थितोब्रह्मामध्येमातृगणाःस्मृताः ॥ ४५ ॥ कुक्षौतुसागराःसर्वेसप्तद्वीपावसुन्धरा ॥ ऋग्वेदोथयजुर्वेदःसामवेदोह्यथर्वणः ॥ ४६ ॥ अंगैश्चसहिताःसर्वेकलशंतुसमाश्रिताः ॥ एवंसंस्थाप्यकलशंतत्रतीर्थानियोजयेत् ॥ ४७ ॥ गङ्गागोदावरीचैवकावेरीचसरस्वती ॥ आयांतुममशांत्य-

अथवा मिट्टी के पक्के नये ॥ ४३ ॥ छिद्र रहित शुद्ध कलश को लेकर उस मण्डल पर स्थापित करे, उसमें तीर्थ से लाया हुआ शुद्ध तथा कल्याण मय जल भरदे ॥ ४४ ॥ कलश के मुख में विष्णु का निवास है, कन्ठ में शिवजी का उसके मूल में ब्रह्माजी का निवास है मध्य में मातृगण कहे गये हैं ॥ ४५ ॥ कलश की कुक्षि में सातों समुद्र एवं सप्तद्वीपा पृथिवी है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्वण वेद ॥४६॥ अपने अंगों के साथ आकर उस कलश में विराजमान हो जाते हैं। इस प्रकार कलश का स्थापन

करके उसमें सब तीर्थों की भावना तथा आवाहन करे ॥ ४७ ॥ श्रीगंगा, गोदावरी, कावेरी, सरस्वती, आदि सब तीर्थ इसमें मेरो शान्ति के लिये, तथा पापों की निवृत्त के लिये पधारें ॥ ४८ ॥ तब षोड़षोपचार पूर्वक मंत्रों द्वारा गन्ध, अक्षत, नैवेद्य, एवं ऋतु के सुन्दर पुष्पों से कलश का पूजन करे ॥ ४९ ॥ फिर उस कलश पर पीताम्बर से लपेटा हुआ ताम्बे का पात्र रखे

थंदुरितक्षयकारणात् ॥ ४८ ॥ ततःसंपूज्यकलशमुपचारैःसमंत्रकैः ॥ गंधाक्षतैश्चनैवेद्यैःपुष्पैस्तत्कालसंभवैः ॥ ४९ ॥ तस्योपरिन्यसेत्पात्रंताम्रंपीताँबरावृतम् ॥ तस्योपरिन्यसेद्ध्येमंराधयासहितंहरिम् ॥ ५० ॥ राधयासहितःकार्यःसौवर्णःपुरुषोत्तमः ॥ तस्यपूजाप्रकर्त्तव्याविधिनाभक्तितत्परैः ॥ ५१ ॥ पुरुषोत्तममासस्य-दैवतंपुरुषोत्तमः ॥ तस्यपूजाप्रकर्त्तव्यासंप्राप्तेपुरुषोत्तमः ॥ ५२ ॥ संसारसागरेमग्नमुत्तारयतियोध्रुवम् ॥ कोनसेवेततंलोकेमर्त्योमरणधर्मवान् ॥ ५३ ॥ पुनर्ग्रामाःपुनर्वित्तंपुनःपुत्राःपुनर्गृहम् ॥ पुनःशुभाशुभंकर्म-

उस पर स्वर्ण की श्रीराधा श्रीकृष्ण की मूर्तियें स्थापित करे ॥ ५० ॥ पुरुषोत्तम भगवान् की श्रीराधाजी के साथ सोने की मूर्त्तियें यथा शक्ति पहिले बनवाले, उस पात्र पर उन्हें स्थापित करके भक्ति से विधि पूर्वक उनका पूजन करे ॥ ५१ ॥ पुरुषोत्तम मास के पुरुषोत्तम भगवान् देवता हैं। पुरुषोत्तम मास आने पर पुरुषोत्तम भगवान् का पूजन परम कर्तव्य है ॥ ५२ ॥ संसार सागर में डूबते हुए पुरुष को जो निश्चय ही निकाल लेते हैं, उन भगवान् पुरुषोत्तम का मरण धर्मा मनुष्य इस लोक में कौन नहीं पूजता ॥ ५३ ॥ ग्राम, धन, पुत्र, घर, शुभ, अशुभ कर्म ये तो फिर २ भी प्राप्त होजाते हैं किन्तु मनुष्य शरीर बार २ नहीं मिलता

॥ ५४ ॥ धर्म के लिये उसकी रक्षा करे, ज्ञान के लिये धर्म की रक्षा करे, ज्ञान के द्वारा मोक्ष प्राप्ति सुलभ है, अत एव धर्म का आचरण करे ॥ ५५ ॥ यह शरीर एक प्रकार का वृक्ष है, सनातन धर्म उसका फल है जिस शरीर में धर्मरूप फल न हो वह शरीर वन्ध्य वृक्ष की भांति निष्फल है ॥ ५६ ॥ माता भी सहायक नहीं होती स्त्री पुत्र कलत्र, भ्राता, पिता धन आदि कोई भी

नशरीरंपुनःपुनः ॥ ५४ ॥ तद्रक्षितंतुधर्मार्थंधर्मोज्ञानार्थमेवहि ॥ ज्ञानेनसुलभोमोक्षस्तस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ॥ ५५ ॥ देहरूपस्यवृक्षस्यफलंधर्मःसनातनः ॥ धर्महीनस्तुयोदेहोनिष्फलोऽवंध्यवृक्षवत् ॥ नमाताचसहाया-र्थंनकलत्रसुतादयः ॥ नपितासोदरावित्तंधर्मस्तिष्ठतिकेवलम् ॥ ५७ ॥ जराऽव्याघ्रीवभयदाऽऽधयःशत्र-वोयथा ॥ आयुर्यातिप्रतिदिनंभग्नभांडात्पयोयथा ॥ ५८ ॥ तरंगतरलालक्ष्मीर्यौवनंकुसुमोपमम् ॥ विष-याःस्वप्नविषयाइवसर्वेनिरर्थकाः ॥ ५९ ॥ चलंवित्तंचलंचित्तंचलंसंसारजंसुखम् ॥ एवंज्ञात्वाविरक्तःसन्ध-

सहायता नहीं करते, केवल धर्म ही सहायक रहता है ॥ ५७ ॥ सिंहनी जैसे वृद्धावस्था मनुष्य को डराती रहती है, रोग व्याधियां पूरे शत्रु हो जाते हैं, आयु प्रति दिन टूटे हुए वर्तन से झरते हुए पानी के समान क्षीण होती रहती है ॥ ५८ ॥ यह लक्ष्मी तरङ्ग की भाँति चंचल है, जवानी फूल के समान जल्दी मुरझा जाने वाली है, विषय स्वप्न के विषयों की भांति निरर्थक है ॥ ५९ ॥ धन, ऐश्वर्य, मन एवं सांसारिक विषय सुख ये सब चलायमान है। ऐसा जानकर वैराग्य प्राप्त करके धर्म का अभ्यास

करने लग जावे ॥ ६० ॥ देखिये—साँप से आधा निगला हुआ भी मेंढ़क मक्खी खाना चाहता है, उसी प्रकार काल से पकड़ा हुआ भी जीव दूसरे को दुःख देकर धन हरना चाहता है ॥ ६१ ॥ मौत से पकड़े हुए मनुष्य को किस सुख पर हर्ष होरहा है। उसकी प्रसन्नता तो वध्यस्थान पर ले जाये जारहे पशु के समान व्यर्थ हे ॥६२ ॥ जब धर्म करने को चित्त हो जाय तो आज कल

मभ्यासपरोभवेत् ॥ ६० ॥ अर्धग्रस्तोहिनाभेकोमक्षिकामत्तुमिच्छति ॥ कालग्रस्तस्तथाजीवःपरपीडाधनाहृतः ॥ ६१ ॥ मृत्युग्रस्तायुषःपुँसःकिंसुखंहर्षयत्यहो ॥ आघातंनीयमानस्यवध्यस्येवनिरर्थकम् ॥ ६२ ॥ धर्मार्थंचयदाचित्तंनवित्तंसुलभंतदा ॥ यदावित्तंनचतदाचितंधर्मोन्मुखंभवेत् ॥ ६३ ॥ चित्तवित्तेयदास्यातांसत्पात्रंनतदालभेत् ॥ एतच्चितयसंबंधोयदाकालेतुसंभवेत् ॥ ६४ ॥ अविचार्यतदाधर्मंयःकरोतिसबुद्धिमान् ॥ वित्तप्राचुर्यसंसाध्यधर्माःसंत्तिसहस्रशः ॥ ६५ ॥ पुरुषोत्तमेस्वल्पवित्तसाध्योधर्मोमहान्भवेत् ॥

के पुरुषोंको धन होते भी धर्मार्थ धन सुलभनहीं,जब धन सुलभहो तब धर्म करनेको चित्त नहीं होता॥६३॥यदि चित्तधन सुलभ भी हो जाय तो दान लने का अधिकारी नहीं मिलता। यदि धन,मन,एवं अधिकारी तीनों जिस समय पूर्ण हो जांय॥६४॥फिर तो उस समय बिचार ही न करे धर्म कर देवे, ऐसा करने वाला बुद्धिमान है। बहुत धन से तो सिद्ध होने वाले हजारों धर्म हैं॥ ६५॥ किन्तु पुरुषोत्तम मास में थोड़े धन से किया हुआ धर्म महान् हो जाता है स्नान, दान, एवं भगवत्कथा में बैठ कर विष्णुभगवान्

का स्मरण करते रहना ॥ ६६ ॥ इतना मात्र किया हुआ श्रेष्ठ धर्म बड़े भारी भय से मनुष्य को बचा लेता है ॥ ६७ ॥ श्री गंगा जी जैसे सब तीर्थों में श्रेष्ठ हैं, धनुर्धारियों में काम श्रेष्ठ है सब धनों में जैसे विद्या उत्तम धन हैं, वैसे सब महीनों में साक्षात् पुरुषोत्तम रूप पुरुषोत्तम मास श्रेष्ठ है ॥ ६८ ॥ यद्यपि यह मास पहिले यज्ञ आदि सब कर्मो में निन्दनीय एवं निषिद्ध माना

स्नानंदानंकलायांचविष्णोःस्मरणमेवच ॥ ६६ ॥ एतन्मात्रोपिसद्धर्मस्त्रायतेमहतोभयात् ॥ ६७ ॥ गंगेव-तीर्थस्मरएवधन्वीवित्तंतुविद्येवगुणास्तुरूपम् ॥ मासेषुसर्वेषुतथैवसाक्षान्मासोत्तमोयंपुरुषोत्तमोहि ॥ ६८ ॥ यद्यप्यसौनिद्यतमःपुरासीत्सर्वेषुकृत्येषुमखादिकेषु ॥ तथापिसाक्षाद्भगवत्प्रसादात्तन्नामन्नाम्नाभुविविश्रुतोऽभूत् ॥ ६९ ॥ यथाहस्तिपदेलीनंसर्वंप्राणिपदंभवेत् ॥ धर्माःकालास्तथासर्वेविलीनाःपुरुषोत्तमे ॥ ७० ॥ यथामरतरंगिण्यानसमाःसकलापगाः ॥ कल्पवृक्षेणनसमायथासकलापादपाः ॥ ७१ ॥ चिंतारत्नेनरत्ना-निनसमानियथाभुवि ॥ कामधेन्वायथाधेन्वोनराज्ञापुरुषाःसमाः ॥ ७२ ॥ नवेदैःसर्वशास्त्राणिपुण्यकाला-

गया था, तथापि भगवान् की असीम कृपा हो जाने के कारण यही मास फिर पुरुषोत्तम नाम से जगत् भर में प्रसिद्ध हुआ ॥६९॥ जैसे कि प्राणियों के पैर एक हाथी के पाँव में समा जाते हैं वैसे सारे धर्म काल आदि इसी पुरुषोत्तम मास में समा जाते हैं॥७०॥ जैसे श्रीगङ्गाजी की समानता अन्य सब नदियां नहीं पासकती एवं सब वृक्ष कल्पवृक्ष की समता नहीं कर सकते ॥७१॥ सब शास्त्र वेदों की समता नहीं कर सकते इसी प्रकार कोई भी महीना पुरुषोत्तम मास की समता नहीं कर सकता ॥ ७२ ॥ पुरुषोत्तम मास

के देवता स्वयं पुरुषोत्तम हैं। इसी कारण श्रद्धा एवं भक्ति से पुरुषोत्तम की पूजा करे ॥ ७३ ॥ पूजा कराने के लिये एक ऐसे आचार्य ब्राह्मण को बुलवाये जो सब शास्त्रों का ज्ञाता, सत्यवादी एवं शुद्ध वैष्णव हो ॥ ७४ ॥ जो पुरुष अत्यन्त गहरे तथा वेग वाले, अन्तः करण में स्थित काम क्रोधादि रूप बड़े २ तिमि तिमिंगल मगर मछलियों से भरपूर संसार रूप समुद्र से तैर कर

स्तथाखिलाः ॥ पुरुषोत्तममासेनसमोमासोनकर्हिचित् ॥ ७३ ॥ पुरुषोत्तममासस्यदैवतंपुरुषोत्तमः ॥ तस्मात्संपूजयेद्भक्त्याश्रद्धयापुरुषोत्तमम् ॥७४॥ शास्त्रज्ञंनिपुणंशुद्धं वैष्णवंसत्यवादिनम् ॥ विप्राचार्यमथाहूयपूजांतेनप्रकल्पयेत् ॥ ७५ ॥ संसारसागरमतीवगंभीरवेगमंतस्थमोहमदनादितिमिंगिलौघम् ॥ उल्लंघ्यगंतुमभिवांछतिभारतेस्मिन्संपूजयेत् सपुरुषोत्तममादिदेवम् ॥ ७६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्ये श्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेआह्निककथनंनामविंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

वाल्मीकिरुवाच ॥ अनलोत्तारणंकृत्वाप्रतिमायास्ततःपरम् ॥ प्राणप्रतिष्ठांकुर्वीतह्यन्यथाधातुरेवसा ॥

पार जाना चाहता हो तो उसे इस भारत वर्ष में आदि देव पुरुषोत्तम की पूजा अवश्य करनी चाहिये ॥ ७५ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायाँ विंशतितमोऽध्याय ॥ २० ॥

श्रीवाल्मीकि जी बोले—क्योंकि उन श्रीराधा कृष्ण की स्वर्ण प्रतिमाएं अग्नि से उतारी गई हैं अतः उनके पूजन से

पहिले प्राण प्रतिष्ठा अवश्य करे, अन्य था वह धातु की धातु है ॥ १ ॥ पहिले उन मूर्तियों के दोनों कपोलों का दक्षिण हाथ से स्पर्श करे तब श्रीहरि भगवान् की प्राण प्रतिष्ठा करे ॥ २ ॥ मूर्तियों की प्राण प्रतिष्ठा न होने पर सोना जैसे पहिले था वह वैसा ही रहता है देवता होता ही नहीं ॥ ३ ॥ हे राजन् ! अन्य देवताओं की मूर्तियों की प्राण प्रतिष्ठा भी देवत्व की सिद्धि के

॥ १ ॥ प्रतिमायाकपोलौद्वौस्पृष्ट्वादक्षिणपाणिना ॥ प्राणप्रतिष्ठांकुर्वीततस्यांदेवस्यवैहरेः ॥ २ ॥ अकृतायांप्रतिष्ठायांप्राणानांप्रतिमासुच ॥ यथापूर्वंतथाभागःस्वर्णादीनांनदेवता ॥ ३ ॥ अन्येषामपिदेवानांप्रतिमास्वपिपार्थिव ॥ प्राणप्रतिष्ठाप्रकर्तव्यातस्यांदेवत्वसिद्धये ॥ ४ ॥ पुरुषोत्तमबीजेनतद्विष्णोरित्यनेनच ॥ तथैवहृदयेंगुष्ठंदत्वाशश्वच्चमंत्रवित् ॥ ५ ॥ एभिर्मंत्रैःप्रतिष्ठांतुहृदयेपिसमाचरेत् ॥ अस्यप्राणाःप्रतिष्ठंतुअस्यैप्राणाःक्षरंतुच ॥ ६ ॥ अस्यैदेवत्वसंख्यायैस्वाहेतियजुरिरयन् ॥ मूलमंत्रैरंगमंत्रैर्वैदिकैरित्यनेनच ॥ ॥ ७ ॥ प्राणप्रतिष्ठांसर्वत्रप्रतिमासुसमाचरेत् ॥ अथवानाममंत्रैश्चतुर्थ्यंतैःप्रयत्नतः ॥ ८ ॥ स्वाहांतैश्चप्रकु-

लिये अवश्य कर्तव्य है ॥ ४ ॥ मन्त्रवेत्ता ब्राह्मण 'तद्विष्णो' इस पुरुषोत्तम बीज द्वारा मूर्ति के हृदय पर अंगुष्ट धर कर ॥ ५ ॥ इन मन्त्रों द्वारा हृदय में प्राण प्रतिष्ठा करे, मन्त्र का अर्थ इस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठत हों, एवं इसके लिये प्राण आजाय ॥ ६ ॥ मूर्ति में देवत्व सिद्धि के लिये 'स्वाहा' यह यजुर्वेद पढ़ता हुआ वैदिक मूल मन्त्रों द्वारा एवं अङ्ग मन्त्रों के द्वारा ॥ ७ ॥ प्रतिमा

पु. गा. १४५

के सारे अंङ्गों की प्राण प्रतिष्ठा करे। अथवा अन्त में चतुर्थी विभक्ति लगाकर नाम मन्त्रों के द्वारा प्रयत्न पूर्वक प्राण प्रतिष्ठा करे ॥ ८ ॥ उन उन देवताओं के स्मरण पूर्वक अन्त में 'स्वाहा' शब्द लगा कर प्राण प्रतिष्ठा करे। इस प्रकार प्रतिष्ठा करके पुरुषोत्तम भगवान् का ध्यान करे ॥ ९ ॥ श्री पुरुषोत्तम के स्वरूप का इस प्रकार ध्यान करे-श्रीपुरुषोत्तम परम शान्त स्वरूप, नील

वींतनत्तद्दे वाननुस्मरन् ॥ एवंप्राणान्प्रतिष्ठाप्यध्यायेच्छ्रीपुरुषोत्तमम् ॥ ९ ॥ श्रीवत्सवक्षसंशांतंनीलोत्प-
लदलच्छविम् ॥ त्रिभंगललितंध्यायेत्सराधंपुरुषोत्तमम् ॥ १० ॥ देशकालौसमुच्चार्यनियतोवाग्यतःशुचि ॥
षोडशैरुपचारैश्चपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ११ ॥ आगच्छदेवदेवेश श्रीकृष्णपुरुषोत्तम ॥ राधयासहितश्चात्रगृहा
णपूजनंमम ॥ १२ ॥ श्रीराधिकासहितपुरुषोत्तमायनमःआवाहनंसमर्पयामि ॥ इत्यावाहनम् ॥ नानारत्न-
समायुक्तं कार्तस्वरविभूषितम् ॥ आसनंदेवदेवेशगृहाणपुरुषोत्तम ॥ श्रीराधिका०आसनं० ॥ १३ ॥ गंगा-

कमल दल की तरह कान्ति वाले, वक्षस्थल पर श्रीवत्स के चिन्ह धारी तीन अङ्गों को मोड़ कर ठहरने वाले, त्रिभंग ललिता प्रभु-पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराधिका जी के साथ विराजमान हैं ॥ १० ॥ ध्यान करके फिर देश काल का उच्चारण करके संकल्प करे नियमित होकर वाणी को वश किये हुए शुद्धता पूर्वक सोलह उपचारों द्वारा पुरुषोत्तम का पूजन करे ॥ ११ ॥ क्रमानुसार प्रथम आवाहन करे-हे देव देवेश ! श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम ! आद्यशक्ति श्रीराधिकाजी के साथ यहाँ पधारें, मुझ से किये हुए पूजन को स्वीकार करें ॥ १२ ॥ श्रीराधिका जी के सहित श्रीपुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार हो इस मन्त्र से आवाहन समर्पण करता

भा. टी. अ. ८/२० फा १३

हूं ॥ इत्यावाहनकरे । आसनमन्त्र-हे देव देवेश ! श्रीपुरुषोत्तम ! अनेकों रत्नों जटित स्वर्ण से निर्मित शोभाय मान आसन स्वीकार करें । श्रीराधिकाजी के सहित पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार हो । इत्यासनमुदे ॥ १३ ॥ पाद्य-मैंने प्रार्थना द्वारा गङ्गा आदि सब तीर्थों से सुख स्पर्श जल लाकर रखा है कृपया इसे स्वीकार करें, इतिपाद्यदे ॥ १४ ॥ अर्घ्य--गोपियों को आनन्द

दिसर्वतीर्थेभ्योमयाप्रार्थनयाहृतम् ॥ तोयमेतत्सुखस्पर्शंपाद्यार्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ इतिपाद्यम् ॥ १४ ॥ नंद-गोपगृहेजातोगोपिकानंदहेतवे ॥ गृहाणार्घ्यंमयादत्तं राधयासहितोहरे ॥ इत्यर्घ्यम् ॥ १५ ॥ गंगाजलंस-मानीतंसुवर्णकलशस्थितम् ॥ आचम्यतांहृषिकेशपुराणपुरुषोत्तम इत्याचमनम् ॥ १६ ॥ कार्यंमेसिद्धिमा-यातुपूजितेत्वयिधातरि ॥ पंचामृतैर्मयानीतैराधिकासहितोहरे ॥ १७ ॥ पयोदधिघृतंगव्यंमाक्षिकंशर्करा-तथा ॥ गृहाणेमानिद्रव्याणिराधिकानंददायक इतिपंचामृतस्नानम् ॥ १८ ॥ योगेश्वरायदेवायगोवर्धन-

देने के लिये हे श्रीराधिका सहित भगवान् श्रीहरि आप श्रीनन्द गोप के घर प्रकट हुए हैं कृपया मुझसे प्रदत्त अर्घ्य स्वीकार करें । इति अर्घ्य दे ॥ १५ ॥ आचमन-हे हृषीकेश, पुराण पुरुषोत्तम ! सुवर्ण के कलश में श्रीगङ्गाजी का जल ले आया हूं, कृपया आच-मन के अर्थ स्वीकार करें-इससे आचमन देवे ॥ १६ ॥ प्रार्थना-हे श्रीराधिकाजी सहित श्रीहरि भगवान् ! आप जगत् के धाता हैं, लाये हुए इस पंचामृत के द्वारा मैं आप की पूजा करता हूं इससे मेरे कार्य सिद्धि हों ॥ १७ ॥ पंचामृत स्नान--दूध दही, घृत, मधु एवं शर्करा, इन वस्तुओं को हे राधिका के आनन्द दाता प्रभो आप पंचामृत स्नान स्वीकार करें । इससे पंचामृत

स्नान करावें ॥ १८ ॥ शुद्ध जल स्नान-हे योगेश्वर, गोवर्द्धन धारिन् ! यज्ञपते, नाथ, गोविन्द, आप को मेरी वार २ नमस्कार हो ॥ १९ ॥ हे श्रीकृष्णानन्द नन्दन ! श्री गङ्गा जल के समान नदी तीर्थ से लाया हुआ यह पवित्र शीतल जल है इसे स्नान में अंगीकार करें, इससे पुनः स्नान करावें ॥ २० ॥ वस्त्र-हे देव ! सर्व कामना की सिद्धि के लिये दो पीताम्बर सेवा में अर्पित हैं

धरायच ॥ यज्ञानांपतयेनाथगोविंदायनमोनमः ॥ १९ ॥ गंगाजलसमंशीतंनदीतीर्थसमुद्भवम् ॥ स्नाने दत्तंमयाकृष्णगृह्यतांनंदनंदन ॥ इतिपुनःस्नानम् ॥ २० ॥ पीतांबरयुगंदेवसर्वकामार्थसिद्धये ॥ मयानिवेदितंभक्त्यागृहाणसुरसत्तम ॥ इतिवस्त्रम् आचमनम् ॥ २१ ॥ दामोदरनमस्तेस्तुत्राहिमांभवसागरात् ॥ ब्रह्मसूत्रंसोत्तरीयंगृहाणपुरुषोत्तम ॥ उपवीतम् ॥ आचमनम् ॥ २२ ॥ श्रीखंडंचंदनंदिव्यंगंधाढ्यं सुमनोहरम् ॥ विलेपनंसुरश्रेष्ठप्रीत्यर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ इतिचंदनम् ॥ २३ ॥ अक्षतास्तुसुरश्रेष्ठकुंकुमाक्ताः

हैं सुरसत्तम ! कृपया स्वीकार करें । इससे वस्त्र देवे फिर आचमन भी करावे ॥ २१ ॥ जनेऊ-हे दामोदर ! आपको नमस्कार हो मेरी भवसागर से रक्षा करें उपरने के साथ यह यज्ञोपवीत है आप अङ्गी कार करें, इससे जनेऊ तथा उपरना ये समर्पण करे, आचमन भी करावे ॥ २२ ॥ चन्दन-दिव्य गन्ध से पूर्ण परम मनोहर श्रीखण्ड का चन्दन आपकी प्रसन्नता के लिये हे सुर श्रेष्ठ अर्पित है इसे शुभ मस्तक पर लगाने को स्वीकार करें । इससे चन्दन समर्पे ॥ २३ ॥ अक्षत-हे देवाधिदेव ! ये कुम कुम

केसर से रंजित हैं परमशोभायमान इन अक्षतों को मैं भक्ति से निवेदित कर रहा हूं, हे पुरुषोत्तम कृपया इन्हें अंगीकार करें। इससे अक्षत चढ़ावे ॥ २४ ॥ पुष्प-हे प्रभो! सुन्दर माल्यादि तथा अति सुगन्धित मालती आदि के पुष्प मैं आपकी पूजा के लिये लाया हूँ कृपया स्वीकार करें, इससे पुष्प चढ़ावे॥ २५ ॥ इसके अनन्तर अङ्ग पूजा करें हे केशिनिशूदन नन्दनन्दन, श्री यशोदा के

सुशोभिताः ॥ मयानिवेदिताभक्त्यागृहाणपुरुषोत्तम ॥ इत्यक्षतान् ॥ २४ ॥ माल्यादीनिसुगंधीनिमालत्यादीनिवैप्रभो ॥ मयाहृतानिपूजार्थंपुष्पाणिप्रतिगृह्यताम् ॥ इतिपुष्पाणि ॥ २५ ॥ ततोंगपूजा ॥ नंदात्मजोयशोदायास्तनयःकेशिसूदनः ॥ भूभारोत्तारकश्चैवह्यनंतोविष्णुरूपधृक् ॥ २६ ॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्चश्रीकंठःसकलास्त्रधृक् ॥ वाचस्पतिःकेशवश्चसर्वात्मेतिचनामतः ॥ २७ ॥ पादौगुल्फौतथाजानूजघनेचकटीतथा ॥ मेढ्ंनाभिंचहृदयंकंठंबाहूमुखंतथा ॥ २८ ॥ नेत्रेशिरश्चसर्वांगंविश्वरूपिणमर्चयेत् ॥ पुष्पाण्यादायक्रमशश्चतुर्थ्यंतैर्जगत्पतिम् ॥ २९ ॥ प्रत्यंगपूजांकृत्वातुपुनश्चकेशवादिभिः ॥ चतुर्विंशतिमंत्रै

लाल, पृथ्वी के भार को उतारने वाले, अनेकों रूप धारने वाले विष्णु भगवान् ॥ २६ ॥ सब प्रकार के अस्त्र धारी, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, श्रीकण्ठ, वाचस्पति, केशव, सर्वात्मा, इन नामों के द्वारा ॥ २७ ॥ पांव, टखने, जानू, जंघा, कटि, लिंग, नाभि, हृदय, कण्ठ, भुजा, मुख, ॥ २८ ॥ नेत्र,एवं विश्वरूपी जगतपति भगवान् के समस्त अङ्गों को पुष्प लेकर पूर्वोक्त नामों से चतुर्थी विभक्ति जोड़कर क्रमशः पूजा करें ॥ २९ ॥ इस प्रकार प्रत्येक अङ्ग की पूजा करके फिर केशव आदि नामों के आगे चतुर्थी

विभक्ति लगाकर चौबीस मन्त्रों के द्वारा ॥ ३० ॥ पुष्प लेकर पुरुषोत्तम भगवान् की प्रत्येक नाम से पूजा करें अर्थात् -दिव्य वनस्पतियों के रस द्वारा निषपन्न, उत्तम गन्ध से परिपूर्ण, सब देवों के सूंघने के योग्य यह धूप है आप इसे स्वीकार करें । इस मन्त्र से धूप प्रदान करें ॥ ३२ ॥ दीप-हे परम धाम ! आप समस्त देवताओं के ज्योतिः स्वरूप हो, तेजस्वियों के दिव्यतेज एवं

श्चचतुर्थ्यंतैश्चनामभिः ॥ ३० ॥ पुष्पमादायप्रत्येकंपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ३१ ॥ वनस्पतिरसोदिव्योगंधाढ्योगंधउत्तमः ॥ आघ्रेयःसर्वदेवानांधूपोऽयंप्रतिगृह्यताम् ॥ इतिधूपम् ॥ ३२ ॥ त्वंज्योतिःसर्वदेवानांतेजसांतेजउत्तमम् ॥ आत्मज्योतिःपरंधामदीपोयंप्रतिगृह्यताम् ॥ इतिदीपम् ॥ ३३ ॥ नैवेद्यंगृह्यतांदेवभक्तिंमेह्यचलांकुरु ॥ इप्सितंमेवरंदेहिपरत्रचपरांगतिम् ॥ इतिनैवेद्यम् ॥ ३४ ॥ मध्येपानीयम् ॥ उत्तरापोशनम् ॥ गंगाजलंसमानीतंसुवर्ण कलशास्थितम् ॥ आचतांहृषीकेशत्रैलोक्यव्याधिनाशन ॥ इत्याचमनम् ॥ ॥ ३५ ॥ इदंफलंमयादेवस्थापितंपुरतस्तव ॥ तेनमेसुफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्म ॥ इतिश्रीफलम् ॥३६॥

प्रकाशमय हो कृपया दीप ग्रहण करें इससे द्वीप प्रदान करें ॥ ३३ ॥ नैवेद्य--हे देव ! आप नैवेद्य स्वीकार करें मुझे अचला भक्ति दें परलोक में परम गति दें । इससे नैवेद्य चढ़ावे ॥ ३४ ॥ मध्य में जल दें, फिर उतरापोशन प्रदान करे । फिर आचमन सोने के कलशे में भरा हुआ यह श्रीगङ्गा जल ले आया हूं । हे हृषीकेश त्रिलोकी व्याधि नाश करने वाले इससे आचमन करें, इस मन्त्र से आचमन करावे ॥ ३५ ॥ फल-हे देव ! यह श्री फल आपके सामने अर्पित हैं, इससे मुझे जन्म जन्म में सुन्दर फल

प्राप्त हों । इससे श्रीफल समर्पे ॥ ३६ ॥ करोद्वर्तन-सुगन्धित काफूर एवं कस्तूरी आदि सुवासित यह करोद्वर्तन है, इसे आप स्वीकार करें इससे करोद्वर्तन देवे ॥ ३७ ॥ ताम्बूल--मनोहर काफूर जिसमें मिश्रित है और सुपारियों से संयुक्त है यह मैं भक्ति से अर्पण कर रहा हूं, हे देव ! इसे स्वीकार करें । इससे ताम्बूल अर्पण करें ॥ ३८ ॥ दक्षिणा-ब्रह्माजी के गर्भ में रहने वाले,

गंधकर्पूरसंयुक्तंकस्तूर्यादिसुवासितम् ॥ करोद्वर्तनकंदेवगृहाणपरमेश्वर । इतिकरोद्वर्तनम् ॥ ३७ ॥ पूंगीफलसमायुक्तंसकर्पूरंमनोहरम् ॥ भक्त्यादत्तंमयादेवतांबूलंप्रतिगृह्यताम् ॥ तांबूलम् ॥ ३८ ॥ हिरण्यगर्भस्थंहेमबीजंविभावसोः ॥ अनंतपुण्यफलदमतःशांतिंप्रच्छमे ॥ इतिदक्षिणाम् ॥ ३९ ॥ शारदेंदीवरश्यामंत्रिभंगललिताकृतिम् ॥ नीराजयामिदेवेशंराधयासहितंहरिम् ॥ इतिनिराजनम् ॥ ४० ॥ रक्षरक्षजगन्नाथरक्षत्रैलोक्यनायक ॥ भक्तानुग्रहकर्त्तात्वंप्रदक्षिणांग्रहणमे ॥ इतिप्रदक्षिणाम् ॥ ४१ ॥ यज्ञेश्व-

अग्नि के बीज, पुण्यों के अनन्त फल देने वाले इस स्वर्ण को दक्षिणा में स्वीकार करें, मुझे शान्ति प्रदान करें । इस मन्त्र से दक्षिणा दें ॥ ३९ ॥ आरती-शरद ऋतु के नील कमल के समान श्याम सुन्दर, त्रिभंग ललित आकार वाले, श्रीराधिकाजी के सहित, देवेश ! मैं आपकी आरती करता हूं । इससे नीरांजन (आरती) करें ॥ ४० ॥ परिक्रमा-हे जगन्नाथ ! रक्षा करें, हे त्रिलोकी नाथ रक्षा करें आप भक्तों पर अनुग्रह करते हो प्रभो ! मेरी परिक्रमा स्वीकार करें । इससे परिक्रमा करें ॥ ४१ ॥

मन्त्र पुष्प–हे गोविन्द ! आप यज्ञपति देव हो एवं यज्ञसे प्रकट होने वाले हो, यज्ञेश्वर आपको बारम्बार नमस्कार इससे नमस्कार करे ॥४२॥ 'मन्त्रहीनं क्रियाहीनम्' इस मन्त्र को पढ़कर पुरुषोत्तम भगवान्से क्षमा प्रार्थना करे प्रतिदिन तिलोंके साथ पुरुषोत्तम भगवान् के नाम मन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा' जोड़कर हवन करे ॥ ४३ ॥ महीना भर घृत का अखण्ड दीपक जलावे, यह श्रीपुरुषोत्तम

रायदेवायतथायज्ञोद्भवायच ॥ यज्ञानांपतयेनाथगोविंदायनमोनमः ॥ इतिमंत्रपुष्पम् ॥ ४२ ॥ विश्वेश्वरायविश्वायतथाविश्वोद्भवायच ॥ विश्वस्यपतयेतुभ्यंगोविंदायनमोनमः ॥ इतिनमस्करान् ॥ ४३ ॥ मंत्रहीनेतिमंत्रेणक्षमाप्यपुरुषोत्तमम् ॥ स्वाहांतैर्नाममंत्रैश्चतिलहोमोदिनेदिने ॥ ४४ ॥ दीपःकार्यस्त्वखंडश्चयावन्मासंचसर्पिषा ॥ पुरुषोत्तमस्यप्रीत्यर्थंसर्वार्थफलसिद्धये ॥ ४५ ॥ यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणनमस्कृत्यजनार्दनम् ॥ यदूनंतत्तु संपूर्णंविधायविचरेत्सुखम् ॥ ४६ ॥ इत्थंश्रीपुरुषोत्तमंनवघनश्यामंसराधंमुदासंप्राप्ते पुरुषोत्तमेऽत्रनितलेलब्ध्वाजनुर्मानवम् ॥ भक्त्यायःपरिपूजयेत्प्रतिदिनंकृत्वागुरुं वैष्णवंभुक्त्वाह्यत्रसुखंसमस्तमतुलं-

भगवान् की प्रसन्नता एवं सर्वार्थ फल सिद्धि के लिये है ॥ ४४ ॥ 'यस्यस्मृत्या' इस मन्त्र से जनार्दन को नमस्कार करके फिर प्रार्थना करे कि हे भगवन् ! मेरी न्यूनता पूर्ण हो यह कह कर फिर सुख पूर्वक विचरण करें ॥ ४५ ॥ इस प्रकार पुरुषोत्तम मास के आने पर, मनुष्य जन्म पाकर जो मनुष्य श्रीराधिका जी के साथ नये मेघ की भाँति श्याम सुन्दर श्रीपुरुषोत्तम भगवान्

का भक्ति से इस पृथ्वीपर प्रतिदिन पूजन किया करता है। और उस पूजन में वैष्णव गुरु करता है। ऐसा पुरुष इस लोक में अखण्ड सुख पाकर अन्त में परमलोक में जाता है ॥ ४६ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां एकविंशतितमोऽध्याय ॥ २१ ॥

पश्चात्सगच्छेत्परम् ॥ ४७ ॥ इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेपुरुषोत्तमपूजनविधिर्नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

राजोवाच ॥ पुरुषोत्तमस्यनियमान्व्रतिनोवदविस्तरात् ॥ किंभोज्यंकिमभोज्यंवावर्ज्याविर्ज्येंतपोधन ॥ ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ सएवंभगवान्पृष्टोभूभृतावाल्मिकोमुनिः ॥ पुसांनिःश्रेयसार्थायतमाहबहुमानयन् ॥ २ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ पुरुषोत्तममासेयेनियमाःपरिकीर्तिताः ॥ ताञ्छृणुष्वमयाराजन्कथ्यमानान्समासतः ॥ ३ ॥ हविष्यान्नंचभुंजीतमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ गोधूमाःशालयःसर्वासितामुद्गायवास्ति-

राजा बोले—हे तपोधन! अब कृपा करके पुरुषोत्तम मास के व्रती पुरुषों के नियम विस्तार से कहें क्या खाना चाहिये क्या नहीं एवं वर्जित अवर्जित सब कहें ॥ १ ॥ श्रीनारायण बोले--सुनिये—इस प्रकार का प्रश्न पुरुषों के कल्याण के लिये राजा दृढ़धन्वा ने भी वाल्मीकि मुनिजी से पूछा था उसी के अनुसार मैं कहता हूं ॥ २ ॥ श्रीवाल्मीकि जीने कहा—पुरुषोत्तम मास के जितने भी नियम कहे गये हैं उन्हें मैं संक्षेप से कहता हूं ॥ ३ ॥ पुरुषोत्तम मास में व्रती पुरुष हविष्य अन्न (खीर) का

भोजन करे। अथवा-गेहूं, चावल, सब प्रकार के, मिश्री, मूंग, जौ, तिल ॥ ४ ॥ मटर, सिंवाक, नीवार, बथुआ, हिलमोचिका (निकपत्रा-तन्दूला) अदरख, काल शाक, मूल, कन्द, ककड़ी ॥ ५ ॥ केले के फल, सेन्धा, समुद्री नमक, दधि, माखन, पनीर, आम, हरड़ ॥ ६ ॥ पिप्पली, जीरा, सौंठ, इमली, तितड़ी, सुपाड़ी, लवली, आंवला, गुड़ इक्षुरस (चीनी) ॥ ७ ॥ जो पदार्थ

लाः ॥४॥ कालायकंगुनीवारावास्तुकंहिलमोचिका ॥ आर्द्रकंकालशाकंचमूलंकंदंचकर्कटीम् ॥५॥ रंभासैधवसामुद्रेलवणेदधिसर्पिषी ॥ पयोनुद्घृतसारंचपनसाम्रेहरीतकी ॥६॥ पिप्पलीजीरकंचैवनागरंचैवतिंतिडीक्रमुकंलवलीधात्रीफलान्यगुठमैक्षवम् ॥७॥ अतलपक्वंमुनयोहविष्यंप्रवदंतिच ॥ हविष्यभोजनंनृणामुपवाससमंविदुः ॥८॥ सर्वामिषाणिमांसंचक्षौद्रंसौवीरकंतथा ॥ राजमाषादिकंचैवराजिकामादकंतथा ॥९॥ द्विदलंतिलतैलंचतथान्नंशल्यदूषितम् ॥ भावदुष्टंक्रियादुष्टंशब्ददुष्टंचवर्जयेत् ॥ १० ॥ परान्नंचपरद्रोहंपरदारागमंतथा ॥ तीर्थंविनाप्रयाणंचपरदेशंपारत्यजेत् ॥ ११ ॥ देववेदद्विजानांचगुरुगोव्रतिनांतथा ॥ स्त्री

तेल में न पकाया जाय उसे मुनिजन हविष्य अन्न कहते हैं वह भोजन उपवास के समान होता है ॥ ८ ॥ सब प्रकार के आमिष, मांस, मधु, वेर, उड़द, राई मादक वस्तु ॥९॥ दालें तिलतैल, दूषित कीट भक्षित, लोह दूषित, भाव दूषित, क्रिया दूषित अन्न न खावे ॥ १० ॥ परकीय अन्न, दूसरे से शत्रुता, परस्त्री गमन, तीर्थ के सिवा कहीं जाना विदेश गमन आदि त्याग करे ॥ ११ ॥ पुरुषोत्तम मास में, देवता, वेद, ब्राह्मण, गुरु, गौ, व्रती, स्त्री महात्मा पुरुषों की निन्दा करना छोड़दे ॥ १२ ॥ प्राण्यंग सूतिका

का चूर्ण मांस है एवं फलों में जंबीरी मांस है और धान्यों में मसूर माँस है बासी अन्न भी मांस है, इन्हें त्याग करे ॥ १३ ॥ बकरी, गाय, भैंस के दूध को छोड़कर अन्य सब दूध माँस तुल्य हैं, ब्राह्मण से खरीदा रस तथा पृथ्वी से उत्पन्न नमक मांस तुल्य है ॥ १४ ॥ ताम्बे के पात्र में रखा हुआ दूध, चमड़े के पात्र का जल अपने लिये पकाया हुआ अन्न ये सब मांस तुल्य

राजमहतांनिंदांवर्जयेत्पुरुषोत्तमे।१२।प्राण्यंगमामिषंचूर्णंफलेजंबीरमामिषम् ॥ धान्येमसूरिकाप्रोक्ताअन्नंपर्युषितंतथा ।१३। अजागोमहिषीदुग्धादन्यद्दुग्धादिचामिषम् ॥ द्विजक्रीतारसाःसर्वेलवणंभूमिजंतथा ।१४। ताम्रपात्रस्थितंगव्यंजलंचर्मणिसंस्थितम् ॥ आत्मार्थंपाचितंचान्नमामिषंतद्बुधैःस्मृतम् ।१५। ब्रह्मचर्यमधःशय्यांपत्रावल्यांचभोजनम् । चतुर्थकालेभुक्तिंचप्रकुर्यात्पुरुषोत्तमे ।१६। रजस्वलांत्यजेतम्लेच्छपतितैर्व्रात्यकैःसह । द्विजद्विट्वेदबाह्यैश्चनवदेत्पुरुषोत्तमे ।१७। एभिर्दृष्टंचकाकैश्चसूतकान्नंचयद्भवेत् । द्विःपाचितंचदग्धान्नंनैवाद्यात्पुरुषोत्तमे ।१८। पलांडुँलशुनंमुस्तांछत्राकंगृंजनंतथा । नालिकंमूलकंशिग्रुँवर्जयेत्पुरुषोत्तमे ।१९। एता-

कहे गये हैं ॥१५॥ पुरुषोत्तम व्रती ब्रह्मचर्य में रहे, पृथ्वीपर सोवे, पत्तो पर भोजन करे, दिन के चौथे पहर भोजन करे ॥ १६ ॥ रजस्वला स्त्री, चाण्डाल, म्लेच्छ पतित, संस्कार रहित ब्राह्मण द्वेषी वेद विरुद्ध इन सबसे व्रती सम्भाषण न करे ॥ १७ ॥ उपरोक्त पुरुषों से देखे हुए कौओं से देखे हुए अन्न को तथा दो बार पकाये गये एवं जले हुए अन्न को पुरुषोत्तम में नखावे ॥१८॥ प्याज लशुन, मुन्था, छत्रक (खुम्भ) गाजर, पालिक, मूली बथुआ इन्हें पुरुषोत्तम मास में न खावे ॥ १९ ॥ सब प्रकार के व्रतो

में व्रती पुरुष इन सबका त्याग करे। और विष्णु प्रीति निमित्त कृच्छ्चान्द्रायण आदि व्रत भी यथा शक्ति करे ॥ २० ॥ कासी फल, कन्ठकारिका, तरुणी, मूरी, श्रीफल, कलिंग, आंवले ॥ २१ ॥ नारियल, अलांबु (तोरी) पटोल, बेर, चर्म शाक, बैंगन, आजिक शाक, केवल जलोत्पन्न शाक वल्ली आदि ॥ २२ ॥ ये सब पुरुषोत्तम मास की प्रति पदा से लेकर पूर्ण मासी तक न खावे

निवर्जयेन्नित्यंव्रतीसर्वव्रतेष्वपि ॥ कृच्छ्राद्यं चापिकुर्वीतस्वशक्त्याविष्णुतुष्टये ॥ २० ॥ कूष्मांडंबृहतीचैव-तरुणीमूलकंतथा ॥ श्रीफलंचकलिंगंचफलंधात्रीफलंधात्रीफलंतथा ॥ २१ ॥ नारिकेलमलाबुंचपटोलं बदरीफलम् ॥ चर्मवृंताजिकंवल्लीशाकंतुजलजंतथा ॥ २२ ॥ शाकान्येतानिवर्ज्यानिक्रमात्प्रतिपदादिषु धात्रीफलंचैतद्वद्वर्जयेत्सर्वदागृही ॥ २३ ॥ यद्यद्योवर्जयेत्किंचित्पुरुषोत्तमतुष्टये ॥ तत्पुनर्ब्राह्मणेदत्वाभक्षयेत्सर्वदैवहि ॥ २४ ॥ कुर्यादेतांश्चनियमान्व्रतीकार्तिकमाघयोः ॥ नियमेनविनाराजन्फलंनैवाप्नुयाद्व्रती ॥ २५ ॥ उपोषणेनकर्तव्यःशक्तिश्चेत्पुरुषोत्तमः ॥ अथवाघृतपानंचपयःपानमयाचितम् ॥ २६ ॥

एवं रवि दार को गृहस्थी आँवले न खावे ॥ २३ ॥ पुरुषोत्तम मास में जिन २ वस्तुओं को त्याग कर रखा हो मांस आदि गर्ह्य वस्तुओं को छोड़ कर पुरुषोत्तम मास के अनन्तर वे वस्तुएं ब्राह्मण को दान करके फिर खाना आरम्भ करे ॥ २४ ॥ यही नियम कार्तिक माघ के व्रत का भी है। हे राजन्! नियम के विना व्रत का कुछ भी फल नहीं मिलता ॥ २५ ॥ यदि शक्ति हो तो पुरुषोत्तम व्रत उपवास से करे। अथवा घृत पान करे किंवा विना मांगा दुग्ध पान करे ॥ २६ ॥ अथवा व्रतार्थी पुरुष

जिससे व्रत भङ्ग न हो उसमें निपुण होकर दिन के समय यथा शक्ति कुछ फलाहार करले ॥ २७॥ पुरुषोत्तम के पवित्र दिन लगने पर प्रातःकाल उठकर समय के पूर्व नित्यकृत्य सब करले, फिर श्रीकृष्ण का हृदयमें स्मरण करके भक्ति पूर्वक नियम ग्रहणकरे॥ २८॥ हे राजन् नियम में उपवास करने का, एक बार भोजन करने का अथवा रात्रि भोजन का निश्चय करके व्रत आरम्भ करे ॥ २९ ॥

फलाहारादिवाकार्यंयथाशक्त्याव्रतार्थिना ॥ व्रतभंगोयथानस्यात्तथाकार्यंविचक्षणैः ॥ २७ ॥ पुण्येन्हिप्रातरुत्थायकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥ गृह्णीयान्नियमंभक्त्याश्रीकृष्णंचहृदिस्मरन् ॥ २८ ॥ उपवासस्यनक्तस्यचैकभुक्तस्यभूपते ॥ एकंचनिश्चयंकृत्वाव्रतमेतत्समाचरेत् ॥ २९ ॥ श्रीमद्भागवतंभक्त्याश्रोतव्यंपुरुषोत्तमे ॥ तत्पुण्यंवचसावक्तुं विधातापिनशक्नुयात् ॥ ३० ॥ शालिग्रामार्चनंकार्यंमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ तुलसीदललक्षेणतस्यपुण्यमनंतकम् ॥ ३१ ॥ यथोक्तव्रतिनंदृष्ट्वामासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ यमदूताःपलायंतेसिंहंदृष्ट्वायथा-गजाः ॥ ३२ ॥ एतन्मासव्रतंराजञ्छ्रेष्ठंक्रतुशतादपि ॥ क्रतुं कृत्वाप्नुयात्स्वर्गंगोलोकंपुरुषोत्तमे ॥ ३३ ॥

श्रीपुरुषोत्तम मास में श्रीमद्भागवत की कथा भी प्रतिदिन सुने इसका पुण्य तो ब्रह्मा भी नहीं कह सकते ॥ ३० ॥ श्रीपुरुषोत्तम में एक लाख तुलसी दल चढ़ाकर श्रीशालिग्राम की पूजा करने से अनन्त फल मिलता है यह भी करे ॥ ३१ ॥ इस उक्त विधान से श्रीपुरुषोत्तम व्रत करने वाले पुरुष को देखकर जैसे सिंह को देखकर हाथी भाग जाते हैं वैसे यमदूत भाग जाते हैं ॥ ३२ ॥ सैकड़ो यज्ञों से राजन् ! इस महीने का व्रत श्रेष्ठ है । यज्ञ करने वाला तो स्वर्ग में जाता है, पुरुषोत्तम व्रती गोलोक गमन

करता है ॥ ३३ ॥ जो पुरुषोत्तम व्रत करता है उसके शरीर में पृथ्वी भर के सब तीर्थ तथा क्षेत्र आकर निवास करते हैं ॥ ३४ ॥ श्रीपुरुषोत्तम व्रत करने से दुःस्वप्न, दरिद्रता, तीनों प्रकार के पाप सब नष्ट हो जाते हैं ॥ ३५ ॥ श्रीहरि भगवान् के दास जब पुरुषोत्तम मास की सेवा में होते हैं तब पुरुषोत्तम भगवान् की प्रसन्नता के लिये इन्द्र आदि देवता आकर उन्हें विघ्नों से बचाया

पृथिव्यांयानितीर्थानिक्षेत्राणिसर्वदेवताः ॥ तद्देहेतानितिष्ठंतियःकुर्यात्पुरुषोत्तमम् ॥३४॥ दुःस्वप्नंचैवदारिद्र्यंदुष्कृतंत्रिविधंचयत् ॥ तत्सर्वंविलयंयातिकृतेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ३५ ॥ पुरुषोत्तमसेवायांनिश्चलंहरिसेवकम् ॥ विघ्नाद्रक्ष्यंतिशक्राद्याःपुरुषोत्तमतुष्टये ॥ ३६ ॥ पुरुषोत्तमस्यव्रतिनोयत्रयत्रवसंतिच ॥ भूतप्रेतपिशाचाद्यानतिष्ठंतितदग्रतः ॥ ३७ ॥ एवंयोविधिनाराजन्कुर्याच्छ्रीपुरुषोत्तमम् ॥ सहस्रवदनोनांतत्फलंवक्तुमंजसा ॥ ३८ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ पुरुषोत्तमंप्रियममुंपरमादरेणकुर्यादनन्यमनसापुरुषोत्तमोयः ॥

करते हैं ॥ ३६ ॥ पुरुषोत्तम के व्रती पुरुष जहां जहां भी वास करते हैं भूत प्रेत पिशाच आदि उनके आगे ठहर ही नहीं सकते ॥ ३७ ॥ इस विधि से हे राजन् ! जो पुरुषोत्तम व्रत करता है सहस्रमुख शेष नाग भी उसके पुण्यों का फल वर्णन करने में असमर्थ हैं ॥ ३८ ॥ श्रीनारायण बोले—हे राजन् ! जो उत्तम पुरुष इस पुरुषोत्तम भगवान् के अतिप्रिय पुरुषोत्तम व्रत को अति आदर से अनन्य मन होकर धारण करता है वह पुरुषोत्तम भगवान् का अति प्रिय पुरुषों में उत्तम होकर रसिकेश्वर भगवान् के

साथ क्रीड़ा करता है ॥ ३९ ॥ इति श्री पुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां द्वविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥

राजा बोले—हे मुनिवर्य ! श्रीपुरुषोत्तम मास में दीपदान का क्या फल है, हे दीनदयालों ? कृपा करके यह सुनाइये॥१॥ श्रीनारायण बोले—राजाके ऐसा पूछने पर अत्यन्त प्रसन्न होकर मुनिवर्य वाल्मीकि जी हंसते २ विनीत राजा से बोले ॥ २ ॥

पुरुषोत्तमः प्रियतमः पुरुषः सभूत्वा पुरुषोत्तमेन रमते रसिकेश्वरेण ॥ ३९ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेपुरुषोत्तमव्रतनियमकथनंनामद्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

राजोवाच ॥ किंफलंदीपदानस्यमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ तन्मेवदमुनिश्रेष्ठकृपयादीनवत्सल ॥ १ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्थंविज्ञापितःप्राहवाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥ प्रवृद्धहर्षोराजानंविनीतंप्रहसन्निव ॥ २ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ शृणुष्वराजशार्दूलकथांपापप्रणाशिनीम् ॥ यांश्रुत्वायातिविलयंपापंपंचविधंमहत् ॥३ सौभाग्यनगरेराजाचित्रबाहुरितिश्रुतः ॥ सत्यसंधोमहाप्राज्ञश्चासीच्छूरतरःपरः ॥ ४ ॥ सहिष्णुःसर्वधर्मज्ञःशीलरूपदयान्वितः ॥ ब्रह्मण्योभगवद्भक्तःकथाश्रवणतत्परः ॥ ५ ॥ स्वदारनिरतःशश्वत्पशुपुत्रसमन्वितः

हे राज शार्दूल ! पाप नाशिनी कथा सुनिये, जिसके श्रवण मात्र से पाँचों प्रकार के पाप नष्ठ हो जाते हैं ॥ ३ ॥ सौभाग्य नगर में चित्रबाहु नाम के एक प्रसिद्ध राजा हुए हैं, वे सत्यवक्ता, बुद्धिमान, अत्यन्त पराक्रमी थे ॥ ४ ॥ सहन करने के स्वभाव वाले, सब धर्मों के ज्ञाता, दया, शील रूप आदि से युक्त, ब्राह्मणों के सेवक, भगवद्भक्त, कथा सुनने वाले ॥ ५ ॥ स्वधर्म पत्नी

में सन्तोषी, पशु पुत्र आदि से युक्त, चतुरंगिणी सेना के स्वामी एवं धन ऐश्वर्य में वे दूसरे कुबेर थे ॥ ६ ॥ उनकी पत्नी महा भागा पति व्रता थी वह पूरी भगवान् की भक्ता थी चौसठ प्रकार की कलाएं उसमें विद्यमान थी, नाम उसका चन्द्रकला था ॥७॥ ऐसी पत्नी पाकर वे नवयुवक राजा पृथ्वी पर शासन कर रहे थे। वे श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। श्रीकृष्ण भगवान् के सिवा वे

चतुरंगबलोपेतःसमृद्धाधनदोपमः ॥ ६ ॥ तस्यभार्याचंद्रकलाचतुःषष्टिकलान्विता ॥ पतिव्रतामहाभागा-भगवद्भक्तिसंयुता ॥ ७ ॥ तयासहमहीपालोबुभुजेमेदिनींयुवा ॥ विनाश्रीकृष्णदेवंसनैवजानातिदैवतम् ॥ ॥ ८ ॥ एकस्मिन्दिवसेराजाचित्रबाहुर्महीपतिः ॥ दृष्ट्वासमागतंदूरादगस्त्यंमुनिपुंगवम् ॥ ९ ॥ प्रणम्य-दंडवद्भूमौविधिनातमपूजत् ॥ कल्पयित्वासनंभक्त्यातस्थौमुनिवराग्रतः ॥ १० ॥ विनयावनतोभूत्वाजगा-दमुनिसत्तमम् ॥ राजोवाच ॥ अद्यमेसफलंजन्मह्यद्यमेसफलंदिनम् ॥ ११ ॥ अद्यमेसफलंराज्यमद्यमेसफ-

किसी दूसरे देवता को जानते ही नहीं थे ॥ ८ ॥ एक दिन–वे महाराज चित्र बाहु घर में बैठे हुए थे कि उन्होंने सामने आते हुए ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्य जी को देखा ॥ ९ ॥ उठकर उन्होंने दण्डवत्प्रणाम किया, विधि पूर्वक उनकी पूजा की। उनके लिये आसान बिछाकर प्रेम से उन्हें बिठाया ॥ १० ॥ विनय पूर्वक मुनिवर्य से राजा कहने लगे ॥ हे मुने ! आपके दर्शन पाकर मेरा आज ही जन्म सफल हुआ यह दिन भी आज सफल हुआ है ॥ ११ ॥ मेरा राज्य, घर आदि सब आज ही

सफल हुए हैं, मेरे घर में श्रीकृष्ण भगवान् के पूर्ण भक्त आप पधारे हो ॥ १२ ॥ आपके दर्शन पाकर मैं सब पापों से मुक्त होगया हूं हे मुनिवर ! यह हाथी घोड़े रथों से संयुक्त राज्य आपके समर्पण है ॥१३॥ हे मुनि श्रेष्ठ ! आप वैष्णव हैं मैं भला आपको दे ही क्या सकता हूं। वैष्णवों के चरणों में यदि थोड़ा सा भी समर्पण हो वह मेरु तुल्य हो जाता है ॥ १४ ॥ जो

लंगृहम् ॥ यस्त्वंसमागतोमेद्यगृहेश्रीकृष्णसेवकः ॥ १२ ॥ मुक्तोहंपापसंघाताद्यत्त्वयाहंनिरीक्षितः ॥ तुभ्यं समर्पितंराज्यंगजाश्वरथसंयुतम् ॥ १३ ॥ वैष्णवोसिमुनिश्रेष्ठनास्त्यदेयंमयातव ॥ मेरुतुल्यंभवेत्स्वल्पंवैष्णवायसमर्पितम् ॥ १४ ॥ कपर्दिकाप्रमाणंतुव्यंजनंवान्नमुत्तमम् ॥ नयच्छतिदिनेयस्तुवैष्णवायद्विजन्मने ॥ ॥ १५ ॥ तद्दिनंविफलंतस्यकथितंवेदपारगैः ॥ विष्णुभक्ताश्चयेकेचित्सर्वेपूज्याद्विजातयः ॥ १६ ॥ तेषांसंभावनाकार्यावाङ्मनःकायकर्मभिः ॥ कथितंममगर्गेणगौतमेनसुमंतुना ॥ १७ ॥ तावत्प्रभाचताराणांया-

भी पुरुष वैष्णव ब्राह्मण के प्रति कपर्दिका जितना थोड़ा व्यंजन एवं उत्तम अन्न जिस दिन नहीं देता ॥ १५ ॥ वेद वेत्ताओं ने उसका वह दिन निष्फल कहा है। जो विष्णु के भक्त ब्राह्मण हों, वे सब पूजने योग्य हैं ॥ १६ ॥ उन्हीं का मन, वाणी, शरीर, कर्मों के द्वारा सदा सत्कार करना चाहिये, ऐसा मुझे गर्ग, गौतम, सुमंतु महात्माओं ने कहा है ॥ १७ ॥ तारों की तब तक छटा रहती हैं, जब तक कि सूर्य नहीं उदय होते इसी प्रकार अन्य ब्राह्मणों की तभी तक पूजा होती है कि जब तक

कोई वैष्णव ब्राह्मण न पधारे ॥ १८ ॥ अगस्त्य बोले —चित्र वाहो ! तुम धन्य हो । भाग्यशाली हो । यह सब प्रजा के लोग भी तुम्हारे धन्य हैं, जिनकी तुम परम वैष्णव रक्षा कर रहे हो ॥ १९ ॥ उस राज्य में कभी निवास न करे जहां वैष्णव राजा न हो । इससे तो शून्य वन में रहना ही उत्तम है किन्तु अवैष्णव राजा के राष्ट्र में रहना अच्छा नहीं ॥ २० ॥ जैसे नेत्रहीन

वन्नोदयतेरविः ॥ तावदन्येद्विजन्मानोयावान्नायातिवैष्णवः ॥१८॥ अगस्त्यउवाच ॥ चित्रवाहोमहाभाग-धन्यस्त्वंसांप्रतंनृप ॥ इमाधन्याःप्रजाःसर्वायस्त्वंरक्षसिवैष्णवः ।१९। तस्मिन्राष्ट्रे नवस्तव्यंस्यराजानवैष्णवः वरोवासोवनेशून्येनतुराष्ट्रे ह्यवैष्णवे: ।२०। चक्षुर्हीनोयथादेहःपतिहीनायथाप्रिया । निरक्षरोयथाविप्रस्तथा राष्ट्रमवैष्णवम् ॥२१॥ दंतहीनोयथाहस्तीपक्षहीनायथाखगः । एकादशीदशमीविद्धातथाराष्ट्रमवैष्णवम् ॥२२॥ दर्भहीनायथासंध्यातिलहीनंचतर्पणम्वृत्त्यर्थंदेवसेवाचतथाराष्ट्रमवैष्णवम् ।२३। सकेशाविधवायद्वद्-व्रतंस्नानविवर्जितम् ॥ शूद्रश्चब्राह्मणीगामीतथाराष्ट्रमवैष्णवम् ॥ २४ ॥ सराजाप्रोच्यतेसद्भिर्यःश्रीकृष्ण-

शरीर, पति हीन पत्नी, अनपढ़ ब्राह्मण, अच्छे नहीं वैसे अवैष्णव राष्ट्र भी श्रेष्ठ नहीं ॥ २१ ॥ और जैसे दान्तों के बिना हाथी पंखों के बिना पक्षी दशमी विद्धा एकादशी श्रेष्ठ नहीं वैसे अवैष्णव राष्ट्र अच्छा नहीं ॥ २२ ॥ और जैसे कुशाके बिना सन्ध्यो-पासना, तिलों के बिना तर्पण एवं आजीविकार्थ देव सेवा श्रेष्ठ नहीं वैसे अवैष्णव राष्ट्र अच्छा नहीं ॥ २३ ॥ जैसे बालों वाली विधवा, स्नान किये बिना व्रत, ब्राह्मणी गामी शूद्र अच्छे नहीं वैसे अवैष्णव राष्ट्र अच्छा नहीं ॥ २४ ॥ श्रेष्ठ

पुरुष उसे राजा कहते हैं जो श्रीकृष्ण भगवान् के चरणों का आश्रय करने वाला हो उसी का राष्ट्र बढ़ता है एवं उसी की प्रजा सुख पाती है ॥ २५ ॥ हे राजन् ! यह मेरी दृष्टि भी आज सफल हुई है जिसके द्वारा मैंने आपको देखा है, हे भगवद्भक्त ! आपके साथ सम्भाषण करने वाली यह वाणी भी आज सफल हुईहै ॥ २६ ॥ हे राजन् मेरी आज्ञा से इस राज्य को आप ही

पदाश्रयः ॥ तद्राष्ट्रं वर्धतेनित्यंसुखीभ्भवतितत्प्रजा ॥ २५ ॥ दृष्टिर्मेसफलाराजन्यन्मयात्वंनिरीक्षितः ॥ अद्यमेसफलावाणीह्यच्युतेयत्त्वयासह ॥ २६ ॥ इदंराज्यंत्वयाराजन्प्रकर्त्तव्यंममाज्ञया ॥ प्रतिष्ठितोमयाराज्येगमिष्याम्यस्तुस्वस्तिते ॥ २७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्त्वागंतुकामंतयगस्त्यंमुनिपुंगवम् ॥ ननामपरयाभक्त्यामंहिषीसापतिव्रता ॥ २८ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ अवैधव्यंसदातेस्तुभक्त्याभजपतिंशुभे ॥ दृढातेस्तुसदाभक्तिःश्रीगोपीजनवल्लभे ॥ २९ ॥ इत्थमाशीर्ददानंतंभूयःप्राहमहीपतिः ॥ बद्धांजलिपुटोभूत्वाविनयानतकंधरः ॥ ३० ॥ चित्रबाहुरुवाच ॥ विपुलामेकथंलक्ष्मीःकथंराज्यमकंटकम् ॥ पतिव्रताकथंप-

करें । मैंने आपको राज्य पर प्रतिष्ठित कर दिया आपका कल्याण हो मैं अब जा रहा हूं ॥ २७ ॥ श्रीनारायण बोले-ऐसा कह कर जब ऋषि श्रेष्ठ अगस्त्य जी जाने को तैयार हुए तब परमभक्त पतिव्रता रानी ने भक्ति से उन्हें प्रणाम किया ॥ २८ ॥ अगस्त्य बोले-हे शुभे ! तुम सौभाग्यवती हो, पति की सेवा में तत्पर रहो, श्रीगोपीजन वल्लभ श्रीकृष्ण में तुम्हारा अविचल प्रेम हो ॥ २९ ॥ इस प्रकार आशीर्वाद देते हुए महामुनि को राजाने अपना सिर झुका कर हाथ जोड़े फिरकहने लगे ॥ ३० ॥

चित्र बाहु बोले—हे महात्मन् ! मैं आपकी शरण हूं कृपया यह कहिये कि इतनी विपुल लक्ष्मी, निष्कण्टक राज्य, तथा पतिव्रता पत्नी मुझे किन पुण्यों से प्राप्त हुई हैं ॥ ३१ ॥ हे मुनीश्वर ! आप तो सर्वज्ञ हैं हाथ में रखे दर्पण की भाँति आप सब कुछ जानते हैं ॥ ३२ ॥ श्रीनारायण बोले-जब इस प्रकार राजाने मुनि श्रेष्ठ अगस्त्य जी से निवेदन किया, तब वे मुनि मन को

त्नीकिंकृतंसुकृतंमया ॥ ३१ ॥ एतन्मेब्रूहिविप्रेंद्रत्वाहंशरणांगतः ॥ करस्थामलवत्सर्वंजानासित्वंमुनीश्वर ॥ ३२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्थमावेदितोराज्ञाह्यगस्त्योमुनिपुँगवः ॥ समाहितमनाभूत्वाजगादनृपस त्तमम् ॥ ३३ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ मयाविलोकितंसर्वंप्राक्तनंचरितंतव ॥ तत्सर्वंकथयाम्यद्यसेतिहासंपुरातनम् ॥ ३४ ॥ चमत्कारपुरेरम्येमणिग्रीवाभिधानभृत् ॥ त्वमभूःशूद्रजातीयोजीवहिंसापरायणः ॥ ३५ ॥ नास्तिकोदुष्टचारित्रःपरदारप्रधर्षकः ॥ कृतघ्नोदुर्विनीतश्चशिष्टाचारविवर्जितः ॥ ३६ ॥ याचेयंभवतोभा-

एकाग्र करके राजा से कहने लगे ॥ ३३ ॥ अगस्त्य बोले-मैंने तुम्हारे पूर्व जन्म का सब चरित्र देख लिया है। वह सारा इतिहास पुरातन मैं तुम्हें सुनाता हूं ॥ ३४ ॥ पूर्व जन्म में तुम शूद्र थे मणिग्रीव तुम्हारा नाम था, मनोहर चमत्कार पुर में तुम्हारा निवास था, जीवों की हिंसा किया करना तुम्हारा काम था ॥ ३५ ॥ नास्तिक, दुष्ठ चरित्र, पर स्त्रियों को हर लेना, कृतघ्न रहना, दुर्विनीत, शिष्टाचार से रहित होना, ये सब बातें उस समय तुम्हें स्वाभाविक थीं ॥ ३६ ॥ और जो यह तुम्हारी

पत्नी उस जन्म में भी तुम्हारी पत्नी थी, अत्यन्त सुन्दरी होने के अतिरिक्त मन, कर्म एवं वाणी से यह पति सेवा परायण थी ॥ ३७ ॥ यह महाभागा पतिव्रता परमधर्मात्मा एवं मनस्विनी थी कभी भी तुम पर इसकी दुर्भावना नहीं थी ॥ ३८ ॥ तुम उस समय पाप कर्मा थे इसी कारण जाति बन्धुओं ने तुम्हें त्याग दिया था, राजा ने भी क्रोध में आकर तुम्हारा सारा धन छीन

र्यापूर्वजन्मनिसुंदरी ॥ कर्मणामनसावाचापतिसेवापरायणा ॥ ३७ ॥ पतिव्रतामहाभागाधर्मनिष्ठामनस्विनी ॥ भावंनकुरुतेदुष्टंतवोपरिकदाचन ॥ ३८ ॥ ज्ञातिभिस्त्वंपरित्यक्तोबंधुभिःपापकर्मकृत् ॥ राज्ञाक्रुद्धेनतेसर्वंगृहीतंधनमुत्तमम् ॥ ३९ ॥ ततोऽवशिष्टंयत्किंचिद्गृहीतंज्ञातिभिस्तदा ॥ गतेद्रव्येधनाकांक्षातवासीद्विपुलातदा ॥ ४० ॥ क्षीयमाणेधनेसाध्वीनत्वामत्यजदुन्मनाः ॥ एवंतिरस्कृतःसर्वैर्गतवान्निर्जनंवनम् ॥ ४१ ॥ हत्वाजीवाननेकांश्चत्वंचकर्थात्मपोषणम् ॥ एवंवर्तयतस्तस्यपत्न्यासहमहीपते ॥४२॥

लिया था॥३९॥बाकी बचा खुचा धन जाति वालोंने छीन लिया था,इस प्रकार धन नष्ट हो जाने से तुम्हें विपुल धनपानेकी इच्छाहुई ।४०।धनके क्षीण होजाने परदुःखीहोकरभी इस साध्वीपत्नीनेतुम्हें त्यागनहीं किया,सबसे तिरस्कृत होकरअत्यन्त दुःखसे वहांसे निकल कर तुमनिर्जन वनमेंचले गये॥४१॥बनमें अनेक जीवों को मार तुम अपनी पालना करने लगे । हे राजन् उस समय पत्नी भी तुम्हारे साथ आयी थी ॥४२॥ एक बार धनुष बाण लेकर वह मणिग्रीव मृग मांस की चाहना से सिंह मृगों से व्याप्त बनमें पहुँचा ॥४३॥

उस निर्मानुष महावन के मध्य दिशा भ्रष्ट होकर महायोगी उग्रदेव महामुनि मार्ग भूल जाने के कारण अत्यन्त व्याकुल होकर भटक रहे थे ॥ ४४ ॥ दोपहर का समय हो आया था, उन्हें प्यास बहुत सता रही थी प्यास के मारे अत्यन्त व्याकुल होकर वे वहीं पड़ गये हे राजन् ! उनकी मरणावस्था आ पहुँची ॥ ४५ ॥ उस समय वह मणिग्रीव तुम वहां पहुंचे, दिशाभ्रष्ठ तथा

एकदाधनुरुद्यम्यमणिग्रीवोवनंगतः ॥ बहुव्यालमृगाकीर्णंमृगमांसजिघृत्सया ॥ ४३ ॥ तस्मिन्निर्मानुषेरण्येमध्येमार्गंमहामुनिः ॥ उग्रदेवइतिख्यातोदिङ्मूढोविह्वलोभवत् ॥ ४४ ॥ तृषासंपीडितोत्यर्थमध्यंदिनगतेरवौ ॥ तत्रैवपतितोराजन्मुमूर्षुरभवत्तदा ॥ ४५ ॥ तंदृष्ट्वातेदयाजातादिग्भ्रष्टंदुःखितंद्विजम् ॥ उत्थाप्यतंद्विजन्मानंगृहीत्वास्वाश्रमंगतः ॥ ४६ ॥ दंपतिभ्यांकृतासेवादुःखितस्यद्विजन्मनः ॥ उग्रदेवोमहायोगीमुहूर्तानंतरंतदा ॥ ४७ ॥ अवाप्यचेतनांतत्रविस्मयंसमजीगमत् ॥ तत्रस्थोहंकुतश्चात्रकेनानीतोवनांतरम् ॥ ॥ ४८ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ मणिग्रीवोवदद्विप्रंरमणीयमिदंसरः ॥ अत्रास्तेशीतलंवारिपद्मिनीपुष्प

अत्यन्त दुःखी उस ब्राह्मण को देखकर तुम्हें दया आगई। उसे उठाकर अपने स्थान पर ले आये उस दुःखित ब्राह्मण की तुन दोनों स्त्री पुरुष ने मिलकर सेवा की वह उग्रदेव महायोगी एक मुहूर्त के अनन्तर ॥ ४७ ॥ होश में आकर अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गये, अरे मैं तो उस बनमें व्याकुल होकर पड़ गया था, भला यहां कौन उठाकर लाया हैं ॥ ४८ ॥ श्रीनारायण बोले— हे देव ! आप घबराइये नहीं, यहां अत्यन्त स्वच्छ तथा शीतल जल का मनोहर तालाब है कमलिनियों से सदा सुगन्धित रहता

है ॥ ४६ ॥ आप चलिये उसके शीतल जल में स्नान करके प्रातः काल के कृत्य करके फिर फलाहार करें एवं शीतल जलपान करें ॥ ५० ॥ उसके अनन्तर आकर आप सुख से विश्राम करें । इस समय मैं ही तुम्हें उठाकर लाया हूं तुम बच गये हो हे मुनिश्रेष्ठ अब उठकर हमें प्रसन्न करें ॥ ५१ ॥ अगस्त्य बोले-होश में आये हुए उग्रदेव ब्राह्मण मणिग्रीव की बात सुनकर कुछ

वासितम् ॥ ४६ ॥ तत्रस्नात्वाजलेशीतेकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥ कुरुब्रह्मन्फलाहारंपिबवारिसुशीतलम् ॥ ५० ॥ सुखेनकुरुविश्राममंमयालंरक्षितोऽधुना ॥ उत्तिष्ठत्वंमुनिश्रेष्ठप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ ५१ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ लब्धसंज्ञस्तदाविप्रउग्रदेवोगतश्रमः ॥ मणिग्रीववचःश्रुत्वासमुत्तस्थौतृषातुरः ॥ ५२ ॥ मणिग्रीवभुजालंबीजगामससरसीतटम् ॥ उपविष्टश्चित्रबाहोतत्तटेवटशोभिते ॥ ५३ ॥ विश्रम्यतत्क्षणंवि-प्रोवटच्छायांसमधिश्रितः ॥ स्नात्वानित्यविधिंकृत्वावासुदेवमपूजयत् ॥ ५४ ॥ देवान्पितृंश्चसंतर्प्यपपौनीरं-सुशीतलम् ॥ उग्रदेवस्ततःशीघ्रंवटमूलमुपाश्रितः ॥ ५५ ॥ मणिग्रीवःसपत्नीकोननामसुनिसत्तमम् ॥ वि

स्वस्थ हो चुके थे प्यास लग जाने के कारण उठ खड़े हुए ॥ ५२ ॥ तब मणिग्रीव ने उनकी भुजा पकड़ ली उसी के सहारे वे ब्राह्मण तालाब पर पहुंचे । हे चित्र वाहो ? उसके रमणीक तटपर वे कुछ सुस्ताने लगे ॥ ५३ ॥ किनारे बड़ वृक्ष की छाया में कुछ आराम करके उन्होने स्नान किया, फिर नित्य कृत्य विधि पूर्वक करके भगवान् वासुदेव का पूजन करने लगे ॥ ५४ ॥ फिर उन्होंने देवता तथा पितरों को तर्पण दिया, उसके अनन्तर शीतल जल पान करके बड़ के नीचे आकर के बैठे ॥ ५५ ॥ तब

पत्नी के साथ मणिग्रीव ने आकर श्रेष्ठ मुनि को प्रणाम किया, तब ऋषि के आतिथ्य करने के लिये विनय पूर्वक वह बोला॥५६॥ मणिग्रीव बोला—हे ब्रह्मन्! हमारे उद्धार करने के लिये आज आप मेरे इस आश्रम पर पधारे हैं। स्वामिन्! आपके दर्शन मात्र से ही मेरे सब पाप नष्ट हो गये हैं॥५७॥ इतना कह कर फिर उसने अपनी पत्नी को परम प्रसन्नता से कहा हे भाग्यवति!

नयेनावदद्वाचमातिथ्यंकर्तुमुन्मनाः ॥ ५६ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ अस्मत्संतारणायाद्यमदाश्रममुपागतः ॥ ब्रह्मंस्त्वद्दर्शनादेवपापंमेविलयंगतम् ॥ ५७ ॥ इत्युक्त्वातांप्रियामाहमणिग्रीवोमुदान्वितः ॥ अयिसुन्दरिपक्वानिस्वादूनियानियानिच ॥ ५८ ॥ तानिचूतफलनित्वंशीघ्रमानयमाचिरम् ॥ अन्यत्कंदादियत्किंचित्तदानयशुभानने ॥ ५९ ॥ निजनाथवचःश्रुत्वाफलान्यादायसुन्दरी ॥ कंदादिकंचविप्राग्रेस्थापयामासहर्षतः ॥ ६० ॥ मणिग्रीवःपुनर्वाक्यमुवाचमुनिसत्तमम् ॥ फलान्यंगीकुरुब्रह्मन्कृतार्थीकुरुदंपती ॥ ६१ ॥ उग्र

जितने परम स्वादिष्ठ एवं पके हुए॥ ५८ ॥ आम के फल रखे हों उन्हें शीघ्र लाओ, और भी कन्द आदि जो कुछ भी हों हे शुभानने! शीघ्र उठालाओ॥ ५९ ॥ इस प्रकार अपने स्वामी के वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता के साथ आश्रम पर जाकर फल कन्दादि शीघ्रता से उठा लायी और ब्राह्मण के आगे धर दिये॥ ६० ॥ मणिग्रीव फिर बोला—हे श्रेष्ठ मुनिजी इन फलों को अंगीकार करें हे ब्रह्मन् कृपयाहम दोनों को कृतार्थ करें॥ ६१ ॥ उग्रदेव बोले—हे साधु पुरुष! मैं नहीं जानता कि तुम कौन हो,

अपना परिचय दे दो, ज्ञानवान् ब्राह्मण को अज्ञान पुरुष का कुछ भी नहीं खाना चाहिये ॥ ६२ ॥ मणिग्रीव बोले–हे ब्राह्मण शिरोमणे–मैं शूद्र हूं मणिग्रीव मेरा नाम है अपने जाति सम्बन्धियों ने मेरा त्याग कर दिया है ॥ ६३ ॥ इस प्रकार शूद्र के वचन सुनकर उग्रदेव जी ने फलाहार कर लिया, उनकी आत्मा प्रसन्न हुई, फिर उन्होंने जल

देवउवाच ॥ त्वामहंनैवजानामिकस्त्वंभोकथयस्वमे ॥ अज्ञातस्यनभोक्तव्यंब्राह्मणेनविजानता ॥ ६२ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ शूद्रोहंद्विजशार्दूलमणिग्रीवाभिधानतः॥ स्वजनैर्जातिवर्गैश्चपरित्यक्तःस्वबांधवैः ॥६३॥ इत्थंशूद्रवचःश्रुत्वाफलाहारमचीकरत् ॥ उग्रदेवःप्रसन्नात्माततोनीरमपीपिवत् ॥ ६४ ॥ ततोविप्रंसुखासीनं मणिग्रीवोऽवदद्वचः लालयंस्तत्पदांभोजयुगंस्वांकगतंमुहुः ॥ ६५ ॥ मणिग्रीवउवाच ॥ क्वगंतव्यंमुनिश्रेष्टकुतस्त्वंचेहकानने ॥ निर्जनेनिर्जलेदुष्टेहिंस्रजंतुसमाकुले ॥ ६६ ॥ उग्रदेवउवाच ॥ ब्राह्मणोऽहंमहाभागप्रयागंगंतुमुत्सहे ॥ अधूनाज्ञातमार्गेणसंप्राप्तोदारुणेवने ॥ ६७ ॥ तत्रश्रांतस्तृषाक्रांतोमुमूर्षुरभवंद्व-

पिया ॥ ६४ ॥ उसके अनन्तर वे ब्राह्मण सुख मे बैठे, तब मणिग्रीव उनके चरण कमल गोदो में लेकर उन्हें सहलाते हुए कहने लगा ॥ ६५ ॥ मणिग्रीव बोला—हे मुनि श्रेष्ठ, इस निर्जन, बनमें जहाँ जल भी नहीं, और हिंस्र दुष्ट जन्तु जहाँ फिरते रहते हैं, ऐसे बन में आप कहां जा रहे थे ॥ ६६ ॥ उग्रदेव बोले–हे महाभाग ! मैं ब्राह्मण हूं प्रयाग राज जा रहा था किन्तु दारुण बन में आकर मैं रास्ता भूल गया ॥ ६७ ॥ वहाँ खूब थक गया था, प्यास भी बड़े जोर की लग रही थी, मैं मरने वाला

ही था कि तूने आकर मुझे जीवन दिया, अब कहो मैं तुम्हें क्या दूं ॥६८॥ हे मणिग्रीव तुम दोनों स्त्री पुरुष दुःख से इस वन में पड़े हो तुम्हारा दुःख मैं मिटा दूंगा तुम सब कारण मुझ से कहो ॥ ६९ ॥ अगस्त्य बोले—इस प्रकार उग्रदेव के सुन्दर वचन सुनकर पत्नी के सामने अपनी प्रार्थना में उस निर्धनता के समुद्र से पार होने की इच्छा रखकर अपने कर्मों के उग्रफल रूप सारा

णात् ॥ जीवितंमेत्वयादत्तं ब्रूहिकिंतेददाम्यहम् ॥ ६८ ॥ अरण्यंकेनदुःखेनदंपतीभ्यांसमाश्रितम् ॥ तद्दुःखमपनेष्यामिमणिग्रीववदस्वमे ॥ ६९ ॥ अगस्त्यउवाच ॥ इत्युग्रदेववचनंललितंनिशम्यपत्न्याःसमक्षमनुनीयमुनीश्वरंतम् ॥ दारिद्र्यसागरतितीर्षुरसौस्वकीयंवृत्तांतमाहनिजकर्मविपाकमुग्रम् ॥ ७० ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वनोपाख्यानेत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

मणिग्रीवउवाच ॥ चमत्कारपुरेरम्येविद्वज्जनसमाकुले ॥ ममवासोवभवत्तत्रधर्मपत्न्यासहद्विज ॥१॥ धनाढ्यस्यपवित्रस्यपरोपकृतिशालिनः ॥ कदाचिद्दैवयोगेनदुर्बुद्धिःसमपद्यत ॥ २ ॥ निजधर्मपरित्यागः

समाचार सुनाने लगा ॥ ७० ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

मणिग्रीव बोला—हे ब्राह्मण ! मैं अपनी पत्नी के साथ चमत्कार पुर नामी सुन्दर नगर में रहता था, वह नगर विद्वानों का निवास स्थल था ॥ १ ॥ मैं धनवान् भी था, एवं हृदय भी पवित्र तथा परोपकारी था। इसी प्रकार चलते २ दैवयोग से मेरी बुद्धि दुष्ट होगई ॥ २ ॥ दुर्बुद्धि हो जाने से मैंने अपना धर्म त्याग कर दिया, परस्त्री गामी होकर अपेय वस्तु मद्य आदि पीने

लगा ॥ ३ ॥ चोरी करना, हिंसा करना ही मेरा काम हो गया, तब तो अपने सम्बन्धियों ने मुझे त्याग दिया, और यहाँ के राजाने भी मेरा घर लूट लिया ॥ ४ ॥ बाकी बचा खुचा धन बन्धु बान्धव उठाले गये । इस प्रकार सब से तिरस्कृत होकर मैं बनमें भाग आया, और बन में ही निवास कर लिया ॥ ५ ॥ यहां जीवों का वध करके पत्नी के साथ जी रहा हूं इस घोर

कृतोमेदुष्टबुद्धिना ॥ परस्त्रीसेवनंनित्यमपेयंपीयतेस्मह ॥ ३ ॥ चौर्यहिंसापरश्चाहंपरित्यक्तःस्वबन्धुभिः ॥ बृहद्बलेनभूपेनमद्गृहंलुँठितंतदा ॥ ४ ॥ अवशिष्टंचयत्किंचिद्गृहीतंबन्धुभिर्धनम् ॥ एवंतिरस्कृतःसर्वैर्वनवासमचीकरम् ॥ ५ ॥ कृत्वाजीववधंनित्यंजीवेयंभार्ययासह ॥ एतस्मिन्विपिनेघोरेवसतोमेदुरात्मनः ॥ ॥ ६ ॥ कुरुष्वानुग्रहंब्रह्मन्पापयुक्तस्यसांप्रतम् ॥ प्राचीनपुण्यपुञ्जेनसंप्राप्तोगहनेभवान् ॥ ७ ॥ तवाहंशरणंयातःसपत्नीकोमहामुने ॥ उपदेशप्रसादेनकृतार्थीकर्तुमर्हसि ॥ ८ ॥ येनमेतीव्रदारिद्र्यं विलयंयातितत्क्षणात् ॥ अतुलंवभवंलब्ध्वानिचरामियथासुखम् ॥ ९ ॥ उग्रदेवउवाच ॥ कृतार्थोसिमहाभागयदातिथ्यं-

बन में भी मैं दुरात्मा होकर बस रहा हूँ ॥ ६ ॥ हे ब्राह्मण देव ! मुझ पापी पर अब आप ही कृपा करें मेरे कोई पूर्व जन्म के पुण्य उदय हुए हैं जो इस घने बनमें आपके दर्शन हुए हैं ॥ ७ ॥ हे महामुने ! पत्नी के साथ अब मैं आपकी शरण हूं । कोई ऐसा उपदेश करें कि जिससे मैं कृतार्थ हो जाऊं ॥ ८ ॥ जिससे मेरी यह दरिद्रता तत्क्षण दूर होजाय । अतुल सम्पत्ति पाकर मैं आनन्द पूर्वक रहूं ॥ ९ ॥ उग्रदेव बोले—हे महाभाग अतिथि सत्कार करने से तुम कृतार्थ हो । अब तुम्हारा पत्नी के साथ

कल्याण होने वाला है ॥ १० ॥ व्रत, तीर्थ, दान, आदि के बिना ही एवं बिन परिश्रम तुम्हारी निर्धनता दूर होने को है ऐसा मैंने निश्चय कर लिया है ॥ ११ ॥ अब से तीसरा महीना पुरुषोत्तम भगवान् का है तुम दोनों पतिपत्नी प्रयत्न पूर्वक उस महीने में ॥ १२ ॥ पुरुषोत्तम भगवान् की प्रसन्नता के लिये केवल दीपक दान करते रहो उसी से तुम्हारी यह

कृतंमम ॥ अतस्तेभाविकल्याणंसपत्नीकस्यसांप्रतम् ॥ १० ॥ विनाव्रतैर्विनातीर्थैर्विनादानैरयत्नतः ॥ दारिद्र्यंतेलयंयातितथानिर्धारितंमया ॥ ११ ॥ अतःपरंतृतीयोऽस्तिमासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ भवद्भ्यांतत्रवि-धिनादंपतीभ्यांप्रयत्नतः ॥ १२ ॥ कर्तव्यंदीपदानंचपुरुषोत्तमतुष्टये ॥ तेनतेतीव्रदारिद्र्यंसमूलंनाशमे-ष्यति ॥ १३ ॥ तिलतैलेनकर्तव्यःसर्पिषावैभवेसति ॥ तयोर्मध्येनकिंचित्तेकाननेवसतोऽधुना ॥ १४ ॥ इंगुदाजेनतैलेनदीपःकार्यस्त्वयानघ ॥ यावन्मासंसनियमंमणिग्रीवस्त्रियासह ॥ १५ ॥ अस्मिन्सरोवरे-स्नात्वासहपत्न्यानिरंतरम् ॥ एवमेवहिकर्तव्यंमासमात्रंत्वयावने ॥ १६ ॥ अयमेवोपदेशस्तुसपत्नाकायमे

बड़ी भारी निर्धनता समूल नष्ठ हो जायगी ॥ १३ ॥ वह दीपक तिल के तैल से भरकर अथवा पास में धन हो तो घृत से भरकर दान करे। इस समय तेरे पास न घृत है न तैल क्यों कि तू वन में रह रहा है ॥ १४ ॥ हे मणिग्रीव अब तो तू पत्नी के साथ इंगुदी के तेल का दीपक जला दिया कर हे अनघ ! उस महीने में तू यही नियम धारण कर लेना ॥ १५ ॥ इस सरोवर में नित्य प्रति पत्नी के साथ स्नान करके महीना भर वनमें दीपक जलाकर दान करते रहना ॥ १६ ॥ पत्नी के

साथ तुम को मैंने यह उपदेश दिया है। तुम्हारे आतिथ्य सत्कार से प्रसन्न होकर मैंने यही विचार किया है ॥ १७ ॥ इस प्रकार की सामान्य विधि से भी किया हुआ दीपदान लक्ष्मी प्राप्ति कराता है यदि विधि पूर्वक पुरुषोत्तम मास में दीपदान होता रहे तो उसका कहना ही क्या ॥ १८ ॥ वेदों में तो कई प्रकार के कर्म एवं दान कहे हैं किन्तु वे सब पुरुषोत्तम में दीपक दान

कृतः ॥ त्वदातिथ्यप्रसन्नेनमयानिगमनिश्चितम् ॥ १७ ॥ अन्यथादीपदानंहिरमावृद्धिकरंनृणाम् ॥ विधिनाक्रियमाणंचेत्किंपुनःपुरुषोत्तमे ॥ १८ ॥ वेदोक्तानिचकर्माणिदानानिविविधानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ १९ ॥ तीर्थानिसकलान्येवशास्त्राणिसकलानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २० ॥ योगोज्ञानंतथासांख्यंतंत्राणिसकलान्यपि ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ॥ २१ ॥ कृच्छ्रचांद्रयणादीनिव्रतानिनिखिलानिच ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २२ ॥ वेदाभ्यासोगयाश्राद्धंगोमतीतटसेवनम् ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २३ ॥ उपरागसहस्रा-

की सोलवीं कला की समता भी नहीं पा सकते ॥ १९ ॥ सब तीर्थ एवं सब शास्त्र भी पुरुषोत्तम में दीपक दान की सोलवीं कला की समता नहीं पा सकते ॥२०॥ कृच्छ्र चान्द्रायण आदि समस्त व्रत भी सोलवीं कलाकी समता नहीं पा सकते ॥ २१ ॥ योग, ज्ञान, सांख्य, तन्त्र आदि सब शास्त्र भी पुरुषोत्तम के दीपक की सोलवीं कला नहीं प्राप्त कर सकते ॥ २२ ॥ वेदों का स्वाध्याय, गया का श्राद्ध गोमती नदी के तट का सेवन आदि पुरुषोत्तम में दीपक की सोलवी कला जितने भी नहीं ॥ २३ ॥

सहस्र संख्या के ग्रहण सैकड़ों व्यीपात आदि भी इस दीपदान की सोलवी कला जितने नहीं ॥ २४ ॥ पुरुषोत्तम मास के दीप दान की सोलवी कला की समता नहीं रख सकते ॥ २५ ॥ यह दीप दान साधारण नहीं, धन धान्य पशु पुत्र पौत्रादि वृद्धि तथा यश वृद्धि करता है। यह अत्यन्त गुह्य है जिस किसी को भी कहना उचित नहीं ॥ २६ ॥ इसमे वन्ध्या स्त्री का

णिव्यतीपातशतानिच ॥ पुरुषोत्तममासस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २४ ॥ कुर्वादिक्षेत्रतीर्थाणिदंडकादिवनानिच ॥ पुरुषोत्तममासस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ २५ ॥ एतद्गुह्यतमंवत्सनाख्येयंस्यकस्यचित् ॥ धनधान्यपशुव्रातपुत्रपौत्रयशस्करम् ॥ २६ ॥ वंध्यावंध्यत्वशमनमवैधव्यकरंस्त्रियाः ॥ राज्यदंराज्यभ्रष्टस्यचिंतितार्थकरंनृणाम् ॥ २७ ॥ कन्याविंदेतभर्त्तारंगुणिनंचिरजीविनम् ॥ कांतार्थीलभतेकांतांसुशीलांचपतिव्रताम् ॥ २८ ॥ विद्यार्थीलभतेविद्यांसुसिद्धिंसिद्धिकामुकः ॥ कोशकामोलभेत्कोशंमोक्षार्थीमोक्षमाप्नुयात् ॥ २९ ॥ विनाविधिविनाशास्त्रंयःकुर्यात्पुरुषोत्तमे ॥ दीपंतुयत्रकुत्रापिकामितंसर्वमाप्नुयात् ॥ ३० ॥ किंपु

वन्ध्यापन दूर होता है, स्त्रियां विधवा नहीं होती, राज्यभ्रष्ठ राजा को राज्य मिलता है, मनुष्यों की मनः कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं ॥ २७ ॥ कन्या को गुणवान् चिरंजीवी पति मिलता है, स्त्री अभिलाषी सुशील पतिव्रता पत्नी पाता है ॥ २८ ॥ विद्यार्थी विद्या पाता है सिद्धि चाहने वाले को सिद्धि प्राप्त होती है। खजाना चाहने वाले को खजाना मिल जाता है मोक्षार्थी को मोक्ष मिलती है ॥२९॥ इस पुरुषोत्तम के दीपका कही भी विधि तथा शास्त्र के बिना भी दान करने वाला पुरुष अपनी कामना

प्राप्त करता है ।। ३० ।। हे वत्स ! यदि विधि पूर्वक दीपक दान किया जाय तो उसे कितना ही फल मिलेगा । इसी कारण श्री पुरुषोत्तम मास में दीपक अवश्य दान करना ।। ३१ ।। यह मैंने तुम्हें तीव्र निर्धनता के नाश करने का उपाय कह दिया है, पुत्र तुम्हारा कल्याण हो मैं तुम्हारी सेवा से सन्तुष्ठ होकर अब जा रहा हूं ।। ३२ ।। अगस्त्य जी बोले–यह कह कर वे श्रेष्ठ

नविधिनावत्सदीपंकुर्यात्प्रयत्नतः ।। तस्माद्दीपःप्रकर्त्तव्योमासेश्रीपुरुषोत्तमे ।। ३१ ।। एतदुक्तंमयातेद्यतीव्र-दारिद्र्यनाशनम् ।। स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिसंतुष्टःसेवयातव ।। ३२ ।। अगस्त्यउवाच ।। इत्युक्त्वाविप्रवर्यो सौप्रयागंसंजगामह ।। द्विभुजंमुरलीहस्तंमनसाश्रीहरिंस्मरन् ।। ३३ ।। अनुगत्वोग्रदेवंतंकियन्मासंनिजा-श्रमात् ।। पुनरावव्रतुर्नत्वादंपतीहृष्टमानसौ ।। ३४ ।। आसाद्यस्वाश्रमंभक्त्यापुरुषोत्तममानसौ ।। निन्यतु-र्मासयुगलंद्विजभक्तिपरायणौ ।। ३५ ।। गतेमासद्वयेश्रीमानागतःपुरुषोत्तमः ।। तौतस्मिंश्चक्रतुर्दीपंगुरुभक्ति

ब्राह्मण दो भुजा वाले मुरली मनोहर श्रीकृष्ण का स्मरण करते हुए प्रयागराज चल पड़े ।। ३३ ।। वे दोनों स्त्री पुरुष भी श्रीउग्र-देव को आगे पहुंचाने के लिये चल पड़े इसी प्रकार चलते २ कुछ दिनों के बाद उन्हें प्रणाम करके आज्ञा लेकर प्रसन्न होते हुए आश्रम पर लौट आये ।। ३४ ।। अपने आश्रम पर पहुंच कर पुरुषोत्तम भगवान् का स्मरण करते २ भक्ति परायण होकर उन्होंने दो महीने गुजारे ।। ३५ ।। श्रीपुरुषोत्तम मास के लगने पर सावधानता से इंगुदी तेल के द्वारा वैभव की इच्छा से

दीपक जलाकर दान करना आरम्भ किया इसी प्रकार पुरुषोत्तम मास उन्होंने व्यतीत किया ॥ ३६ ॥ श्रीउग्रदेव की कृपा से उनका अन्तः करण शुद्ध होगया परम पवित्र होकर समयानुसार उनकी मृत्यु हुई सीधे स्वर्ग में पहुंचे ॥ ३७ ॥ वहां स्वर्गीय भोग प्राप्त करके भारत भूमि में फिर उनका जन्म हुआ । यह सब उग्रदेवजीकी कृपा थी ॥३८॥ वीर बाहु राजाके पुत्र चित्र बाहु

परायणौ ॥ ३६ ॥ इंगुदीजेनतैलेनवैभवार्थमतंद्रितौ ॥ एवंतयोःकृतवतोर्जगामपुरुषोत्तमः ॥ ३७ ॥ उग्रदेवप्रसादेनविनिर्धूतमनोमलौ ॥ कालस्यवशमापन्नौपुरंदरपुरींगतौ ॥ ३८ ॥ तत्रत्यंभोगमासाद्यपृथिव्यांभारताजिरे ॥ उग्रदेवप्रसादेनवरंजनुरवापतुः ३६ ॥ वीरबाहुसुतस्त्वंचचित्रबाहुरितिश्रुतः ॥ पूर्वं मिन्योमणिग्रीवोमृगहिंसापरायणः ॥ ४० ॥ इयंचंद्रकलानाम्नीमहिषीयाधुनातव ॥ सुंदरीतिसमाख्यातापुनर्जनुषितेऽगना ॥ ४१ ॥ पातिव्रत्येनधर्मेणतवाद्यांगार्धहारिणी ॥ पतिव्रताहियानारीपतिपुण्यार्धभागिनी

नाम से विख्यात वही मणिग्रीव तुम ही हो, जो मणिग्रीव पूर्व जन्म में मृग हिंसा करने वाला था उसी का यह दूसरा जन्म है ॥ ३६ ॥ और जो उस जन्म को तुम्हारी सुन्दरी नाम की पत्नी थी वही आकर चन्द्रकला नाम से तुम्हारी पटरानी हुई है ॥ ४० ॥ अपने पतिव्रता धर्म से तुम्हारी अर्धांगिनी हुई है । जो स्त्री पतिव्रता होती है वही पति के पुण्यों का आधा भाग पाती है ॥ ४१ ॥ श्रीपुरुषोत्तम मास में इंगुदी तेल के दीपदान करने से ही तुम्हें निष्कण्टक राज्य प्राप्त हुआ है ॥ ४२ ॥ और

जो श्रीपुरुषोत्तम महीने में घृत का अथवा तिलके तैल का अखण्ड दीपदान करताहै उसका तो कहना ही क्या ॥ ४३ ॥ श्रीपुरुषोत्तम के दीपक दान का इतना फल है इस में संशय ही नहीं। और जो उपवास आदि करके श्रीपुरुषोत्तम का पूजन करते हैं उन्हें अनन्त फल मिलता है इसमें तो क्या कहा जाय ॥ ४४ ॥ श्री वाल्मीकिजी बोले–इस प्रकार श्रीअगस्त्यजी चित्र बाहु राजाके प्रति

॥ ४२ ॥ कृतेनदीपदानेनमासेश्रीपुरुत्तमे ॥ इंगुदीजेनतैलेनतवराज्यमकंटकम् ॥ ४३ ॥ किंपुनःसर्पिषादीपंतिलतैलेनवापुनः ॥ यःकरोतिह्यखंडंवैमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ४४ ॥ पुरुषोत्तमदीपस्यफलमेतन्नसंशयः ॥ किंपुनश्चोपवासाद्यैश्चरतःपुरुषोत्तमम् ॥ ४५ ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ चित्रबाहुचरितंपुरातनंसन्निरूप्यकलशोद्भवोमुनिः ॥ सत्कृतिंसमधिगम्यतत्कृतामक्षयाशिषमुदीर्यनिर्ययौ ॥ ४६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणे पुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेदृढधन्वोपाख्यानेदीपमाहात्म्यकथनंनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

दृढधन्वोवाच ॥ अथसम्यग्वदब्रह्मन्नुद्यापनविधिंमुने ॥ पुरुषोत्तममासीयव्रतिनांकृपयानृणाम् ॥ १ ॥

पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाकर राजा से सत्कार पाकर अक्षय आशीर्वाद देते हुए वहां से चले गये ॥ ४५ ॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायाँ चतुर्विंशोंध्यायः ॥ २४ ॥

दृढ़धन्वा बोला—हे मुने पुरुषोत्तम मास के व्रत करने वाले पुरुषों पर कृपा करते हुए हे ब्रह्मन्! अब इसके उद्यापन की विधि भी भलीभांति कहिये ॥ १ ॥ श्रीवाल्मीकि जी बोले—हे राजन्! इस व्रत की पूर्ति के लिये मैं इसके उद्यापन का विधान

संक्षेप से कहता हूं ॥ २ ॥ श्रीपुरुषोत्तम मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी, अथवा नवमी किंवा चतुर्दशी को उद्यापन करना चाहिये ॥ ३ ॥ उपरोक्त किसी पुण्य तिथि में प्रातः काल उठकर स्नानादि पूर्व कालिक क्रिया करके यथा प्राप्त सामग्री के द्वारा ॥ ४ ॥ उद्यापन करे उसमें मन को एकाग्र करके सदाचारी परम वैष्णव तीस विद्वान् ब्राह्मणों को पत्नीयों के सहित निमंत्रण

वाल्मीकिरुवाच ॥ समासतःप्रवक्ष्यामिमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ उद्यापनविधिंसम्यग्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ २ ॥ कृष्णपक्षेचतुर्दश्यांनवम्यांनवम्यांपुरुषोत्तमे ॥ अष्टम्यांवाथकर्तव्यमुद्यापनमुदीरितम् ॥ ३ ॥ यथालब्धोपहारेणमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ पुण्येस्मिन्प्रातरुत्थायकृत्वापौर्वाह्णिकीःक्रियाः ॥ ४ ॥ समाहितमनाभूत्वात्रिंशद्विप्रान्निमंत्रयेत् ॥ सपत्नीकान्सदाचारान्विष्णुभक्तिपरायणान् ॥ ५ ॥ यथाशक्त्याथवासप्तपंचवित्तानुसारतः ॥ ततोमध्यान्हसमयेद्रोणमानेनभूपते ॥ ६ ॥ तदर्धेनतदर्धेननिजशक्त्यानुसारतः ॥ पंचधान्येनकुर्वीतसर्वतोभद्रमुत्तमम् ॥ ७ ॥ चत्वारःकलशाः स्थाप्या हैमावाराजताःशुभाः ॥ ताम्रावामृन्मयाःशुद्धाअव्रणामंडलोपरि ॥ ८ ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्व्यूहप्रीतयेश्रीफलान्विता ॥ सद्वस्त्रवेष्टितानागवल्लीदलसमन्वि-

देवे ॥ ५ ॥ यदि इतनी शक्ति न हो तो सात किंवा पांच ब्राह्मणों को निमन्त्रण देवे । तब मध्यान्ह समय में एक द्रोण जितने ॥ ६ ॥ अथवा उससे आधे किंवा चौथाई जितनी भी शक्ति हो उतने पांच धान्य मिलाकर उनसे सर्व तो भद्र बनावे ॥ ७ ॥ उसके चारों ओर यथाशक्ति--सोने चांदी ताम्बे अथवा मिट्टी के व्रण रहित शुद्ध चार कलश मण्डलों पर स्थापति करें ॥८॥

चारों दिशाओं में भगवान् के चार व्यूहों की प्रीति के लिये उन कलशो पर श्रीफल रखे, उन्हें सुन्दर वस्त्रों से लपेट कर पान के पत्ते रखे ॥ ९ ॥ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, एवं अनिरुद्ध इन चार व्यूहों की चार स्वर्ण मूर्तियें उन चार कलशों पर धारण करे ॥ १० ॥ और जो श्रीराधिका जी के साथ श्रीपुरुषोत्तम भगवान् की स्वर्ण मूर्ति व्रत के आरम्भ में स्थापित की थी उसे कलश

ताः ॥ ९ ॥ वासुदेवंहलधरंप्रद्यम्नंदेवमुत्तमम् ॥ अनिरुद्धंचतुर्थ्वेवस्थापयेत्कलशेषुच ॥ १० ॥ पुरुषोत्तम-व्रतारंभेस्थापितंपुरुषोत्तमम् ॥ सराधंदेवदेवेशंकलशेनसमन्वितम् ॥ ११ ॥ ततश्चानीयतन्मध्येमंडलोपरि-विन्यसेत् ॥ आचार्यंवैष्णवंकृत्वावेदवेदांगपारगम् ॥ १२ ॥ विप्राश्चत्वारएवात्रवरणीयाजपार्थिना द्वे द्वे वस्त्रेचदातव्येहस्तमुद्रादिसंयुते ॥ १३ ॥ आचार्यंसमलंकृत्यवस्त्रभूषादिभिर्मुदा ॥ ततोदेहविशुद्ध्यर्थं-प्रातश्चित्तंसमाचरेत् ॥ १४ ॥ ततःपूर्वोक्तविधिनापूजाकार्यासहस्त्रिया ॥ चतुर्व्यूहजपःकार्योवृतैर्विप्रैश्चतु-

के साथ ॥ ११ ॥ लाकर सब के मध्य में मण्डल में स्थापति करे। उसमें सब वेद वेदांगों के ज्ञाता परम वैष्णव ब्राह्मण को आचार्य पूजन कराने वाला ही होना चाहिये ॥ १२ ॥ और जपन करने के लिये वहां चार अन्य ब्राह्मणों को आवरणी देवे। आवरणी में दो दो वस्त्र एवं स्वर्ण की मुद्रिकाएं होनी चाहिये ॥ १३ ॥ वस्त्र एवं आभूषणों द्वारा आचार्य को अलंकृत करे प्रसन्नता हृदय में हो। तब शरीर शुद्धि के लिये प्रायश्चित करे ॥ १४ ॥ तब सपत्नीक होकर पूर्वोक्त विधि से पूजन करे।

वे आवरणी पाकर चारों ब्राह्मण चार व्यूहों का जपन करने बैठे ॥ १५ ॥ चारों तरफ चार अखण्ड दीपक भी जला दें। फिर क्रमानुसार नारियलों से अर्घ्य दान करे ॥ १६ ॥ उसके अनन्तर अपने दोनों जानु पृथ्वी पर लगाकर अपने दोनों हाथों की अंजुलि में ऋतु के अनुसार प्राप्त सुन्दर फल तथा उनमें पंचरत्न मिलाकर धारण करे ॥ १७ ॥ सपत्नीक भक्ति श्रद्धा एवं

विधः ॥ १५ ॥ चतुर्दिक्षुप्रकर्तव्यादीपाश्चत्वारउद्धृताः ॥ अर्घ्यदानंततःकार्यंनारिकेलादिभिःक्रमात् ॥ १६॥ पंचरत्नसमायुक्तैर्जानुभ्यांसक्तभूतलः ॥ स्वपाणिपुटमध्यस्थैर्यथालब्धैःफलैःशुभैः ॥ १७ ॥ श्रद्धाभक्तिसमायुक्तःसपत्नीकोमुदान्वितः ॥ अर्घ्यंदद्यात्प्रहृष्टेनमनसाश्रीहरिस्मरन् ॥ १८ ॥ अर्घ्यमंत्र ॥ देवदेवनमस्तुभ्यंपुराणपुरुषोत्तम ॥ गृहाणार्घ्यंमयादत्तंराधयासहितोहरे ॥ १९ ॥ वंदेनवघनश्यामंद्विभुजंमुरलीधरम् ॥ पीतांबरधरंदेवंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥ २० ॥ एवंभक्त्याहरिंनत्वासराधंपुरुषोत्तमम् ॥ चतुर्थ्यंतैर्नाममंत्रैस्तिलहोमंचकारयेत् ॥ २१ ॥ ततस्तदंतेतन्मंत्रैःकार्यंतर्पणमार्जने ॥ नीराजयेत्ततोदेवंसराधंपुरुषोत्तमम्

प्रसन्नता से युक्त होकर श्रीहरि भगवान् को चिन्तन करते हुए अर्घ्य देवे ॥ १८ ॥ अर्घ्य मन्त्र —हे देव देव पुराण पुरुषोत्तम श्रीराधाजी के साथ हे हरे! मुझ से दिये गये अर्घ्य को स्वीकार करें ॥ १९ ॥ फिर प्रणाम करे—हे नव घनकी तरह श्याम दो भुजा वाले मुरली मनोहर पीताम्बर धारी श्रीराधिका वल्लभ पुरुषोत्तम आपको नमस्कार हो ॥ २० ॥ इसी प्रकार श्रीराधावल्लभ पुरुषोत्तम भगवान् को प्रणाम करके उनके नाम मंत्रों से चतुर्थी विभक्ति लगाकर तिलों द्वारा होम करावे ॥ २१ ॥ फिर उन्ही

मन्त्रों द्वारा अन्त में तर्पण एवं मार्जन करे तब श्रीराधावल्लभ पुरुषोत्तम भगवान् की आरती करे ॥ २२ ॥ नीराजन (आरती) का मन्त्र—हे नील कमल के दल की तरह शोभावाले देवेश ! करोड़ों कामदेव की भान्ति सुन्दर राधिका रमण मैं आपका प्रेम से नीराजन (आरती) करता हूं ॥ २३ ॥ फिर ध्यान करे—अन्तः करण में ज्योतिः स्वरूप, अनन्त रत्नों से जटित सिंहासन पर

॥ २२ ॥ अथनीराजनमंत्रः ॥ नीराजयामिदेवेशमिंदीवरदलच्छविम् ॥ राधिकारमणंप्रेम्णाकोटिकंदर्पसुँदरम् ॥ २३ ॥ अथध्यानम् ॥ अंतर्ज्योतिरनंतरत्नरचितेसिंहासनेसंस्थितंवंशीनादविमोहितव्रजवधूवृन्दावनेसुँदरम् ॥ ध्यायेद्राधिकयासकौस्तुभमणिप्रद्योतितोरस्थलंराजद्रत्नकिरीटकुंडलधरंप्रत्यग्रपीतांबरम् ॥ २४ ॥ ततःपुष्पांजलिंदत्वाराधिकासहितेहरौ ॥ नमस्कारंप्रकुर्वीतसाष्टांगंगृहिणीयुतः ॥ २५ ॥ नौमिनवघनश्यामंपीतवाससमच्युतम् ॥ श्रीवत्सभासितोरस्कंराधिकासहितंहरिम् ॥ २६ ॥ पूर्णपात्रंततो-

विराजमान, वृन्दावन में वंशीनाद करके व्रजरमणियों को मोहित करने वाले, सुन्दर कौस्तुभमणि से शोभायमान वक्षःस्थल वाले, किरीट मुकुट तथा कुण्डलधारी, चारों तरफ पीताम्बर लहराने वाले, श्रीराधाजी के साथ इस प्रकार के पुरुषोत्तम स्वरूप का ध्यान करे ॥ २४ ॥ फिर श्रीराधाजी के साथ श्रीहरि भगवान् को पुष्पांजलि अर्पण करके सपत्नीक साष्टांग नमस्कार करे ॥ २५ ॥ नमस्कार में कहे कि नव घन की तरह श्याम सुन्दर पीत वस्त्रधारी अच्युत श्रीवत्स चिन्ह से चिन्हित श्रीराधिकाजी के सहित श्रीहरि भगवान् आपकी मैं वन्दना करता हूं ॥ इस प्रकार दण्डवत्प्रणाम करके ब्रह्मरूप ब्राह्मण को स्वर्ण के साथ पूर्ण पात्र दे ।

आचार्य को बहुत सी दक्षिणा दे प्रसन्न हो कर यह कार्य करे॥२७ ॥ वस्त्र एवं आभूषणों द्वारा आचार्य को भक्ति पूर्वक सन्तुष्ठ करे। फिर ऋत्विजों को उत्तम दक्षिणा देवे ॥ २८ ॥ फिर एक गौदान करे, जो सुशील दूध देने वाली हो और सवत्सा हो वस्त्र, घण्टा आभरणों से भूषित हो ॥ २९ ॥ ताम्बे की उसकी पीठ हो, सोने के उसके सींग हों, खुर चान्दी से भूषित

दद्याद्ब्रह्मणेसहिरण्यकम् ॥ आचार्यायततोदद्याद्दक्षिणांविपुलांमुदा ॥ २७ ॥ आचार्यंतोषयेद्भक्त्यावस्त्रैराभरणैरपि ॥ सपत्नीकंततोदद्यादृत्विग्भ्योदक्षिणांपराम् ॥ २८ ॥ धेनुरेकाप्रदातव्यासुशीलाचपयस्विनी सचैलाचसवत्साचघंटाभरणभूषिता ॥ २९ ॥ ताम्रपृष्ठीहेमशृंगीसरोप्यखुरभूषिता ॥ घृतपात्रंततोदद्योतिलपात्रंतथैवच ॥ ३० ॥ उमामहेश्वरंदद्याद्दंपत्योःपरिधायकम् ॥ पदमष्टविधंदद्यादुपानद्युगलंतथा ॥ ॥ ३१ ॥ श्रीमद्भागतंदद्याद्वैष्णवायद्विजन्मने ॥ शक्तिश्चेन्नविलंबेतचलमायुर्विचारयन् ॥ ३२ ॥ श्रीमद्भागवतंसाक्षाद्भगवद्रूपमद्भुतम् ॥ योदद्याद्वैष्णवायैवपंडितायद्विजन्मने ॥ ३३ ॥ सकोटिकु-

हों। तब घृत पात्र तिलपात्र भी दान करे ॥३०॥ पार्वती महेश्वर की प्रसन्नता के लिये स्त्री पुरुष के परिधान के योग्य वस्त्र देवे। आठ प्रकार के पददेवे वैसे ही जूतों के जोड़े देवे॥३१॥श्रीमद्भागवत का ग्रन्थ वैष्णव ब्राह्मणको दानकर देवे, शक्ति हो तो देर न करे आयु तो चलायमान है ऐसा विचार करके ॥ ३२ ॥ श्रीमद्भागवत को साक्षात् भगवान् का अद्भुतरूप मान कर वैष्णव पण्डित

ब्राह्मण को जो पुरुष दान कर देता है ॥ ३३ ॥ वह अपने करोड़ कुलका उद्धार कर देता है और उसकी अप्सराएं आकर सेवा करती हैं वह पुरुष विमान पर चढ़कर योगीजन दुर्लभ गोलोक में जाता है ॥ ३४ ॥ हजार कन्यादान करना सौ अश्वमेध यज्ञ करना खेती के योग्य क्षेत्र दान करना, एवं तुलादान आदि ॥ ३५ ॥ जितने भी महादान तथा वेदों के दान हैं वे सब श्रीमद्भा-

लमुद्धृत्यह्यप्सरोगणसेवितः ॥ विमानमधिरुह्यैतिगोलोकंयोगीदुर्लभम् ॥ ३४ ॥ कन्यादानसहस्राणि वाजपेयशतानिच ॥ सधान्यक्षेत्रदानानितुलादानानियानिच ॥ ३५ ॥ महादानानियान्यष्टौछंदोदाना-नियानिच ॥ श्रीभागवतदानस्यकलांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ३६ ॥ तस्माद्यत्नेनतद्देयंवैष्णवायद्विजन्मने ॥ संभूष्यवस्त्रभूषाभिर्हैमसिंहासनस्थितम् ॥ ३७ ॥ कांस्यानिसंपुटान्येवत्रिंशद्देयानिसर्वथा ॥ त्रिंशत्रिंशद-पूपैश्चमध्येसंपूरितानिच ॥ ३८ ॥ प्रत्यपूपंतुयावंतिछिद्राणिपृथिवीपते ॥ तावद्वर्षसहस्राणिवैकुंठेवसतेनरः ॥ ३९ ॥ ततःप्रयातिगोलोकंनिर्गुणंयोगिदुर्लभम् ॥ यद्गत्वाननिवर्ततेज्योतिर्धामसनातनम् ॥ ४० ॥

गवत के दान की सोलवी कला जितने भी नहीं ॥ ३६ ॥ इसी कारण जहां तक भी हो सके प्रत्यन पूर्वक स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान करके वस्त्र आभूषणों से सजाकर श्रीमद्भागवत विद्वान् वैष्णव ब्राह्मण को दान कर देवे ॥ ३७ ॥ इस प्रकार करने से वह योगिजन दुर्लभ निर्गुण गोलोक में गमन करता है। वह ज्योतिः स्वरूप परम सनातन धाम है जहाँ जाकर पुनरावर्तन नहीं होता ॥ ४० ॥ निर्धन पुरुष को तो व्रत की पूर्ति के लिये यथा शक्ति ढाई सेर कांसी की परात अथवा थाली का दान कर्तव्य

है ॥ ४१ ॥ उसमें मालपुआ भरे हों। अथवा मालपुआ के योग्य कच्चा सामान तथा मौसमी फल हों उन्हें रखकर पुरुषोत्तम की प्रीति के लिये दान करे ॥ ४२ ॥ उसके अनन्तर निमन्त्रित ब्राह्मणों को स्त्रियों के सहित बुलवा कर श्रीपुरुषोत्तम सन्निधान भोजन सङ्कल्प करके उन्हें, सं कल्पित जल देवे ॥ ४३ ॥ भगवान् की प्रार्थना करे—हे श्रीकृष्ण जगत् के आधार जगत् के

सार्धप्रस्थद्वयंकांस्यसंपुटंपरिकीर्त्तितम् ॥ निर्धनेनयथाशक्त्याकार्याणिव्रतपूर्तये ॥ ४१ ॥ अथवापूपसामग्रीमपक्वांसफलांपराम् ॥ तत्राधायप्रदेयानिपुरुषोत्तमप्रीतये ॥ ४२ ॥ निमंत्रितानांविप्राणांसस्त्रीकाणांनराधिप ॥ संकल्पंचप्रकुर्वीतपुरुषोत्तमसन्निधौ ॥ ४३ ॥ अथप्रार्थना ॥ श्रीकृष्णजगदाधारजगदानंददायक ऐहिकामुष्मिकान्कामान्निखिलान्पूरयाशुमे ॥ ४४ ॥ इतिसंप्रार्थ्यगोविंदंभोजयेद्ब्राह्मणान्मुदा ॥ सपत्नीकान्सदाचारान्संस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ ४५ ॥ संपूज्यविधिवद्भक्त्याभोजयेद्घृतपायसैः ॥ विप्ररूपंहरिंस्मृत्वास्त्रीरूपांराधिकांस्मरन् ॥ ४६ ॥ भोजनस्यतुसंकल्पमाचरेद्विधिनाव्रती ॥ द्राक्षाभिःकदलीभिश्चचूतैश्चवि-

आनन्द देने वाले प्रभो ! मेरी इस लोक की तथा परलोक की समस्त कामनाओं को पूर्ण करो ॥ ४४ ॥ निमंत्रित ब्राह्मणों के चरण धोकर विधि पूर्वक भक्ति से उनको हरिरूप समझ कर ऐसा चिन्तन करता हुआ घृत खीर का भोजन करावे ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ विधि पूर्वक व्रती पुरुष भोजन के सं कल्प से द्राक्ष केला फल आम एवं अनेकों प्रकार के फलों से ॥ ४७ ॥ घृत पक्व मालपुए,

तथा पकवान, और सुन्दर उड़द के बड़े घृत खाण्ड से भरपूर घेवर एवं खाण्ड के मण्डे ॥ ४८ ॥ खबूजे, ककड़ी के शाक, अदरक तथा नीबू के रस से स्वादिष्ठ और नाना शाक इसी प्रकार पके हुए भिन्न २ आम ॥ ४९ ॥ छः प्रकार के रस से संयुक्त चार प्रकार के भोजन जिसमें गो घृत की सुगन्धि महक रही हो, उन्हें कोमल वाणी से ब्राह्मणों को परोसे ॥५०॥

विधैरपि ॥ ४७ ॥ घृतपाचितपक्वान्नैःशुभैश्चमाषकैर्वटैः ॥ शर्कराघृतपूरैश्चफरणितैःखंडमंडकैः ॥ ४८ ॥ ऊर्वारुकर्कटीशाकैरार्द्रकैश्चसुनिंबुकैः ॥ अन्यैश्चविविधैःशाकैराम्रैःपक्वैःपृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥ चतुर्धाभोजनैरेवषड्रसैःसहसंगतैः ॥ वासितान्गोरसांस्तत्रपरिवेष्यमृदुब्रुवन् ॥ ५० ॥ इदंस्वादुमुदाभोज्यंभवदर्थंप्रकल्पितम् ॥ याच्यतांरोचतेब्रह्मन्यन्मयापाचितंप्रभो ॥ ५१ ॥ धन्योस्म्यनुगृहीतोस्मिजातंमेजन्मसार्थकम् ॥ भोजयित्वामुदाविप्रान्देयास्तांबूलदक्षिणाः ॥ ५२ ॥ एलालवंगकर्पूरनागवल्लीदलानिच ॥ कस्तूरीमुरमांसीचचूर्णंचखदिरंशुभम् ॥ ५३ ॥ एतैश्चमीलितैर्देयंतांबूलंभगवत्प्रियम् ॥ तस्मादेवंविधायैवदेयंतांबूल

साथ में कहता जाय लीजिये ब्रह्मन् ! यह बड़ा स्वादिष्ठ है आपके लिये ही यह तैयार हुआ है। जो भी पदार्थ आपको चाहिये वह पका हुआ मुझ से माँग लें ॥ ५१ ॥ हे देवताओ ! मैं आज धन्य हूं, मुझ पर आप लोगों ने बड़ा अनुग्रह किया है मेरा जन्म भी सफल है इस प्रकार बड़ी प्रसन्नता से भोजन कराकर ताम्बूल तथा दक्षिणा देवे ॥ ५२ ॥ ताम्बूल में पान के शुद्ध पत्रों पर कस्तूरी कत्था चूना जावित्री आदि चुपड़ कर इलायची, लवंग, सुपारियों के चूर्ण रखकर ॥ ५३ ॥ पान को लपेट कर ऐसा

ताम्बूल अर्पण करे, यह भगवत्प्रिय है अतः परम आदर से देवे ॥ ५४ ॥ जो ब्राह्मणों को इसी प्रकार से ताम्बूल देता है वह इस लोक में परम सुख तथा परलोक में अमृत पान करता है ॥ ५५ ॥ सपत्नीक उन ब्राह्मणों को सन्तुष्ठ करके उनके हाथों में मोदक देवे । और उनकी पत्नियों को विधि पूर्वक अलंकृत करके उन्हें बाँस की छाव प्रदान करे ॥ ५६ ॥ फिर घर की सीमा तक

मादरात् ॥ ५४ ॥ तांबूलंयोद्विजाग्र्यायएवंकृत्वाप्रयच्छति ॥ सुभगश्चभवेदत्रपरत्रामृतभुग्भवेत् ॥ ५५ ॥ परितोष्यसपत्नीकान्हस्तेदद्याच्चमोदकान् ॥ पत्नीभ्योवैणवीर्दद्यादलंकृत्यविधानतः ॥ ५६ ॥ आसीमाँतमनुव्रज्यब्राह्मणाँस्तान्विसर्जयेत् ॥ मंत्रहीनेतिमंत्रेणक्षमाप्यपुरुषोत्तमम् ॥ ५७ ॥ यस्यस्मृत्येतिमंत्रेणनमस्कृत्यजनार्दनम् ॥ यद्नूनंतत्तु संपूर्णंविधायविचरेत्सुखम् ॥ ५८ ॥ अन्नंविभज्यभूतेभ्योयथाभागमकुत्सयन् ॥ भुँजीतस्वजनैःसार्धंमिथ्यावादविवर्जितः ॥ ५९ ॥ दर्शस्यदिवसेप्राप्तेकुर्याज्जागरणंनिशि ॥ राधिकास-

उन्हें पहुंचाने जावे "मन्त्रहीनं क्रिया हीनं" ऐसा मन्त्र पढ़कर पुरुषोत्तम से क्षमा माँगकर ब्राह्मणों का विसर्जन करे ॥ ५७ ॥ "यस्य स्मृत्या" इस मन्त्र द्वारा भगवान् को नमस्कार करके न्यूनता की पूर्ति करके फिर सुख पूर्वक विचरण करे ॥ ५८ ॥ अन्य प्राणियों को यथा भाग अन्न बांटे किसी को फटकारे नहीं उसके अनन्तर निन्दास्तुति से रहित होकर अपने बान्धवों के साथ भोजन करे ॥ ५९ ॥ अमावस्या के दिन आने पर रात्रि को जागरण करे और उस रात्रि में श्रीराधा पुरुषोत्तम की स्वर्ण

मूर्ति की पूजा करे ॥ ६० ॥ पूजाकर लेने के अनन्तर सपत्नी पूर्वक व्रती श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तम देवका विसर्जन करे ॥ ६१॥ फिर आचार्य के प्रति मूर्तिके साथ वह सब सामग्री भेंट करदे । अन्न दानादि इच्छानुसार यथोचित करे ॥ ६२ ॥ जिस किसी उपाय से परमभक्ति से वित्तानुसार दान करके इस व्रत को समाप्त करे ॥ ६३ ॥ स्त्री हो अथवा पुरुष कोई भी इस व्रत को कर

हितहैमंपूजयेत्पुरुषोत्तमम् ॥ ६० ॥ पूजाँतेचनमस्कृत्यसपत्नीकोमुदान्वितः ॥ व्रतविसर्जयेद्देवंसराधंपुरुषोत्तमम् ॥ ६१ ॥ आचार्यायततोदद्यादुपहारंसमूर्तिकम् ॥ अन्नदानंयथायोग्यंदद्यादिच्छानुसारतः ॥ ॥ ६२ ॥ येनकेनाप्युपायेनव्रतमेतत्समाचरेत् ॥ कुर्याच्चपरयाभक्त्यादानंवित्तानुसारतः ॥ ६३ ॥ नारीवाथनरोवापिव्रतमेतत्समाचरेत् ॥ दुःखदारिद्र्यदौर्भाग्यंनाप्नुयाज्जन्मजन्मनि ॥ ६४ ॥ येकुर्वंतिजनालोकेनानापूर्णमनोरथाः ॥ विमानान्यधिरुह्यैवयांतिवैकुंठमुत्तमम् ॥ ६५ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्थंयोविधिमवलंब्यचर्करीतिश्रीकृष्णप्रियतममासमादरेण ॥ गोलोकंव्रजतिविधूयपापराशिंतत्रात्यंसुखम-

सकता है । दुःख दरिद्रता दुर्भाग्य उसे किसी जन्म में भी नहीं मिलते ॥ ६४ ॥ लोक में अनेकों मनोरथ करने वाले पुरुष इसी व्रत के द्वारा पूर्ण मनोरथ होकर विमानों में चढ़कर वे सर्वोत्तम वैकुण्ठ लोक में जाते हैं ॥ ६५ ॥ इस प्रकार की विधि से जो भी पुरुष श्री कृष्ण भगवान् के परम प्रिय पुरुषोत्तम मास का आश्रय कर लेता है उसके समस्त पाप नाश हो जावे हैं और इस

लोक में सुख भोगकर वह गोलोक में जाता है ॥ ६६ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां पंचविंशोऽध्याय ॥ २५ ॥

अब उद्यापन कर लेने के अनन्तर व्रत के नियम छोड़ने के विषय में कहते हैं वाल्मीकि जी बोले—सब पापों के नाश के लिये एवं भगवान् श्री गरुड़ध्वजा की प्रीति के लिये जो भी व्रत करने में नियम ग्रहण किये गये थे, अब उनके त्याग करने की विधि कहते हैं ॥ १ ॥ हे राजन्! अयाचित व्रत में रात्रि काल में भोजन के नियम वाला

नुभूयपूर्वपुंभिः ॥ ६६ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेदृढधन्वनोपाख्यानेव्रतोद्यापनविधिकथनंनामपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अथोद्यापनानंतरंव्रतनियममोक्षणमुच्यते ॥ वाल्मीकिरुवाच ॥ अशेषपापनाशार्थंप्रीतयेगरुड़ध्वजे ॥ गृहीतनियमत्यागश्चोच्यतेविधिपूर्वकः ॥ १ ॥ नक्तभोजीनरोराजन्ब्राह्मणान्भोजयेदथ ॥ अयाचितेव्रते-चैवस्वर्णदानंसमाचरेत् ॥ २ ॥ अमावास्याशनोयस्तुप्रदद्याद्गांसदक्षिणाम् ॥ धात्रीस्नानंनरोयस्तुदधिवा-क्षीरमेवच ॥ ३ ॥ फलानांनियमेराजन्फलदानंसमाचरेत् ॥ तैलस्थानेघृतंदेयंघृतस्थानेपयस्तथा ॥ ४ ॥

प्रथम ब्राह्मण जिमावे फिर स्वर्ण दान करे ॥ २ ॥ अमावस्या में भोजन करने वाला पुरुष दक्षिणा के साथ गौदान करे, आँवलों से स्नान करने वाला पुरुष दधि दान करे ॥ ३ ॥ फलों के नियम करने वाला फल दान करे। तेल के स्थान घृत दान करे घृत के स्थान दुग्ध देवे ॥ ४ ॥ धान्य के नियम में गेहूं तथा सुन्दर चावल दान करे। पृथ्वी पर सोने के नियम में राजन्!

सब सामान के साथ ॥ ५ ॥ सुखदायक रजाई शय्या बिस्तर आदि दान करे। और भगवत्प्रिय भक्त पत्रों पर भोजन करने के नियम में हो तो उसे घी खाण्ड तथा भोजन देना चाहिये ॥ ६ ॥ जो मौनी रहा हो तो वह स्वर्ण के साथ घण्टा तथा तिल दान के साथ ब्राह्मण स्त्री पुरुष को स्निग्ध शोभन भोजन भी जिमावे ॥७॥ नख तथा केश रखने वाला बुद्धिमान दर्पणदान

धान्यानांनियमेराजन्गोधूमाञ्छालितंडुलान् ॥ भूमौचशयनेराजन्सतूलीसपरिच्छदाम् ॥ ५ ॥ सुखदां-चात्मानोन्यस्यह्यं तथापीप्रियोजनः ॥ पत्रभोजीनरोयस्तुभोजनंघृतशर्करम् ॥६॥ मौनेघंटांतिलांश्चैवसहि-रण्यान्प्रदापयेत् ॥ दंपत्योर्भोजनंचैवसस्नेहंचसुशोभनम् ॥ ७ ॥ नखकेशधरोराजन्नादर्शंदापयेद्बुधः ॥ उपानहौप्रदातव्येउपानहविहर्जनात् ॥ ८ ॥ लवणस्यपरित्यागेदातव्याविविधारसाः ॥ दीपदानेनरोदद्या-त्पात्रयुक्तं चदीपकम् ॥ ९ ॥ अधिमासेनरोभक्त्यासवैकुंठेवसेत्सदा ॥ दीपंचसघृतंताम्रं कांचनीवर्तिसंयुतम् ॥ ॥ १० ॥ फलमात्रंप्रदेयंस्याद्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ एकांतरोपवासेनकुंभानष्टौप्रदापयेत् ॥ ११ ॥ सवस्त्रान्कां

करे जूता छोड़ने वाला पुरुष जूतों का जोड़ा दान करे ॥ ८ ॥ नमक छोड़ने से विविध प्रकार के रस दान करे। दीपकदान करने वाला पात्र सहित दीपक दान करे॥ ९ ॥ अधिक मास में दीपक का भक्ति से दान महान् पुण्य है वह वैकुण्ठ में सदा निवास करता है। नियम छोड़ने के समय ताम्बे का घी से भरा दीपक हो उसमें सोने की बत्ती हो, वह देवे॥ १० ॥ व्रत पूर्ति के लिये पल प्रमाण सोना हो। एकान्त के निवास के नियम में आठ कुम्भ दान करे॥ ११ ॥ वे आठों कुम्भ सोने के अथवा

मिट्टी के हों उन पर स्वर्ण एवं वस्त्र रखा हो। पुरुषोत्तम मास के अन्त में तीस मोदक, छाता एवं जूता यह भी साथ देवे ॥१२॥ यदि उपरोक्त वस्तुओं के जुटाने की शक्ति नहीं हो तो यथोक्त न करके एक बैल ऐसा दे देवे जो भार उठाने के योग्य हो ॥ १३ ॥ हे राजन्! सम्पूर्ण व्रत की सिद्धि देने वाला ब्राह्मण का वह वचन स्मरण करना जो कि एक ही अन्न से मल मास की सेवा

चनोपेतान्मृन्मयानथकाँचनान् ॥ मासाँतेमोदकांस्त्रिंशच्छत्रोपानहसंयुतान् ॥ १२ ॥ अनडुवांश्चप्रदातव्यो-धौरयेस्तुधुरिक्षमः ॥ सर्वेषामप्यलाभेचयथोक्तकरणंविना ॥ १३ ॥ द्विजवाक्यंस्मृतंराजन्सलपूर्णव्रतसिद्धि-दम् ॥ एकान्नेननरोयस्तुमलमासंनिषेवते ॥ १४ ॥ चतुर्भुजोनरोभूत्वासयातिपरमाँगतिम् ॥ एकान्ना-न्नापरंकिंचित्पवित्रमिहविद्यते ॥ १५ ॥ एकान्नान्मुनयःसिद्धाःपरंनिर्वाणमागता ॥ अधिमासेनरोनक्तं-योभुँक्तेसनराधिपः ॥ १६ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोतिनरोनैवात्रसंशयः ॥ पूर्वाण्हेभुंजतेदेवामध्यान्हेमुनय-स्तथा ॥ १७ ॥ अपराण्हेपितृगणाःस्वात्मार्थस्तुचतुर्थकः ॥ सर्ववेलामतिक्रम्ययस्तुभुंक्तेनराधिप ॥१८॥

करता है ॥ १४ ॥ वह मनुष्य चतुर्भुज होकर परम गति पाता है। एक अन्न से बढ़कर और कुछ भी पवित्र नहीं ॥ १५ ॥ एक अन्न से ही मुनि एवं सिद्ध लोग परमपद मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। अधिक मास में जो मनुष्य रात्रि में भोजन करता है वह राजा होता है ॥ १६ ॥ वह मनुष्य इसमें कोई संशय नहीं सब कामनाओं को पाता है। दिन के प्रथम प्रहर में देवता भोजन करते हैं, मध्यान्ह में मुनिजन भोजन करते हैं ॥ १७ ॥ अपराह्न में पितर गण भोजन करते हैं,

चतुर्थ प्रहर में अपनी आत्मा के लिये भोजन होता है ! और जो पुरुष सब समय गुजार कर भोजन करता है ॥ १८ ॥ हे राजन् ! उसके ब्रह्म हत्यादि सब पाप नाश होजाते हैं इसी लिये राजन् ! रात्रि में भोजनकर्ता को सब से अधिक पुण्य होता है ॥ १९ ॥ एवं वही मनुष्य दिन दिन में किये गये अश्वमेध यज्ञ का फल पाता रहता है। हरिप्रिय अधिक मास में उड़द खाना

ब्रह्महत्यादिपापानिनाशंयाँतिजनाधिप ॥ नक्तभोजीमहीपालसर्वपुण्याधिकोभवेत् ॥ १९ ॥ दिनेदिनेश्व-मेधस्यफलंप्राप्नोतिमानवः ॥ तस्मिन्विवर्जयेन्मापमधिमासेहरिप्रिये ॥ २० ॥ सर्वस्मान्मुच्यतेपापाद्विष्णु-लोकंसगच्छति ॥ तिलयंत्राणिपापात्माकुरुतेब्राह्मणोपिसन् ॥ २१ ॥ तिलानाँसंख्ययाराजन्सवैतिष्ठति-रौरवे ॥ चांडालयोनिमाप्नोतिकुष्ठरोगेणपीड्यते ॥ २२ ॥ शुक्लेकृष्णेनरोभक्त्याद्वादशीसमुपोषयेत् ॥ आरुह्यगरुडंयातिनरोभूत्वाचतुर्भुजः ॥ २३ ॥ सदेवैःपूज्यमानोपिह्यप्सरोगणसेवितः ॥ दशमीद्वादशीचैव

छोड़दे ॥ २० ॥ वह पुरुष सब पापों से मुक्त होकर विष्णु लोक में जाता है। और जो ब्राह्मण होकर तिलयन्त्र चलाता है वह पापात्मा है ॥ २१ ॥ हे राजन् ! जितनी तिलों की संख्या हो उतने वर्ष वह रौरव नरक में पड़ा रहता है। वहाँ से निकल कर चाण्डाल योनि पाता है, और कुष्ट रोग से दुःखी रहता है ॥ २२ ॥ अधिक मास की शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष की एकादशी द्वादशी का उपवास करने वाला पुरुष चतुर्भुज होकर गरुड़ पर चढ़ कर विष्णु लोक में जाता है ॥ २३ ॥ वहाँ देवता तथा

अप्सराएं उसकी सेवा पूजा करते हैं। हे राजन् दशमी तथा द्वादशी के दिन एक समय भोजन करे ॥ २४ ॥ देवाधि देव भगवान् की प्रसन्नता के लिये इसी प्रकार भक्ति से व्रत धारने वाला स्वर्ग को जाता है, हे राजन् कुशा के आसन को त्याग न करे ॥२५॥ कुशा परम पवित्र वस्तु है, इससे मल मूत्र कफ रुधिर आदि कभी न पोंछे, नहीं तो वह पुरुष विष्ठा का कीट होता है ॥ २६ ॥

एकभुक्तं चकारयेत् ॥ २४ ॥ प्रीतयेदेवदेवस्यनरःस्वर्गमवाप्नुयात् ॥ भक्त्याचसर्वदाराजन्दर्भकूर्चंनवर्जयेत् ॥ २५ ॥ दर्भेणमार्जयेद्यस्तुपुराषंमूत्रमेवच ॥ श्लेष्माणंरुधिरंवापिविष्ठायांजायतेकृमिः ॥ २६ ॥ पवित्राः परमादर्भादर्भहीनावृथा क्रियाः ॥ दर्भमूलेवसेद्ब्रह्मामध्येदेवोजनार्दनः ॥ २७ ॥ दर्भाग्रेतुह्युमानाथस्तस्माद्दर्भेणमार्जयेत् ॥ नदर्भानुद्धरेच्छूद्रोनपिबेत्कपिलापयः ॥ २८ ॥ मध्यपत्रेनभुंजीतब्रह्मपत्रस्यभूपते ॥ नोच्चरेत्प्रणवंमंत्रंपुरोडाशंनभक्षयेत् ॥ २९ ॥ नासनंनोपवीतंचनाचरेद्वैदिकींक्रियाम् ॥ निर्विंध्याचरणंकुर्वन्नपि·

पवित्र कुशाओं के बिना सब धार्मिक क्रियाएं व्यर्थ हैं। कुशा के मूल में ब्रह्मा का तथा मध्य में जनार्दन का निवास है ॥ २७ ॥ अग्रभाग में शंकर वसते हैं इसी कारण धर्म क्रिया में कुशा द्वारा मार्जन करे। शूद्र को तो कुशाओं का उखाड़ना तथा कपिला गाय का दूध पीना वर्जित है ॥ २८ ॥ हे राजन्! शूद्र पुरुष तो ढाक की पत्तल पर न खावे, ओंकार मन्त्र का जपन न करें एवं यज्ञशेष भी न खावे ॥ २९ ॥ आसन पर न बैठे, यज्ञोपवीत न धारे, न वैदिक क्रिया करे, यह शूद्रों के लिये विधि है,

इससे विरुद्ध चलने वाला शूद्र पितरों के साथ डूबता है ॥ ३० ॥ फिर चौदह इन्द्रों की आयु भर घोर नरक में पड़ा रहता है, वहां से निकल कर मुर्गे अथवा शूकर किंवा वानर योनि पाता है ॥ ३१ ॥ इसी कारण भूपाल ! शूद्र को ओंकार मन्त्र को नहीं जपना चाहिये । ब्राह्मणों को नमस्कार भी न करे, नहीं तो वह नष्ट होजाता है ॥ ३२ ॥ इस सब बातों को समझ सोचकर

तृभिःसहमज्जति ॥ ३० ॥ पतंतिनरकेघोरेयावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ पश्चाच्चकौक्कुटींयोनिंसूकरींवानरींचवा ॥ ३१ ॥ एतस्मात्कारणाच्छूद्रःप्रणवंवर्जयेत्सदा ॥ नमस्कारेणविप्राणांशूद्रोनश्यतिभूमिप ॥ ३२ ॥ एतत्कृत्वामहाराजपरिपूर्णंव्रतंचरेत् ॥ अदत्त्वादक्षिणाँवापिनरकंयांतितेनराः ॥ ३३ ॥ व्रतवैकल्यमासाद्यह्यं·धःकुष्ठीप्रजायते ॥ ३४ ॥ धरामराणांवचनैर्नरोत्तमादिवौकसांवैपदमाप्नुवंति ॥ नोल्लंघयेद्भूपवचांसिते-षांश्रेयोभिकामीमनुजःसविद्वान् ॥ ३५ ॥ इदंमयाधर्मरहस्यमुत्तमंश्रेयस्करंपापविमर्दनंच ॥ फलप्रदंमाधव

हे महाराज विधि से व्रत पूर्ण करे उनमें ब्राह्मण को दक्षिणा भी अवश्य दे, नहीं तो नरक में जाता है ॥ ३३ ॥ यदि व्रत भंग होगया तो वह मनुष्य अन्धा और कोढ़ रोगी उत्पन्न होता है ॥ ३४ ॥ हे राजन् ब्राह्मणों की आज्ञाओं पालने वाले श्रेष्ठ पुरुष स्वर्ग में जाते हैं । अपने कल्याण को चाहने वाले विद्वान् पुरुष कभी भी ब्राह्मणों की आज्ञा का उल्लंघन न करें ॥ ३५ ॥ यह मैंने राजन् धर्म का अत्युत्तम रहस्य सुनाया है, यह कल्याण कारी, पाप नाशक, फलप्रद, मन को प्रसन्नता देने वाला है,

अतः इसका तो नित्य ही पाठ करे ॥ ३६ ॥ इस उत्तम रहस्य को जो पुरुष सुनता एवं पढ़ता है वह पुरुष जहां योगीश्वर श्रीविष्णु रहते हैं उस लोक में जाता है ॥ ३७ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

श्रीनारायण बोले—इस प्रकार जब श्रीवाल्मीकि जीने कहा, तब सपत्नीक राजा दृढ़धन्वाने उनको प्रणाम किया, और

तुष्टिहेतोःपठेच्चनित्यंमनसोभिरामम् ॥ ३६ ॥ यःशृणोतिनरोराजन्पठतेवापिसर्वदा ॥ सयातिपरमंलोकं-यत्रयोगीश्वरोहरिः ॥ ३७ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेगृहीत-नियमत्यागोनामषड्विंशोऽध्याय ॥ २६ ॥

श्रीनारायणउवाच ॥ इत्युक्त्वाविरतंराजामुनीश्वरमनीनमत् ॥ अपूजयत्ततोभक्त्यासपत्नीकोमुदा-न्वितः ॥ १ ॥ उररीकृत्यतत्पूजामाशीर्वादमुदीरयत् ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिसरयूं पापनाशिनीम् ॥ २ ॥ आवयोर्वदतोरेवंसायंकालोऽधुनाभवत् ॥ इत्युक्त्वाशुजगामैववाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥ ३ ॥ आसीमांतमनु-

प्रसन्नता से उनकी पूजा की ॥ १ ॥ राजा रानी की की हुई पूजा अंगीकार करके उन्हें आशीर्वाद दी। फिर कहा हे राजन्! तुम्हारा कल्याण हो। अब हम पाप नाशिनी सरयूपर जाते हैं ॥ २ ॥ हम दोनों को इस प्रकार की बात चीत करते २ सायं काल होगई है यह कह कर मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि चल पड़े ॥ ३ ॥ उन्हें सीमा तक राजा भी पहुँचा कर जब राजा घर में लौटे तब

अपनी गुणवती सुन्दरी से बोले ॥ ४ ॥ दृढ़धन्वा बोले–हे सुन्दरी ! यह संसार असार है। मनुष्यों को इसमें क्या सुख है, यह गन्धर्व नगर के समान है, रागद्वेष आदि इसमें छः शत्रुओं का निवास है ॥५॥ इस शरीर का अन्त होने पर हे प्रिये ! कीट, विष्ठा, भस्म होना ही आवश्यक है। बात पित्त, कफ, मल, मूत्र, रुधिर, पूय से भरा हुआ है॥ ६ ॥ एवं अनित्य हैं, इसी से नित्यवस्तु

ब्रज्यराजाप्यागतवान्गृहम् । आगत्यस्वप्रियामाहसुँदरीगुणसुँदरीम् ।४। दृढधन्वोवाच । अयिसुँदरिसंसारेह्यसारेकिंसुखंनृणाम् ॥ रागद्वेषादिषट्शत्रौगंधर्वनगरोपमे ॥५॥ कृमिविड्भस्मसंज्ञांतेदेहेमेकिंप्रयोजनम् ॥ वातपित्तकफोद्रेकमलमूत्रासृगाकुले ॥ ६ ॥ अध्रुवणशरीरेणध्रुवमर्जयितुँवने ॥ गमिष्यामिवरारोहेसंस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ ७ ॥ तदाकर्ण्यप्रियाप्राहसाध्वीसागुणसुँदरी ॥ विनयावनताभूत्वाबद्धांजलिपुटाशुचा ॥ ॥ ८ ॥ गुणसुँदर्युवाच ॥ अहमप्यागमिष्यामित्वयैवसहभूपते ॥ पतिव्रतानांस्त्रीणांतुपतिरेवहिदैवतम् ॥ ॥ ९ ॥ पत्यौगतेतुयानारीगृहेतिष्ठतिसौनवे ॥ स्नुषाधानातुमानारीशुनीवपरवेश्मनि ॥ १० ॥ मितंपिता

को ग्रहण करने के लिये हे सुन्दरि ! मैं बन में चला जाऊंगा, वहां पुरुषोत्तम का भजन करूंगा इस शरीर का और प्रयोजन ही क्या है ॥ ७ ॥ यह सुनकर वह गुण सुन्दरी साध्वी विनय से नम्र होकर हाथ जोड़े शुद्धता पूर्वक बोली ॥ ८ ॥ गुण सुन्दरी बोली—हे भूपते ! मैं भी आपके साथ चलूंगी। देखिये पतिव्रता स्त्रियों के लिये तो पति ही देवता है ॥ ९ ॥ जो भी स्त्री

पतिके चले जाने पर पुत्र के घर पुत्रवधू के आधीन होकर रहती है, वह तो दूसरे के घर कुतिया की भांति रहा करती है ॥ १० ॥ पिता जितना देता है, भ्राता एवं पुत्र भी मिल जितना देते हैं पति तो सर्वस्व दे देता है तो फिर पति के साथ कौन स्त्री न जावे ॥ ११ ॥ तब पत्नी का वचन मानकर पुत्र को राज्य देकर राजारानी दोनों मुनि सेवित वन में चले गये॥१२॥

ददात्येवमितंभ्रातामितंसुतः ॥ अमितस्यप्रदातारंभर्तारंकानुनव्रजेत् ॥ ११ ॥ प्रियावाक्यमुरीकृत्यतंसुरा-ज्येभिषिच्यच ॥ सहपत्न्याययौशीघ्रमरण्यंमुनिसेवितम् ॥ १२ ॥ हिमाचलसमीपेचगंगामासाद्यदंपती ॥ त्रिकालंचक्रतुः स्नानंसम्प्राप्तेपुरुषोत्तमे ॥ १३ ॥ पुरुषोत्तमंसमासाद्यविधिनातत्रनारद ॥ तपस्तेपेसपत्नीकः संस्मरन्पुरुषोत्तमम् ॥ १४ ॥ ऊर्ध्वबाहुर्निरालंबःपादांगुष्ठेनसंस्थितः ॥ नभोदृष्टिर्निराहारःश्रीकृष्णंतमजीज पत् ॥ १५ ॥ एवंव्रतविधौतस्यतस्थुषश्चतपोनिधे ॥ सेवाविधौप्रपन्नासीन्महिषीसापतिव्रता ॥ १६ ॥

हे नारदजी ! हिमालय के निकट श्रीगङ्गाजी के तट पर वे दोनों पहुंचे । तब पुरुषोत्तम मास के आने पर तीनों समय वे स्नान करने लगे ॥ १३ ॥ और पुरुषोत्तम भगवान् का स्मरण करते हुए पुरुषोत्तम मास में वे दोनों तप करने लगे ॥ १४ ॥ राजा तो आकाश में दृष्टि लगाये, केवल पैर के एक अंगूठे से खड़े होकर, भुजा ऊंचे करके, निराहार होकर श्रीकृष्ण भगवान् का जपन करने लगे ॥ १५॥ श्रीपुरुषोत्तम की इस प्रकार की तप विधि में हे तपोनिधे नारद ! राजा की पतिव्रता रानी उनकी सेवा में लग गई ॥ १६ ॥ इस प्रकार के व्रत की तपस्या में उन्होंने पुरुषोत्तम मास सम्पूर्ण किया, व्रत की समाप्ति होने पर ही बजती

हुई छोटी २ घण्टि काओं से शोभित वहां विमान आकर उतरा ॥ १७ ॥ उस विमान में पुण्य शील तथा सुशील भगवत्पार्षदों को विराज मान देखकर पत्नी के साथ राजा आश्चर्यित हुए ॥ १८ ॥ उन्हें प्रणाम किया, राजा रानी को पार्षदों ने विमान पर चढ़ा लिया, ॥ १९ ॥ नूतन दिव्य शरीर पाकर, वे दोनों विमान द्वारा शीघ्र ही गोलोक चले गये ॥ २० ॥ श्रीपुरुषोत्तम मास

एवंकृतवतस्तस्यसंपूर्णेपुरुषोत्तमे ॥ विमानमगमत्तत्रकिंकिणीजालमंडितम् ॥ १७ ॥ पुण्यशीलसुशीलाभ्यांसेवितंसहसागतम् ॥ तद्दृष्ट्वाविस्मयाविष्टःसपत्नीकोमहीपतिः ॥ १८ ॥ आनीनमद्विमानस्थौपुण्यशीलसुशीलकौ ॥ ततस्तौतंसपत्नीकंविमानंनिन्यतुर्नृपम् ॥ १९ ॥ विमानमधिरुह्याथसपत्नीकोनराधिपः गोलोकंगतवाञ्छीघ्रं दिव्यंधृत्वावपुर्नवम् ॥ २० ॥ एवंदृष्ट्वातपोराजामासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ निर्भयंलोकमासाद्यमुमोदहरिसन्निधौ ॥ २१ ॥ पतिव्रताचतत्पत्नीसापितल्लोकमाययौ ॥ पुरुषोत्तमेतपस्यंतंसंसेव्यनिजवल्लभम् ॥ २२ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ वर्णयामिकिमद्याहंयदेकरसनामम ॥ पुरुषोत्तमसमंकिंचिन्नास्ति-

भगवान् के तप के द्वारा वह राजा निर्भय लोक में पहुंचकर भगवत्सन्निधान आनन्द में निवास करने लगे ॥ २१ ॥ राजा की पतिव्रता पत्नी भी श्रीपुरुषोत्तम भगवान् की आराधना में संलग्न पति की सेवा करते २ वह भी गोलोक में प्राप्त हुई ॥ २२ ॥ श्रीनारायण बोले–हे नारद ! मेरी एक ही जिव्हा है उससे पुरुषोत्तम की महिमा में किस प्रकार वर्णन करूं, भूतल पर इसके

समान और कुछ भी नहीं ॥ २३ ॥ सहस्र जन्म में तप करते २ भी वह फल नहीं प्राप्त होता जितना कि पुरुषोत्तम मास के व्रत द्वारा मिलता है ॥ २४ ॥ श्रीपुरुषोत्तम मास में किसी कारण वशभी यदि उपवास, दान, स्नान, जप, इनमें कुछ भी हो जाय । २५ उस मनुष्य के करोड़ों जन्मों के पापों के ढ़ेर जैसे वानर के केवल तीन रात्रि के स्नान मात्र से पाप नष्ठ हो गये,

नारदभूतले ॥ २३ ॥ सहस्रजन्मतप्तेन तपसातन्नगम्यते ॥ यत्फलंगम्यतेपुंभिःपुरुषोत्तमसेवनात् ॥ २४ ॥ व्याजतोपिकृतेतस्मिन्मासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ उपवासेनदानेनस्नानेनचजपादिना ॥ २५ ॥ कोटिजन्मकृतानेकपापराशिर्लयंव्रजेत् ॥ यथाशाखामृगस्याशुत्रिरात्रस्नानमात्रतः ॥ २६ ॥ अजानतोपिदुष्टस्यप्राक्तनानांकुकर्मणाम् ॥ संचयोविलयंयातोमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ २७ ॥ सोपिदिव्यंवपुर्धृत्वाविमानमधिरुह्यच ॥ अगमद्दिव्यगोलोकंजराजरामृत्युविवर्जितम् ॥ २८ ॥ अतःश्रेष्ठतमोमासःसर्वेभ्यःपुरुषोत्तमः ॥ दुष्टंशाखामृगंयोसौव्याजेनापिहरिंनयत ॥ २९ ॥ अहोमूढ़ानसेवंतेमासंश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ तेधन्याःकृतकृत्यास्तेते-

उसी प्रकार नाश होजाते हैं ॥ २६ ॥ ज्ञान न होने पर भी महादुष्ठ वानर के पूर्व जन्म के कुकर्मों का फल पुरुषोत्तम के स्नान से नष्ट होगया ॥ २७ ॥ वानर दिव्यरूप धारी होकर विमान पर चढ़कर जरामृत्यु से रहित दिव्य गोलोक में चला गया ॥२८॥ अत एवं यह अन्य सब महीनों से यह पुरुषोत्तम मास अत्युत्तम है । इसी मास में ही दुष्ठवानर को हरि के सन्निधान पहुंचा दिया ॥ २९ ॥ वे महा मूर्ख पुरुष है जो मोक्षदायक पुरुषोत्तम की सेवा नहीं करते । वे पुरुष परधन्य हैं, उनका जन्म भी सफल

है ॥ ३० ॥ जो विधि पूर्वक पुरुषोत्तम मास का स्नान, दान, जप, हवन, उपवास आदि से सेवा करते हैं ॥३१॥ श्रीनारद बोले–
मनुष्य जन्म सब प्रकार के अर्थों को देने में साधन रूप है, तो व्याज से ही पुरुषोत्तम की सेवा होजाने से वह वानर भी मुक्त
होगया ॥ ३२ ॥ हे तपोनिधे ! सब लोकों के हित के लिये यह इतिहास कृपा करके सुनावें उसने कहां त्रिरात्र स्नान किया ॥३३॥

र्षाचसफलोभवः ॥ ३० ॥ पुरुषोत्तममासंयेसेवंतेविधिपूर्वकम् ॥ स्नानदानजपैर्होमैरुपोषणपुरःसरैः ॥ ३१ ॥
नारदउवाच ॥ सर्वार्थसाधनंवेदेमानुषंजनुरुच्यते ॥ अयंशाखामृगोप्यद्धामुक्तोयद्व्याजसेवनात् ॥ ३२ ॥
तद्वदस्वकथामेतांसर्वलोकहितायमे ॥ कुत्रासौकृतवान्स्नानंत्रिरात्रंतपसांनिधे ॥ ३३ ॥ कोसौ कपिः किमा-
हारःकुत्रजातःक्वचावसत् ॥ व्याजेनतस्यकिंपुण्यंजातंश्रीपुरुषोत्तमे ॥ ३४ ॥ तत्सर्वंविस्तरेणैवमह्यंशुश्रूष-
वेवद ॥ नतृप्तिर्जायतेत्वत्तःशृण्वतोमेकथामृतम् ॥ ३५ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ कश्चित्केरलदेशीयोद्विजः
परमलोलुपः ॥ नित्यंधनचयेदक्षःसरघेवधनप्रियः ॥ ३६ ॥ लोकेकदर्यइत्याख्यांगतस्तेनैवकर्मणा ॥ चित्र-

वह वानर कहां पैदा हुआ, कहां रहता था, एवं क्या आहार किया करता था, श्री पुरुषोत्तम में व्याज से उसे क्या पुण्य हुआ
॥ ३४ ॥ यह आख्यान में विस्तार से सुनना चाहता हूँ, आपके मुखारविन्द से कथामृत सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती अतः यह
अवश्य सुनावें ॥ ३५ ॥ श्रीनारायण बोले—सुनो-केरल देश में एक अत्यन्त लोभी ब्राह्मण था वह धन को तो इस प्रकार संचय
कर रहा था जैसे कि मधुमक्खियें मधुका संचय करती हैं ॥ ३६ ॥ इस प्रकार के लोभात्मक कर्म से सब लोगों में उसका

नाम कदर्य प्रसिद्ध होगया, पिता ने तो इसका पहिले चित्र शर्मा नाम रखा हुआ था ॥ ३७ ॥ धन संचय में लगकर न कभी उसने अच्छा भोजन किया, न कभी अच्छा वस्त्र पहिना, उस कुबुद्धि ने स्वाहा स्वधा कभी नहीं किया ॥ ३८ ॥ यश प्राप्ति के लिये तो उससे कुछ भी नहीं हुआ, यहां तक कि आपने स्त्री पुत्र कलत्रका भी पालन नहीं किया। पृथ्वी भर से अन्याय

शर्मापुरानामतस्यासीत्पितृकल्पितम् ॥ ३७ ॥ सदन्नंचसुवस्त्रंचनभुक्तंतेनकुत्रचित् ॥ नस्वाहानस्वधावापिकृतातेनकुबुद्धिना ॥ ३८ ॥ यशोर्थेनकृतंकिंचित्पोष्यवर्गोनपोषितः ॥ सर्वंभूमिगतंचक्रेधनमन्यायसंचितम् ॥ ३९ ॥ नमाघेतिलदानंचकृतंतेनकदाचन ॥ कार्तिकेदीपदानंचब्राह्मणानांचभोजनम् ॥ ४० ॥ वैशाखेधान्यदानंचव्यतीपातेचकांचनम् ॥ वैधृतौराजतंदानंसर्वदानान्यमूनिच ॥ ४१ ॥ रविसंक्रमणेकालेनदत्तानिकदाचन ॥ चन्द्रसूर्योपरागेचनजप्तंनहुतंक्वचित् ॥ ४२ ॥ अवीवदद्दीनवाचंसर्वत्राश्रुपरिप्लुतः

पूर्वक केवल धन संचय में लगा रहा ॥३९॥ माघ मास में तिलमात्र भी उस से दान नहीं हुए, कार्तिक में दीपदान, ब्राह्मणों को भोजन कराना ॥ ४० ॥ वैशाख में धान्यदान, व्यतीपात में स्वर्णदान, वैधृत में चान्दीदान, इस प्रकार के यह दान इनमें से कोई भी ॥ ४१ ॥ सूर्य संक्रांति के दिन इसने कभी नहीं किया। सूर्यचन्द्र के ग्रहण के अवसर पर जपन हवन कुछ भी नहीं किया ॥ ४२ ॥ आंसुए बहा २ सबके सामने अपनी निर्धनता के कपट पूर्ण दीन वचन बोलता, कहीं से कुछ मिल

जाय वर्षा, अन्धेरी, धूप आदि से क्लिष्ठ, कृश, दुबले पतले काले शरीर वाला हो गया ॥ ४२ ॥ धन लोभ से सदा पृथ्वी पर फिरता, और लोगों को वार २ यही कहता कि मुझ गरीब पापी को कुछ दे दो ॥ ४४ ॥ वह गो दोहन जितना समय भी नहीं ठहर सकता था, जहाँ कहीं से लोग उसे धिक्कार करते थे, दुःखी मन होकर फिरा करता ॥ ४५ ॥ वनमें रहने वाला किसीवगीची

वर्षवातातपक्लिष्टःकृशःश्यामकलेवरः ॥ ४३ ॥ चचारधनलोभेनमूढधीर्भूतलेसदा ॥ कोपियच्छतुयत्किंचित्पामरायमुहुर्वदन् ॥ ४४ ॥ सगोदोहनमात्रंहिकुत्रापिस्थातुमक्षमः ॥ लोकधिक्कारसंदग्धोबभ्राम दुःखमानसः ॥ ४५ ॥ तन्मित्रंवाटिकानाथःकश्चिदासीद्वनेचरः ॥ सतंनिवेदयामासस्वदुःखंसंरुदन्मुहुः ॥ ४६ ॥ तिरस्कुर्वंतिमांनित्यंपुटभेदनवासिनः ॥ अतस्तत्रमयास्थातुंनशक्यंपुटभेदने ॥ ४७ ॥ इत्येवंवदतस्तस्यकदर्यस्यद्विजन्मनः ॥ अतिदीनतरांवाचमाकर्ण्यकृपयाप्लुतः ॥ ४८ ॥ मालाकारःप्रपन्नंतंदीनंमत्वाकरोद्दयाम् ॥ हेकदर्यत्वमत्रैववाटिकायांवसाधुना ॥ ४९ ॥ मालाकारवचःश्रुत्वाकदर्यःसर्वनागरैः ॥ तिरस्कृतःसतद्वाटी-

का स्वामी कोई माली उसका मित्र बन गया, अब उसके पास जाकर रोते २ बार बार अपना दुःख सुनाने लगा ॥ ४६ ॥ नगर के रहने वाले मेरा नित्य ही निरादर करते हैं अत एव वह बोला—वहां तो मैं रहने को सर्वथा असमर्थ हूं ॥ ४७ ॥ इस प्रकार उस कदर्य ब्राह्मण की अत्यन्त दीन सी बातें सुनकर उस माली को बहुत दया आगई ॥ ४८ ॥ उसे नगर निवासियों से तिरस्कृत सुनकर माली ने कहा-हे कदर्य ! तुम इस बगीची में प्रसन्नता पूर्वक रह जावो तुम दीन होकर मेरी शरण आये हो।

॥ ४९ ॥ वह माली के वचन सुनकर आनन्द से वहीं रहने लगा ॥ ५० ॥ उसके निकट रहकर उसकी आज्ञा सदा पालता, माली का भी इसी कारण उस पर दृढ़ विश्वास होगया ॥ ५१ ॥ तब सब प्रकार से यह कदर्य मेरा अपना होगया है, मुझे हानि नहीं पहुंचायेगा, ऐसा माली ने निश्चय कर लिया, तब तो उसने बगीची की चिंता भी छोड़ दी, स्वयं राजमन्दिर में नौकर होगया

मध्युवासमुदायुतः ॥ ५० ॥ नित्यंतन्निकटस्थायीतदाज्ञापरिपालकः ॥ तेनवाटीपतिस्तस्मिन्विश्वासमकरोद्दृढम् ॥ ५१ ॥ अतिविश्वस्तचित्तोनतस्मिन्सवाटिकापतिः ॥ तमेवाचीकरद्भिप्रंस्वकल्पंवाटिकापतिम् ॥ ॥ ५२ ॥ ततःसर्वात्मभावेनममायमितिनिश्चयात् ॥ विहायवाटिकाचिंतांसिषेवेराजमंदिरम् ॥ ५३ ॥ राजद्वारेसदाकार्यतस्यात्यंतमतीभवत् ॥ पराधीनतयाचासौवाटिकांनजगामह ॥ ५४ ॥ ततःफलानिकदर्यस्तुजघासनिर्भरंमुदा ॥ अक्रीणतावशिष्टानिलोभेनातीवदुर्बलः ॥ ५५ ॥ अगृह्णाद्द्रविणंतज्जंसर्वस्वंयमशंकितः ॥ यदापृच्छद्वनाधीशस्तदग्रेऽवीवदन्मृषा ॥ ५६ ॥ आमंभ्रामंचनगरंयाचंयाचंचभैक्षकम् ॥ घास-

॥ ५२ ॥ वह कदर्य भी उस बगीची का स्वयं स्वामी बनकर रहने लगा ॥ ५३ ॥ माली तो नौकरी के कारण पराधीन होजाने पर फिर उस बगीची में नहीं गया ॥ ५४ ॥ तब तो उस कदर्य के भाग्य ही खुल गये भरपेट बगीची के फल खाने लगा, बचे खुचे लोभ के मारे बेच भी डालता था ॥ ५५ ॥ निडर होकर वह धन अपने पास रख लिया, जब बगीची के मालिक ने आकर पूछा तो उसे असत्य कहने लगा ॥ ५६ ॥ बोला—मैं तो भैया--नगर में घूम घूमकर भिक्षा मांगकर खा लेता हूं। और दिन रात

तुम्हारी बगीची की रखवाली करता हूं ॥ ५७ ॥ फिर भी पक्षी परिन्दे महीना भर इसके फल खा गये हैं। देखिये फल खाते हुए मैंने बहुत से पक्षी मार भी दिये हैं ॥ ५८ ॥ उनके मांस तथा पर देखो चारों ओर बिखरे पड़े हैं। जब माली ने यह सब देखा तब विश्वास आ गया, फिर उसे छोड़कर चला गया ॥ ५९ ॥ इस प्रकार फल खाते बेचते उस कदर्य को सत्तासी वर्ष बीत

घासंदिवारात्रौपरिचर्यामितेवनम् ॥ ५७ ॥ तथाप्यस्यफलान्याशन्मासंगच्छंतिपक्षिणः ॥ पश्याश्नंतोमयाकेचिन्नाशिताःखचराभृशम् ॥ ५८ ॥ तेषांमांसानिपत्त्राणिपतितानीहसर्वतः ॥ तद्दृष्ट्वातीत्रविश्वस्यजगामवाटिकापतिः ॥ ५९ ॥ एवंप्रवर्तमानस्यजग्मुर्वर्षाणिदुर्मतेः ॥ सप्ताशीतिःकदर्यस्यजराजर्जरितस्ततः ॥ ॥ ६० ॥ ममारमूढधीस्तत्रनैवापवन्हिदारुणी ॥ नाभुक्तंक्षीयतेपापमितिवेदविदोवदन् ॥ ६१ ॥ तस्माद्धाहाप्रकुर्वाणोमुद्गराघातपीड़ितः ॥ अजीगमन्महामार्गंकृच्छ्रेणातिविभीषणम् ॥ ६२ ॥ स्मरन्पूर्वकृतंकर्मप्रलपन्बुद्बुदाक्षरम् ॥ अहोमेपश्यताज्ञानंकदर्यस्यचदुर्मते ॥ ६३ ॥ आसाद्यमानुषंदेहंदुर्लभंत्रिदशैरपि

गये, तब तो वह दुर्मति बुढ़ापे से अत्यन्त क्षीण होगया ॥ ६० ॥ वह मूढ़ बुद्धि वहीं मर गया, उसका देह संस्कार भी न हुआ वेदज्ञ कहते हैं कि बिना भोगे पाप कभी क्षीण नहीं होते ॥ ६१ ॥ यमदूतों ने आकर उस पर मुद्गरों से प्रहार किया, हा हा कार करता हुआ अत्यन्त भयानक यम मार्ग पर कष्ठ से चलने लगा ॥ ६२ ॥ मार्ग में चलते चलते अपने किये कर्मों को बुद्बुद् अक्षरोंमें प्रलाप करता था, अहो मुझ कदर्य दुर्बुद्धि का अज्ञान तो देखो॥६३॥अरे मैंने काले हरिणों के निवास से परम पवित्र इस

भारत वर्ष में देव दुर्लभ जन्म पाकर ॥ ६४ ॥ क्या किया, धन के लोभ में पड़कर जन्म व्यर्थ ही गवां दिया, चिर काल से
अर्जित वह मेरा धन अब तो दूसरों के हाथ पड़ गया ॥ ६५ ॥ हाय अब क्या किया जाय, पराधीन होकर अब तो मैं कालपाश
में पड़ चुका हूँ । मनुष्य जन्म पाकर शोक मैंने कुछ भी शुभ कर्म न किया ॥ ६६ ॥ न कुछ दान किया न अग्नि होत्र हुआ न

॥ खंडेस्मिन्भारतेपुण्येकृष्णसारमृगान्विते ॥ ६४ ॥ किंकृतंधनलोभेनव्यर्थंनीतंजनुर्मया ॥ तद्धनंतुपराधी
नंचिरकालार्जितंमया ॥ ६५ ॥ किंकरोमिपराधीनःकालपाशागतोधुना ॥ मानुषंजनुरासाद्यनकिंचित्कृत-
वाञ्छुभम् ॥ ६६ ॥ नदत्तंनहुतंवन्हौनतप्तंहिमगव्हरे ॥ नगांगंसेवितंतोयंमाघेमकरगेरवौ ॥ ६७ ॥
उपवासत्रयंचांतेनकृतंपुरुषोत्तमे ॥ नकृतंकार्तिकेप्रातःस्नानंसतारकागणम् ॥ ६८ ॥ नपुष्टश्चमयादेहोमा-
नुषःपुरुषार्थदः ॥ अहोमेसंचितंद्रव्यंस्थितंभूमौनिरर्थकम् ॥ ६९ ॥ जीवोजीवनपर्यंतंक्लेशितोदुष्टबुद्धिना
कदाचिज्जाठरोवन्हिर्नान्नैर्निर्वापितोमया ॥ ७० ॥ नापिसद्वासनाछन्नःस्वदेहःपर्वणिक्वचित् ॥ नज्ञातयो

हिमालय की कन्दरा में तप किया और न मकर राशिस्थ सूर्य के माघ में गंगा स्नान किया ॥ ६७ ॥ और न पुरुषोत्तम मास के
अन्तिम तीन दिन का उपवास भी कर सका । पिछली रात्रि तारों के रहते प्रातः कार्तिक स्नान भी न किया ॥ ६८ ॥ और न
मैंने पुरुषार्थ देने वाला मनुष्य शरीर को पुष्ठ किया, शोक कि मेरा इतना इकट्ठा किया धन भूमि में निरर्थक गड़ा रह गया ॥ ६९ ॥
मुझ दुष्ठ बुद्धि ने सारा जीवन दुःख से गुजार दिया, केवल अन्न द्वारा भी तो अपनी जठराग्नि नहीं बुझा सका ॥ ७० ॥ मिष्ठान्न

के द्वारा एक बार भी मैं किसी को तृप्त नहीं कर सका। इस प्रकार चिल्लाते हुए उस ब्राह्मण को यमदूत यमके पास लेगये॥७१॥ उसे देखकर चित्र गुप्त ने उसका शुभाशुभ देखा, तब अपने स्वामी धर्मराज को चित्र गुप्त बोला-इस अधम कदर्य ने तो ॥७२॥धन के लोभ में पड़कर कुछ भी पुण्य नहीं किया, इस दुर्बुद्धि ने बगीची में रह कर अनेकों पाप कर डाले हैं॥ ७३ ॥ बगीची के

बांधवाश्चस्वजनाःस्वसृजाश्चपि ॥ ७१ ॥ जामाताचसुताश्चापिपितामातानुजास्तथा ॥ पतिव्रतापिगृहिणी-ब्राह्मणानैवतोषिताः ॥ ७२ ॥ मिष्टान्नैरेकवारंचतर्पितानमयाक्वचित् ॥ एवंविलपमानंतंनिन्युःकीनाश-सन्निधिम् ॥ ७३ ॥ तंदृष्ट्वाचित्रगुप्तस्तुविलोक्यैतच्छुभाशुभम् ॥ अवोचत्स्वामिनंधर्मंकदर्योयंद्विजाधमः ॥ ॥ ७४ ॥ नकिंचित्सुकृतंत्वस्यधनलुब्धस्यदुर्मतेः ॥ असावचीकरत्पापंपुष्कलंवाटिकास्थितः ॥ ७५ ॥ अचूचुरत्फलान्यद्धाविश्वस्तोवाटिकापतेः ॥ ततोजघासतान्येवपक्वानियानियानिच ॥ ७६ ॥ अक्रीणा-दवशिष्टानिधनलोभेनदुर्मतिः ॥ फलचौर्यकृतंपापंविश्वासघातजंपरम् ॥ ७७ ॥ एतत्पापद्वयंचास्मिन्नत्युग्रं

स्वामी को विश्वास दिलाकर फल चुरा २ पके पके खाता रहा ॥ ७४ ॥ बाकी के बचे बेच डाले, इसने विश्वास घात तथा फल चोरी का पाप किया ॥ ७५ ॥ वह धन भी तो इसका निरर्थक गया, जवाई, बेटी, पिता, माता, भाई, पतिव्रता नारी तक को इसने सन्तुष्ठ नहीं किया ॥ ७६ ॥ न कभी इसने किसी पर्व पर सुन्दर वस्त्र पहिने, स्वजन बान्धवों को भी तृप्त नहीं किया॥७७॥

मुख्य तो इसके दो पाप हैं, एक फल चुराना,दूसरा विश्वास घात,और अनेकों पापों के रहने पर भी ये दो महाउग्र पाप हैं ।।७८।। इस प्रकार चित्र गुप्त के वचन सुनकर क्रोध में भरे हुए यम कहने लगे -यह दुर्बुद्धि सहस्र वर्ष वानर योनि में रहे इसके भोग लेने के बाद विश्वास घात का फल मिलेगा ।। इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायाँ सप्तविंशोऽध्यायः।। २७ ।।

वर्त्ततेप्रभो ।। अन्यान्यपिचपापानिसंत्यस्मिन्विविधानिच ।। ७८ ।। नारदउवाच ।। इत्थंनिशम्यविधिनंदन चित्रगुप्तवाक्यंक्रुधाप्रज्वलयाप्लुतधर्मराजः ।। आहैषयातुकपिजन्मसहस्रकंत्वोविश्वासघातकृतिजंफलमस्य-पश्चात् ।। ७९ ।। इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेकदर्योपाख्यानेसप्त-विंशोऽध्यायः ।। २७ ।।

श्रीनारायणउवाच ।। तन्निशम्यभटानाहचित्रगुप्तश्चिरंभृशम् ।। पूर्वंलोभाभिभूतोयंपश्चाच्चौर्यमचीकरत् ।। १ ।। अतःप्रेतत्वमासाद्यपश्चाद्भवतुवानरः ।। ततश्चाहंप्रदास्यामिबह्वीर्नरकयातनाम् ।। २ ।। अयमेव-

श्रीनारायण बोले—धर्मराज के वचन सुनकर चित्र गुप्त यमदूतों से बोला--देखो यह पहिले लोभ में पड़ा रहा है, फिर इसने चोरी की है ।। १ ।। अत एवं पहिले तो इसे प्रेत योनि मिलेगी फिर वानर होगा। उसके अन्तर इसे बहुत सी यमयातनाऐं भोगनी पड़ेगी ।। २ ।। धर्मराज के घर में हे दूतो ! इसके साथ इस क्रम से न्याय करना उपयुक्त है। इस प्रकार से यमदूतों

को चित्र गुप्तने आज्ञा दी ॥ ३ ॥ तब दूतों ने उसे पीट २ कर प्रेत योनि में झट पट डाल दिया वह फलों से रहित वन में जा पड़ा ॥ ४॥ उस प्रेत को उस वन में फलों की तो बात रही किन्तु जल भी नहीं मिलता था, इस प्रकार वह भूखा प्यासा व्याकुल होकर वने वनमें भटकने लगा ॥ ५ ॥ प्रेत योनि में प्राप्त होने वाले दुःख भोगकर अन्त में फलों की चोरी करने के कारण

क्रमःश्रेयान्धर्मराजगृहेभटाः ॥ इत्येवंचित्रगुप्तेनसमादिष्टाविभीषणाः ॥ ३ ॥ तथाचक्रुर्भटाःशीघ्रंताडयं तश्चतंद्विजम् ॥ प्रेतत्वंप्रापितःपूर्वंकाननेविफलेद्विजः ॥ ४ ॥ निर्जलेबहुकालंचप्रेतयोनिमवाप्यसः ॥ क्षुत्तृड्भ्यांव्याकुलोत्यंतंबभ्रामगहनेवने ॥ ५ ॥ प्रेतयोनिगतंदुःखमनुभूयततःपरम् ॥ फलचौर्यसमुद्भूतांकपियोनिमजीगमत् ॥ ६ ॥ दिव्येकालंजरेशैलेजंबुखंडमनोहरे ॥ सुशीतलच्छायेफलपुष्पसमन्विते ॥ ७ ॥ तत्रासीद्देवराजेननिर्मितंकुण्डमुत्तमम् ॥ सरोवरसमंपुण्यंसत्सेव्यंपापनाशनम् ॥ ८ ॥ मृगतीर्थमितीख्यातंसुराणामपिदुर्लभम् ॥ यस्मिन्कृतेनश्राद्धेनपितरोयांतिसद्गतिम् ॥ ९ ॥ तत्रदैत्यभयाद्देवामृगाभूत्वा

वानर योनि उसने प्राप्त की किन्तु अब तो वह फल फूल दार घने वृक्षों वाले एवं शीतल जल वाले जम्बुखण्ड के अत्यन्त मनोहर कालिंजर पर्वत पर वानर हुआ ॥ ७ ॥ उस पर्वत के बनमें सरोवर के समान पवित्र सत्सेवनीय पाप नाशक एक दिव्य कुण्ड था, जिसे देवराज इन्द्र ने बनावाया था ॥ ८ ॥ उसका नाम मृग तीर्थ पड़ गया था, वह पवित्र तीर्थ देव दुर्लभ है, जिस पर श्राद्ध करने से पितरों की सद्गति होती है ॥ ९ ॥ उसका इतिहास तो यह है कि-दैत्यों के भय से देवता लोग मृग रूप हो वहीं जाकर

निडर होकर नहाते रहे इसी कारण इसका नाम मृग तीर्थ हुआ ॥ १० ॥ उस ब्राह्मण ने पहिले वानर का जन्म इसी तीर्थ पर पाया पूर्व मनुष्य जन्म पाकर भी फलों की चोरी के पाप से अब उसे यह जन्म मिला ॥ ११ ॥ नारद बोले-हे महर्षे-मृग तीर्थ तो त्रिलोकी को भी पवित्र कर देता है, करोड़ों पाप करने वाले इस वानर का वहाँ निवास किस प्रकार हुआ ? हे तपोधन !

निरंतरम् ॥ अभिसस्नुर्निरातंकामृगतीर्थमतोविदुः ॥ १० ॥ तत्रायंप्रथमंजन्मकापेयंलब्धवान्द्विजः ॥ फलचौर्यकृतात्पापादासद्यमानुषींतनुम् ॥ ११ ॥ नारदउवाच ॥ त्रैलोक्यपावनेरम्येमृगतीर्थेकथंकपिः ॥ आवासमकरोद्दुष्टःपापकोटिसमन्वितः ॥ १२ ॥ छिंधिमेसंशयंनाथतपोधनमनोगतम् ॥ भवादृशांनगोप्यंहिस्वशिष्येषुकदाचन ॥ १३ ॥ सूतउवाच ॥ एवंसनोदितोविप्रान्नारदेनतपोनिधिः ॥ उवाचपरमप्रीतःसत्कुर्वन्नारदंमुनिम् ॥ १४ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ कश्चिद्वैश्योमहानासीन्नाम्नावैचित्रकुण्डलः ॥ तत्पत्नीतारकानाम्नीपातिव्रत्यपरायणा ॥ १५ ॥ तावुभौचक्रतुर्भक्त्यापुण्यंश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ तयोःकृतवतोर्मासो-

मेरे मनके इस संशय को निवृत्त करें । आप जैसे गुरु अपने शिष्यों से कुछ भी छिपा नहीं रखते ॥ १३॥सूतजी बोले-श्रीनारायण नारद जी पर प्रसन्न होकर उसका सत्कार करते हुए कहने लगे ॥ १४ ॥ श्रीनारायण बोले--सुनो--चित्र कुण्डल नाम का एक महान् वैश्य हुआ है, उसकी तार का नाम से पतिव्रता स्त्री हुई है ॥ १५ ॥ वे पति पत्नी दोनों भगवान् के भक्त थे, भक्ति

के साथ उन्हें ने श्रीपुरुषोत्तम मास का व्रत धारण किया ॥ १६ ॥ पुरुषोत्तम के अन्तिम दिन के आने पर सपत्नीक उस चित्र कुण्डल ने श्रद्धा पूर्वक प्रसन्नता से उद्यापन भी किया ॥ १७ ॥ वेद तथा उसके अंगों के जानने वाले विद्वान् ब्राह्मणों को उद्यापन विधि कराने के लिये सपत्नीक उन्हें बुलवाया ॥ १८ ॥ हे नारद धन के लोभ से यह कदर्य ब्राह्मण भी वहाँ पहुँच गया

गतःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ १६ ॥ चरमेहनिसंप्राप्तेउद्यापनमथाकरोत् ॥ सपत्नीकोमुदायुक्तःश्रद्धयाचित्रकुण्डलः ॥ १७ ॥ द्विजानाकारयामासवेदवेदांगपारगान् ॥ उद्यापनविधिंकर्तुंसपत्नीकान्गुणान्वितान् ॥ १८ ॥ कदर्योऽप्यगमत्तत्रधनलोभेननारद ॥ उद्यापनविधौपूर्णेसंजातेचित्रकुण्डलः ॥ १९ ॥ अत्युग्रदानैस्तान्विप्रान्सपत्नीकानतोषयत् ॥ तुष्टेषुतेषुसर्वेषुभूयसींदक्षिणामदात् ॥ २० ॥ तद्दत्तभूयसीतुष्टाअन्येविप्रागृहान्ययुः ॥ अतिलुब्धःकदर्यस्तुरुदंस्तस्थौतदग्रतः ॥ २१ ॥ विनयावयतोभूत्वासगद्गदमुवाचह ॥ चित्रकुण्डलवैश्येशभगवद्भक्तिभासुर ॥ २२ ॥ पुरुषोत्तमव्रतंसम्यक्भवताविधिनाकृतम् ॥ नतथाचकृतंकेनकुत्रा-

तब उद्यापन विधि के पूरा होने पर चित्र कुण्डलने पत्नी के साथ उन ब्राह्मणों को ॥ १९ ॥ बड़े २ दान देकर सन्तुष्ठ किया, फिर उन्हें बहुतसी दक्षिणा भी दी ॥ २० ॥ बहुत सी दक्षिणा पाकर और सब ब्राह्मण तो अपने २ घर चले गये, केवल वही लोभी कदर्य ठहरा रहा और उसके आगे आकर रोते २ ॥२१॥ विनय से नम्र होकर गद्गद् वाणी से बोला--हे वैश्य शिरोमणे भगवद्भक्ति में सूर्य चित्र कुण्डल ॥ २२ ॥ आपने पुरुषोत्तम व्रत पूरे विधान से भली भान्ति किया है। पृथ्वी तल पर इस

प्रकार का व्रत किसी ने भी नहीं किया ॥ १३ ॥ आप भाग्यवान् है सर्वथा कृतार्थ हैं, पूर्ण भक्ति से पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा करते हैं ॥ २३ ॥ आपके पिता माता दोनों धन्य है, जिन दोनों ने तुम जैसे भगवान् के प्यारे पुत्र को जन्म दिया है ॥ २५ ॥ यह पुरुषोत्तम मास भी धन्य से भी धन्य है। जिसकी सेवा करने से इसलोक तथा परलोक के वह उत्तम फल देता है ॥ २६ ॥

पिपृथिवीतले ॥ २३ ॥ भवानद्यकृतार्थोसिभाग्यवानसिसर्वथा ॥ यत्वयापरयाभक्त्यासेवितःपुरुषोत्तमः ॥ ॥ २४ ॥ धन्यस्तवपिताधन्यामाताचपतिदेवता ॥ याभ्यामुत्पादितःपुत्रस्त्वादृशोहरिवल्लभः ॥ २५ ॥ धान्यद्धन्यतरश्चायंमासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ यत्सेवनादवाप्नोतिह्यैहिकामुष्मिकंफलम् ॥ २६ ॥ दृष्टा हिताव कीपूजांचकितोहंविशांपते ॥ अहोत्वयामहत्कर्मकृतमेतन्नसंशयः ॥ २७ ॥ अन्येभ्योब्राह्मणेभ्यश्चधनंदत्तं बृहन्मुदा ॥ नददासिकथंमह्यंभाग्यहीनायभूरिद ॥ २८ ॥ इतिविज्ञापितस्तेनतस्मैधनमदादसौ ॥ तद्गृहीत्वाकरोद्विप्रोधनंभूमिगतंमुदा ॥ २९ ॥ तत्रानेनमहापूजादृष्टाश्रीपौरुषोत्तमी ॥ पुरुषोत्तममासश्चधन

आपकी इस प्रकार की हुई पूजा देखकर मैं आश्चर्य कर रहाहूं। हे वैश्य शिरोमणे ! आजआपने महान् कर्म करके दिखायाहै,इसमें कुछ संशय ही नहीं ॥२७॥ किन्तु एक बात है-अन्य सब ब्राह्मणों को आपने खुशी २ बहुत साधन दिया है मुझ भाग्य हीन को तो कुछ भी नहीं मिला, हे दानी पुरुष ! हमें भी कुछ मिलना चाहिये॥२८॥उस कदर्य के इस प्रकार कहने पर उस सेठने उसकोभी बहुतसा धन दे दिया, वह धन लेकर तो कदर्य ने प्रसन्न होतेरउसे भूमिमें गाड़ दिया।॥२९॥हे नारद ! उसी स्थान पर श्रीपुरुषोत्तम

की इसमहापूजाको कदर्य देखता रहा,और धनके लोभसे ही इसभास की स्तुतिभी की॥३०॥पूजाके दर्शन की महिमा तथापुरुषोत्तम की स्तुति, यद्यपि यह धन लोभ से ही की गई थी इसी के प्रभाव से वह मृगतीर्थ पर जन्मा ॥ ३१ ॥ सूतजी बोले-देखो पुरुषोत्तम पूजाके दर्शन से तथा धन लोभ से स्तुति करने से उस दुष्ठ वानर को श्रेष्ठ तीर्थ का सेवन प्राप्त हुआ ॥ ३२ हे ब्राह्मण वर्ग

लोभेनसंस्तुतः ॥ ३० ॥ पूजादर्शनमाहात्म्यात्पुरुषोत्तमसंस्तवात् ॥ धनलोभकृताद्वापिमृगतीर्थमुपागतः ॥ ३१ ॥ सूतउवाच ॥ दर्शनात्स्तवनाद्वापिधनलोभकृतादपि ॥ दुष्टशाखामृगस्यापिजातंसत्तीर्थसेवनम् ॥ ॥ ३२ ॥ किंपुनःश्रद्धयाकर्तुर्दर्शनस्तवनेद्विजाः ॥ पुरुषोत्तमदेवस्यसपत्नीकस्यसादरम् ॥ ३३ ॥ नारद उवाच ॥ सुशीतलजलेब्रह्मन्स्निग्धच्छायेमनोहरे ॥ सद्द्रुमण्डितेरण्येतत्स्थितेःकारणंवद ॥ ३४ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामितुभ्यंशुश्रूषवेऽनघ ॥ अत्रास्तिकारणंकिंचिच्छ्रवणात्पापनाशनम् ॥३५॥

यदि सपत्नीक पुरुषोत्तम देव का दर्शन तथा आदर से स्तुति करे तो उसके भाग्यों का कहना ही क्या ॥ ३३ ॥ नारद बोले–हे ब्रह्मन् ! शीतल जल वाले घनी छायादार सुन्दर वृक्षों से रमणीक ऐसे मनोहर स्थल पर उसकी स्थिति का कारण कहें ॥३४॥ श्रीनारायण बोले–हे नारद ! सुनो–तुम सुनने की इच्छा करते रहे हो, हे अनघ ! इसमें भी कोई कारण है, उसके श्रवण से पाप नष्ट होजाते हैं ॥ ३५ ॥ जब सर्वार्थ फल दाता दशरथ नन्दन श्रीरामचन्द्रजी ने समुद्र पर पुला बान्ध कर दुष्ठ रावण का संहार

किया था ॥ ३६ ॥ श्रीरामचन्द्रजी ने तो विभीषण को छोड़ बाकी सब राक्षस मार डाले थे फिर अग्नि परीक्षा से श्रीजानकी जी को अङ्गीकार किया था ॥ ३७ ॥ उस समय ब्रह्माजी–शंकर एवं इन्द्र आदि देवताओं ने आकर रावण वध से प्रसन्न होकर कहा था कि हे श्रीराम ! आप वर माँगे ॥ ३८ ॥ भक्तों को अभय देने वाले श्रीराम ने यह कहा कि–हे देवगण ! यदि आप लोग

यदादाशरथीरामःसर्वार्थफलदायकः ॥ हतवान्रावणंदुष्टंबद्ध्वासेतुंमहोदधौ ॥ ३६ ॥ विभीषणादृतेतेनराक्षसानावशेषिताः ॥ ततोवन्हिविशुद्धासाजानकीस्वीकृताधुना ॥ ३७ ॥ चतुर्मुखमहेशानपुरंदरपुरःसरैः ॥ दशवक्त्रवधप्रीतैर्हेरामत्वंवरंवृणु ॥ ३८ ॥ इत्युक्तेऽवीवदद्रामोभक्तानामभयंकरः ॥ सुराःशृणुतमद्वाक्यंयदिदेयोवरोऽधुना ॥ ३६ ॥ अत्रयेवानराःशूरारक्षोभिर्निहताश्चते ॥ संजीवयततानाशुसुधावृष्ट्याममाज्ञया ॥ ॥ ४० ॥ तथेत्युक्त्वासुधावृष्ट्यावानरान्समजीवयन् ॥ चतुर्मुखमहेशानपुरंदरपुरःसुराः ॥ ४१ ॥ ततःसंजीविताःसर्वेवानराजयशालिनः ॥ अजुढौकन्रामभद्रेचिरंसुप्तोत्थिताइव ॥ ४२ ॥ अथपुष्पकमारूढ्यवान-

वर देना चाहते हैं, तो हमारी बात सुनो ॥ ३६ ॥ संग्राम भूमि में जितने भी वानर राक्षसों द्वारा मारे गये हैं उन्हें मेरी आज्ञा से अमृत वर्षा कर शीघ्र जीवित करो ॥ ४० ॥ जो आज्ञा ऐसा कह कर ब्रह्मा, शंकर, इन्द्र आदि देवताओं ने अमृत वर्षा करके सब वानर जीवित कर दिये ॥ ४१ ॥ उस रामभद्र तीर्थ पर सोकर उठे हुए के समान वे सब जय शाली वानर जीवित हो गये ॥ ४२ ॥ उसके अनन्तर श्रीरामचन्द्रजी पुष्पक विमान पर आरूढ़ हुए वानरों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया, तब सपत्नीक

श्रीरामचन्द्र जी ने खुशी से उनके प्रति कहा ॥ ४३ ॥ हे सुग्रीव, हनुमान, अङ्गद जाम्बवान् आदि वानर वृन्द आप लोगों ने वानरों के साथ मिलकर मित्रता का पूरा कार्य करके दिखा दिया है ॥ ४४ ॥ अब आप उन सब वानरों को यहां से जाने की आज्ञा दे दें ये लोग प्रसन्नता पूर्वक अपने २ घर चले जाय ॥ ४५ ॥ मेरे ये वानर जिस जिस वन में जाकर निवास करेंगे वे

रान्सर्वतःस्थितान् ॥ अजीगदत्सपत्नीकःप्रसन्नमुखपंकजः ॥ ४३ ॥ श्रीरामउवाच ॥ हेसुग्रीवहनुमंतौहेता रात्मजजांबवान् ॥ मित्रकार्यंकृतंसर्वंभवद्भिःसहवानरैः ॥ ४४ ॥ आज्ञापयंतुनान्सर्वान्भवंतोवानरानितः ॥ भवदाज्ञापिताःसर्वेयथेष्टंयांतुतेयतः ॥ ४५ ॥ यत्रयत्रवनेएतेमामकादीर्घजीविनः ॥ वसंतिवानरास्तत्रवृक्षाः पुष्पफलान्विताः ॥ ४६ ॥ नद्योमृष्टजलावाथशीतलंसुभगंसरः ॥ नकेपिधर्षयिष्यंतिसर्वेयांतुममाज्ञया ॥ ॥ ४७ ॥ अतोरामप्रभावेणयतोवानरजातयः ॥ तत्रनद्योमृष्टजलाःसरश्चसुभगंवने ॥ ४८ ॥ लसत्फला- महावृक्षाःपुष्पपल्लवसंयुताः ॥ परंतुसुखदुःखानिप्राक्तनादृष्टजानिच ॥ ४९ ॥ यत्रयत्रवसेज्जंतुस्तत्रतत्रो-

सब वन फलों वाले वृक्षों से संयुक्त होंगे और ये भी चिर काल तक जीवित रहेंगे ॥ ४६ ॥ वहां की नदियां सुन्दर मीठे जल वाली होंगी। कोई भी इन्हें नहीं रोक सकेगा ये सब मेरी आज्ञा से जावें ॥ ४७ ॥ श्रीरामचन्द्रकी आज्ञा से वानर जाति जहां पर भी पहुँची वहां की नदियां मधुर जल होगईं, उस वन में सरोवर भी सुन्दर होगये ॥ ४८ ॥ बड़े २ वृक्ष फल फूल एवं दलों से भर गये किन्तु सुख दुःख आदि तो पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार होते हैं ॥ ४९ ॥ वे तो जहां २ पर भी जीव जाकर

निवास करता है वही आकर मिलते हैं। वेदों का यही वचन है कि विना भोगे कर्म फल कभी नहीं मिटते ॥ ५० ॥ श्रीनारायण बोले—अब आगे सुनो–उस वन में जन्म पाकर वह वानर पर्वता कार बढ़ गया, किन्तु बड़ी भूख एवं प्यास से व्याकुल होकर वह लोभी वन में भटकने लगा ॥५१॥ जन्म पाते ही उसके मुख में पित्त बिकार हो गया, उसकी पीड़ा से वह कराहता रहता,

पर्यांतिहि ॥ नाभुक्तं क्षीयतेकर्मइतिवेदानुशासनम् ॥ ५० ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ अथासौवानरस्तत्रववृधे पर्वतोपमः ॥ वृहत्तृत्तृट्समायुक्तोलोलुपोऽचरद्वने ॥ ५१ ॥ जन्मतस्तस्यवक्त्रेभूत्पीडापित्तसमुद्भवा ॥ ययासृक्च्यवतेवक्त्रव्रणतश्चदिवानिशम् ॥ ५२ ॥ अत्यंतवेदनाविष्टोनात्तुं शक्तस्तुकिंचन ॥ सचवानरचाप ल्याद्द्रुमेभ्यःसत्फलानिच ॥ ५३ ॥ लुनीयवदनाभ्याशेनीत्वातत्याजभूरिशः ॥ नैकत्रपीडयास्थातुं शक्तो- सौवानरःक्वचित ॥ ५४ ॥ वृक्षाद्वृक्षांतरंगच्छन्मेनेमृत्युंसुखावहम् ॥ कदाचित्पतद्भूमौविललापातिदुः

उसके मुख में घाव होगया था, दिन रात रुधिर बहता रहता था ॥ ५२ ॥ बड़ी पीड़ा रहती थी, कुछ खा नहीं सकता था। वह वानर चंचलता के कारण वृक्षों से सुन्दर फल तोड़ भी लेता था ॥ ५३ ॥ मुंह के पास ले जाकर पीड़ा के कारण खा नहीं सकता था, इस प्रकार उन्हें फैंक देता था। उस पीड़ा से एक स्थान पर भी नहीं ठहर सकता था ॥ ५४ ॥ एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर फिरता रहता, इससे तो वह मर जाना ही अच्छा समझता था। एक बार वह पृथ्वी पर गिर पड़ा अत्यन्त दुःखि। होकर चिल्लाने लगा॥५५॥उसके अङ्गप्रत्यंग टूटगये बहुत रोया,जैसे पानीसे भ्रष्ठ होकर मछली तड़फती है वैसेतड़फा,उसका शरीर शिथिल

होगया था, मुंह झर रहा था, भूख प्यास से व्याकुल था ॥ ५६ ॥ उसके सब दांत गिर पड़े, घाव से पीड़ित हो गये, पूर्व जन्म के पाप कर्म से वह इस प्रकार दुःखी हुआ ॥ ५७ ॥ इस प्रकार निराहार एवं दुःखी रहते दैव योग से पुरुषोत्तम मास आगया॥५८॥ उस महीने में भी वह उसी प्रकार ही शीत वायु से पीड़ित रहा, एक वार वह पुरुषोत्तमके कृष्ण पक्ष में घने वनमें भटकते२ ॥५६॥

खितः ॥ ५५ ॥ अरूरुदद्भ्रमगात्रोनीरभ्रष्टोयथाक्षषः ॥ असौक्षुत्तृट्समाविष्टःश्लथदृढोगलन्मुखः ॥ ॥ ५६ ॥ पेतुर्दंतास्तथासर्वेव्रणरोगेणपीडिताः ॥ पूर्वजन्मकृतात्पापादेवंदुःखमजीगमत् ॥ ५७ ॥ एवंप्रवर्तमानस्यनिराहारस्यनित्यशः ॥ दैवयोगात्समागच्छन्मासःश्रीपुरुषोत्तमः ॥ ५८ ॥ तस्मिन्नपितथैवास्तेशीतवातादिपीडितः ॥ कदाचिद्बहुलेपक्षेविचरन्गहनेवने ॥ ५६ ॥ तृषितःकुंडनिकटेनाशक्नोत्पातुमम्बु ॥ क्षुधाविष्टोपिचापल्यात्तत्रोच्चैर्वृक्षमारुहत् ॥ ६० ॥ वृक्षाद्वृक्षांतरंगच्छन्मध्येकुंडमपीपतत् ॥ सचिरायनिराहारःश्लथदिंद्रियजर्जरः ॥ ६१ ॥ निर्बलःशिथिलप्राणःकुँडप्रांतमुपाश्रितः ॥ एवंदिनानितत्रारिद-

कुण्ड के निकट पहुंचा, प्यास के लगने पर भी उसका मृन्मय अङ्ग जल न पी सका। भूख से व्याकुल होकर चपलता के कारण वही किसी ऊंचे वृक्ष पर चढ़ गया ॥ ६० ॥ एक वृक्ष से ज्योंही दूसरे वृक्ष पर उछलने लगा तो मध्य में नीचे कुण्ड में गिर पड़ा, चिरकाल तक निराहार रहने के कारण उसकी इन्द्रियाँ शिथिल हो चुकी थीं और देह भी जर्जर होगया था ॥६१॥

अत्यन्त निर्बल होगया था, उसके प्राण शिथिल हो चुके थे, इस प्रकार वह कुण्ड में चार दिन तक पड़ा रहा ॥ ६२ ॥
वह कृष्ण पक्ष की दशमी के दिन से चार दिन कुण्ड में लोट पोट होता रहा, उसके पांचवे दिन पुरुषोत्तम मास में दोपहर के
समय ॥ ६३ ॥ उसके प्राण निकल गये, उस वानर का शरीर तीर्थ जल से भीग रहा था, उसके समस्त पाप निवृत्त होगये॥ ६४ ॥

शमीदिनतःकपेः ॥ ६२ ॥ गतानिलुँठतःकुंडेमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ पंचमेदिवसेप्राप्तेमध्यंदिनगतेरवौ ॥
॥ ६३ ॥ व्यसुःपपाततत्तीर्थेतोयक्लिन्नवपुःकपिः ॥ सतंदेहंसमुत्सृज्यविनिर्धूतमलाशयः ॥ ६४ ॥ सद्यो
दिव्यवपुःप्रापदिव्याभरणभूषितम् ॥ इंदीवरदलश्यामंकोटिकंदर्पसुंदरम् ॥ ६५ ॥ स्फुरद्रत्नकिरीटंचसु-
चारुझषकुंडलम् ॥ लसत्पीतपटंपुण्यंसद्रत्नकटिमेखलम् ॥ ६६ ॥ लसत्केयूरवलयंमुद्रिकाहारशोभितम् ॥
नीलकुंचितसुस्निग्धचिकुरावृतसन्मुखम् ॥ ६७ ॥ तदानीमागमच्छीघ्रंविमानंवैष्णवाश्रितम् ॥ भेरीमृद-

तत्काल ही उसे दिव्य भूषणों से भूषित सुन्दर शरीर प्राप्त होगया, नील कमल की तरह वह श्याम करोड़ों कामदेव से भी सुन्दर
था ॥ ६५ ॥ रत्नजटित किरीट मुकुट धारी मकराकार कुण्डलों वाला परम मनोहर पीतवस्त्र शोभा पा रहे थे, कटि में रत्नों
की मेखला थी ॥ ६६ ॥ अङ्गद, कड़े, मुद्रिकाएं, हार आदि से सुशोभित था, अत्यन्त काली स्निग्ध घुंघराली अलकों से उसका
मुख घिर रहा था ॥ ६७ ॥ तब वैष्णव जन जिस पर चढ़े हुए थे ऐसा विमान आकर वहां उतरा । भेरी, मृदंग, पटह, वीणा,
आदि की सुन्दरध्वनि गूंज उठी ॥ ६८ ॥ उस विमान पर दिव्य देवाँगनाएं नाच रही थीं, गन्धर्व किन्नर गा रहे थे इस प्रकार

के दृश्य को जब दिव्यदेह धारी उस वानर ने देखा ॥ ६९ ॥ तब उसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ मुझ जैसे महापापी के लिये यह कहां । यह वैमानिक सुख तो किसी महा पुण्यात्मा के योग्य है ॥ ७० ॥ उसी समय किसी सुन्दरी ने आकर उस पर चन्द्रमा के समान सुन्दर छत्र धारण किया एवं बहुत सी अप्सराएं आकर आनन्द से उसे चंवर झुलाने लगी ॥ ७१ ॥ कोई तो ताम्बूल

झपटहभेणुवीणावृहत्स्वनम् ॥ ६८ ॥ नृत्यद्देवाङ्गनंदिव्यङ्गायद्गंधर्वकिन्नरम् ॥ तन्निरीक्ष्यमहाभागोदिव्य देहधरःकपिः ॥ ६९ ॥ विस्मयंपरमंयातोमहापापस्यमेकुतः ॥ एतत्पुण्यतस्यैवयोग्यंवैमानिकंसुखम् ॥ ७० ॥ अथकाचित्तदुपरिदधारच्छत्रमिंदुभम् ॥ चक्रतुश्चामरेतस्यकेचिदप्सरसोमुदा ॥ ७१ ॥ काचित्तांबूलहस्ता- चनन्नृतुश्चाप्सराःपुरः ॥ काचिद्भृङ्गारकंहैमंस्वधुनीवारिसंभृतम् ॥ ७२ ॥ हस्तेकृत्वापुरस्तस्थौगीतवाद्यादि तत्परा ॥ एवंवैभवमालोक्यचित्रन्यस्तइवाभवत् ॥ ७३ ॥ किमेतत्केनपुण्येनममापुण्यस्यदुर्मतेः ॥ नास्ति- मेसुकृतंकिंचिद्येनयामिहरेःपदम् ॥ ७४ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ इत्थंतर्कयतोवृहत्सुखनिधिंदिव्यंविमानंपुरो-

पकड़े नाच रही थी एवं कोई अप्सरा गङ्गाजल से भरी हुई सोने की झारी लिये ॥ ७२ ॥ गायन एवं वाद्य में तत्पर होकर सामने उपस्थित थी । इस प्रकार के वैभव को देखकर वह चित्र लिखित सा हो गया ॥ ७३ ॥ विचार करने लगा, अरे मैं तो महापापी एवं दुर्मति था, यह किस पुण्य का फल है । मैंने कीये तो कोई पुण्य ही नहीं जिससे कि मैं हरि पद को पासकूं ॥ ७४ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार की तर्कना करते हुए उसे परमसुख के निधान उस विमान को सामने देख आश्चर्य हो रहा था,

तब भगवत्पार्षदों ने उसके हृदय की बात जानकर हाथ जोड़े सविनय प्रणाम करके वानर शरीर को छोड़ने वाले एवं सामने उपस्थित उसे प्रेम पूर्वक बोले ॥ ७५ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां अष्ठाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

पुण्यशील तथा सुशील बोले—हे समर्थ अब गोलोक में चलो देर क्यों कर रहे हो, आपने तो श्रीपुरुषोत्तम भगवान् के

दृष्ट्वाविस्मितचेतसोहरिभटौज्ञात्वास्यहार्दपरम् ॥ बध्वाञ्जेकरसंपुटंसविनयंनत्वातदियंपदंवाक्यंसुन्दरमूचतुःकपिजनुस्त्यक्त्वापुरःसंस्थितम् ।' ७५ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेश्रीनारायणनारदसंवादेकदर्योपाख्यानेकपिजन्मनिविमानागमनंनामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

पुण्यशीलसुशीलावूचतुः ॥ विभोप्रयाहिगोलोकंकथमत्रविलंबसे ॥ पुरुषोत्तमसान्निध्यंत्वयालब्धंविशेषतः ॥ १ ॥ कदर्यउवाच ॥ बहूनिममकर्माणिसंतिभोग्यान्यनेकशः ॥ केनमेनिष्कृतिर्जाताथतोगोलोकमाप्नुयाम् ॥ २ ॥ यावंत्योवर्षधाराश्चतृणानिभूरजःकणाः ॥ यावंत्यस्तारकाव्योम्नितावत्पापानिसंतिमे ॥

सन्निधान विशेष करके निवास प्राप्त कीया है ॥१॥ कदर्य बोला–मैंने अभी अनेक कर्मों के भोग भोगने हैं उनसे मेरे किस पुण्य के द्वारा उद्धार हुआ है जिससे मुझे गोलोक प्राप्ति हुई है ॥ २ ॥ जितनी वर्षा की धाराएं हैं, एवं जितने पृथिवी के धूलि कण हैं और जितने आकाश में तारे हैं, उतने पाप हैं ॥ ३ ॥ यह मनोहर एवं दिव्य शरीर मैंने कैसे पा लिया इसका कोई अत्यन्त उग्र

कारण हो सकता है, हे हरि प्रिय पार्षदो यह मुझे कहो ॥ ४ ॥ श्रीनारायण बोले-इस प्रकार उससे सुनकर दोनों हरिदूत
बोले-हे देव ! क्या आपने अपना महान् साधन भी नही जाना ॥ ५ ॥ क्या यह भी प्रभो ! आपको मालूम नहीं हो सका कि
पुरुषोत्तम मास सबसे उत्तम है । यह तो विष्णु भगवान् को अत्यन्त प्रिय है एवं पुण्य है तभी तो इसका नाम भी पुरुषोत्तम है॥

॥ ३ ॥ कथमेतन्मयाप्राप्तंवपुर्दिव्यंमनोहरम् ॥ एतत्कारणमत्युग्रंमह्यंब्रूतहरेःप्रियौ ॥ ४ ॥ श्रीनारायण
उवाच ॥ इतिवाचमुपाकर्ण्यहरेर्दूतावथोचतुः ॥ हरिदूतावूचतुः ॥ अहोदेवकथंनैवविज्ञातंसाधनंमहत् ॥
॥ ५ ॥ प्रभोनज्ञायतेकस्मान्मासःसर्वोत्तमोत्तमः ॥ विष्णुप्रियोमहापुण्योनाम्नावैपुरुषोत्तमः ॥ ६ ॥ तस्मिं
स्त्वयातपश्चिर्णमशक्यंयत्सुरैरपि ॥ अविज्ञातंमहाराजकपिदेहेनकानने ॥ ७ ॥ मुखरोगादनाहारव्रतंजात-
मजानतः ॥ त्वयाचकपिचांचल्यात्फलान्युत्कृत्यवृन्ततः ॥ ८ ॥ क्षिप्तानिपृथिवीपीठेतृप्तास्तैरितरेजनाः ॥
पानीयमपिनोपीतमंतर्दुःखेनभूरिशः ॥ ९ ॥ संजातंतेतपस्तीव्रमज्ञानात्पुरुषोत्तमे ॥ परोपकारःसंजातः

६ ॥ उसी पुरुषोत्तम मास में देवता भी जिसे नहीं कर सकते ऐसा तप कर चुके हो, तव तुम वनमें वानर शरीर होने के कारण
यह जान भी नहीं सके ॥ ७ ॥ मुख रोग के कारण बिना ज्ञान तुम से निराहार व्रत होगया, चंचलता के स्वभाव से तुमने वृक्षों
से फल तोड़ २ कर ॥ ८ ॥ पृथ्वी पर फेंक दिये, उनसे दूसरों की तृप्ति होगई । बड़ी भारी अन्तर्वेदना के कारण तुमने जल भी

नहीं पिया ॥ ९ ॥ यह सब कुछ पुरुषोत्तम मास में हुआ यह अन जाने तुम्हारा तप हो गया है ॥ १० ॥ और तुमने वनमें फिरते फिरते भयानक सरदी अन्धेरी, धूप, घाम आदि सहन किये, परम पवित्र रमणीक तीर्थ में तुम पाँच दिन डुबकियाँ भी लगाते रहे ॥ ११ ॥ इसी कारण तुम्हारा पुरुषोत्तम मास का पुण्यदायक स्नान भी होगया। इस प्रकार बिन जाने तुम्हारी रुग्णावस्था

फलपातेनतेऽनघ ॥ १० ॥ शीतवातातपारौद्राःसोढाविचरतावने ॥ महातीर्थेवरेरम्येपंचाहंप्लवनंकृतम् ॥ ॥ ११ ॥ तस्मातेस्नानजंपुण्यंमासेश्रीपुरुषोत्तमे ॥ एवंरुग्णस्यतेजातमज्ञानात्तपउत्तमम् ॥ १२ ॥ तदेतत्सफलजातमनुभूतंत्वयाधुना ॥ व्याजतोपिकृतेनैवसफलंस्याद्यथातव ॥ १३ ॥ किंपुनःश्रद्धयेतस्मिन्मासे श्रीपुरुषोत्तमे ॥ विधिनाकुर्वतःकर्मज्ञात्वामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ १४ ॥ यस्त्वयासाधितःस्वार्थस्तादृक्कर्तुंचकःक्षमः ॥ यस्मिन्नेकोपवासेनमुच्यतेपापराशिभिः ॥ १५ ॥ नैतत्तुल्यंभवेत्किंचित्पुरुषोत्तमप्रीतिदम् ॥ तेधन्याः

में यह उत्तमतप हुआ है ॥ १२ ॥ यह तप अब सफल हुआ है, जिसका कि तुम अब अनुभव कर रहे हो। किसी व्याज से भी किया गया यह तप सफल होता है ॥ १३ ॥ फिर यदि श्रद्धा पूर्वक विधि से श्रीपुरुषोत्तम मास में कर्म किया जाय-उसका तो महात्म्य ही उत्तम है ॥१४॥ जिस प्रकार से तुमने अपना स्वार्थ सिद्ध किया वैसा और कौन सिद्ध कर सकता है। जिस पुरुषोत्तम के एक उपवास करनेसे भी पापों के ढेर से मुक्ति होजाती है॥१५॥ इसकी तुलना में पुरुषोत्तम को प्रसन्न करनेमेंऔरकोई भी साधन

नहीं । वे धन्य एवं कृतकृत्य हैं जो इस व्रत को धारते हैं ॥ १६ ॥ इस भारत वर्ष की पृथ्वी पर मनुष्य जन्म पाना अत्यन्त कठिन है इस पर जन्म पाकर जो पुरुषोत्तम की सेवा करते हैं ॥ १७ वे सदा सौभाग्य शाली एवं पुण्यात्मा हैं । उनका जन्म सफल है । यह सब से उत्तम मास जिनका स्नान एवं जप से बीतता है ॥ १८ ॥ दान एवं पितरों के श्राद्ध, तथा अनेकों

कृतकृत्यास्तेतद्व्रतंयेप्रकुर्वते ॥ १६ ॥ दुर्लभंमानुषंजन्मभूखंडेभारताजिरे ॥ तादृशंजनुरासाद्यसेवंतेपुरुषो-त्तमम् ॥ १७ ॥ तेसदासुभगाःपुण्यास्तेषांचसफलोभवः ॥ येषांसर्वोत्तमोमासःस्नानाजपैर्गतः ॥ १८ ॥ दानानिपितृकार्याणितपांसिविविधानिच ॥ तानिकोटिगुणान्यत्रसंप्राप्तेपुरुषोत्तमे ॥ १६ ॥ धिक्तंचनास्ति-कंपापशठंधर्मध्वजंखलम् ॥ पुरुषोत्तममासाद्यस्नानदानविवर्जितः ॥ २० ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ पुण्य-शीलसुशीलाभ्यामदृष्टंवर्णितंनिजम् ॥ तच्छ्रुत्वाचकितोहृष्टःपुलकांकितविग्रहः ॥ २१ ॥ तीर्थदेवान्नम-स्कृत्यकालंजरगिरिंततः ॥ ननामकाननाधीशान्सर्वगुल्मलतातरून् ॥ २२ ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यविमानं-

तप इस मास में किये हुए करोड़ गुणे हो जाते हैं ॥१६॥ श्रीपुरुषोत्तम मास के लगने पर जो स्नान दान नहीं करता वह नास्तिक है पापी, शठ, खल एवं धर्म को धोका देरहा है इस प्रकार के पुरुष को धिक्कार है ॥ २० ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार उन दोनों पुण्यशील सुशील पार्षदोंने जब उसके भाग्योंका वर्णन किया, तब अपने भाग्यका वर्णन सुनकर आश्चर्यित होकर परम प्रसन्न हुआ ॥ २१ ॥ तब तीर्थ देवताओं को तथा कालंजर पर्वत को प्रणाम करके उस वनके वृक्ष, गुल्म लताओं को भी प्रणाम किया

॥ २२ ॥ विमान को आकर फिर उसने परिक्रमा की, अत्यन्त तेजस्वी पीले वस्त्र धारण किये हुए, मेघ की तरह श्याम कान्ति
विनय पूर्वक वह विमान पर बैठ गया ॥ २३ ॥ सब देवता देख रहे थे, गन्धर्व जन उसकी स्तुति कर रहे थे, किन्नर लोग
बार २ सुन्दर बाजे बजा रहे थे ॥ २४ ॥ तब देवताओं ने प्रसन्न होकर धीरे २ पुष्प वर्षा की, इन्द्र आदि देवताओं ने उसकी

विनयान्वितः ॥ आरुरोहघनश्यामोलसत्पीतांबरावृतः ॥ २३ ॥ पश्यत्सुसर्वदेवेषुगंधर्वाद्यैरभिष्टुतः ॥
वाद्यमानेषुवाद्येषुकिन्नराद्यैर्मुहुर्मुहुः ॥ २४ ॥ पुष्पवृष्टिमुचोदेवामंदंमंदंमुदान्विताः ॥ सादरंपूजयां
चक्रुःपुरंदरपुरःसुराः ॥ २५ ॥ ततोजगामगोलोकंसानंदंयोगिदुर्लभम् ॥ गोपगोपीगवांसेव्यंरासमंडल-
मंडितम् ॥ २६ ॥ यत्रगत्वानशोचंतिजरामृत्युविवर्जिते ॥ तत्रासौचित्रशर्माचपुरुषोत्तमसेवनात् ॥ २७ ॥
व्याजेनापिमुमोदोच्चैर्विहायवानरंवपुः ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तंदृष्ट्वाश्रीपुरुषोत्तमम् ॥ २८ ॥ श्रीनारायण

पूजा की ॥ २५ ॥ तब विमान उठने लगा, उसके द्वारा योगिजनों को दुर्लभ गोप गोपियों एवं गौओं से सुसेव्य, रास मण्डल
मण्डित गोलोक में वह चला गया ॥ २६ ॥ वहीं गोलोक जहां जरामृत्यु का भय नहीं और वहां जाकर पुनरागमन नहीं होता,
उसी लोक में पुरुषोत्तम की सेवा से चित्र शर्म्मा पहुंचा ॥ २७ ॥ उसने तो अन जाने ही पुरुषोत्तम की सेवा की थी इसी से ही
वानर शरीर उसका निवृत्त होगया, गोलोक में जाकर दो भुजा वाले मुरली हाथ में लिये पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के उसने दर्शन

किये ॥ २८ ॥ श्रीनारायण बोले—इस प्रकार का आश्चर्य देखकर सब देवता विस्मित हो गये, वे पुरुषोत्तम मास की प्रशंसा करते हुए अपने २ लोक में चले गये ॥ २९ ॥ नारद बोले--हे ऋषिवर्य ! इस प्रकार आपने पुरुषोत्तम मास के दिन के प्रथम भागका कृत्य तो सुनाया, अब दूसरे भागका कृत्य भी कहें ॥ ३० ॥ इसमें गृहस्थों का परम उपकार है। हे कहने वालों में

उवाच ॥ इदमाश्चर्यमालोक्यदेवाःसर्वेसुविस्मिताः ॥ स्वंस्वंस्थानंययुसर्वेशंसंतंपुरुषोत्तमम् ॥ २९ ॥ नारद उवाच ॥ दिवसस्यादिमेभागेत्वयान्हिकमुदीरितम् ॥ तद्द्वितापरभागीयंकथंकार्यंतपोधन ॥ ३० ॥ गृहस्थस्योपकारायवदमेवदतांवर ॥ सदासर्वोपकारायचरंतिहिभवादृशाः ॥ ३१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ प्रातःकालोदितंकर्मसमाप्यविधिवत्ततः ॥ कृत्वामाध्यान्हिकींसंध्यांतिलतर्पणमाचरेत् ॥ ३२ ॥ देवामनुष्याःपशवोवयांसिसिद्धाश्चयक्षोरगदैत्यसंघा ॥ प्रेताःपिशाचाउरगाःसमस्तायेचान्नमिच्छंतिमयात्रदत्तम् ॥ ३३ ॥

उत्तम वक्ता ! आप जैसे महान् तो सबके उपकार के लिये सर्वदा विचरण करते रहते हैं ॥ ३१ ॥ श्रीनारायण बोले - प्रातःकाल का सब कृत्य विधि पूर्वक समाप्त करके, तब मध्यान्ह की सन्ध्या करे, तिलों से तर्पण करे ॥ ३२ ॥ और इस मन्त्र द्वारा कहे कि--देव, मनुष्य, पशु, पक्षी, सिद्ध, उरग दैत्य, प्रेत, पिशाच, इत्यादि जो २ भी अन्न चाहें वे मुझ से दिये अन्न को ग्रहण करें ॥ ३३ ॥ सब पांच महायज्ञ करे, फिर भूतबलि निकाले, पूर्वोक्त श्लोक पढ़ता हुआ कोए कुत्ते की बलियें देकर, ॥ ३४ ॥

सब प्राणियों को फिर पृथक् २ बलिये देवे, यह करके श्रद्धा तथा प्रसन्नता से आचमन करे ॥ ३५ ॥ फिर उठकर गोदोहन जितने समय तक अपने द्वार पर ठहरे किसी अतिथि के आगमन की प्रतीक्षा करे, यदि भाग्यवश उतने समय तक कोई आ जाय तो ॥ ३६ ॥ पहिले उसका वाणी द्वारा सत्कार करे, फिर उसका पूजन करे, भक्ति प्रेम से यथा प्राप्त

ततःपंचमहायज्ञान्कुर्याद्भूतबलिंततः ॥ काकस्यचशुनश्चैवबलिंदत्वैवमुच्चरन् ॥ ३४ ॥ इत्युक्त्वासर्वभूतेभ्योबलिंदद्यात्पुनःपृथक् ॥ ततआचम्यविधिवच्छ्रद्धयाप्रीतमानसः ॥ ३५ ॥ द्वारावलोकनंकुर्यादतिथिग्रहणायच ॥ गोदोहकालंभाग्यात्तु प्राप्तश्चेदतिथिर्यदि ॥ ३६ ॥ आदौसत्कृत्यवचसादेववत्पूजयेत्सुधीः ॥ तोषयेत्परयाभक्त्यायथाशक्त्यन्नपानतः ॥ ३७ ॥ भिक्षांत्रभिक्षवेदद्याद्विधिवद्ब्रह्मचारिणे ॥ आकल्पितान्नादुद्धृत्यसर्वव्यंजनसंयुतात् ॥ ३८ ॥ यतिश्चब्रह्मचारीचपक्वान्नस्वामिनावुभौ ॥ तयोरन्नमदत्वैवभुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ॥ ३९ ॥ यतिहस्तेजलंदद्याद्भैक्षंदद्यात्पुनर्जलम् ॥ तद्भैक्षंमेरुणातुल्यंतज्जलंसागरोप

अन्न जल से उसे सन्तुष्ठ करे ॥ ३७ ॥ ब्रह्मचारी भिक्षुक को विधि पूर्वक अन्न शाकादि पके पदार्थों की भिक्षा दे ॥ ३८ ॥ संन्यासी तथा ब्रह्मचारी ये दोनों पके अन्न के स्वामी हैं, इनको यदि अन्न न दिया जाय तो चान्द्रायण व्रत करना पड़ता है ॥ ३९ ॥ संन्यासी के हाथ में पहिले जल दे, फिर भिक्षा फिर जल दे, इस प्रकार की भिक्षा मेरु तुल्य हैं एवं जल समुद्र

तुल्य है ॥ ४० ॥ भिक्षुक का सन्मान करके जो भिक्षा देता है उसे गौदान करने का पुन्य होता है, ऐसा भगवान् यम कहते हैं ॥ ४१ ॥ उसके अनन्तर पूर्वा विमुख एवं मौनी हो शुद्ध तथा साफ पात्रों में अन्न की सराहना करते हुए भोजन पर बैठकर स्वस्थ चित्त प्रसन्नता से भोजन करे ॥ ४२ ॥ भोजन करते एक वस्त्र न हो और अपना ही आसन, तथा अपने ही

यम् ॥ ४० ॥ सत्कृत्यभिक्षवेभिक्षांयःप्रयच्छतिमानवः ॥ गोप्रदानसमंपुण्यमित्याहभगवान्यमः ॥ ४१ ॥ ततश्चभोजनंकुर्यात्प्राङ्मुखोमौनमास्थितः ॥ प्रशस्तेशुद्धपात्रेषुभुंजीतान्नमकुत्सयन् ॥ ४२ ॥ नैकवासाः समश्नीयात्स्वासनेनिजभाजने ॥ स्वयमासनमारुह्यस्वस्थचित्तः प्रसन्नधीः ॥ ४३ ॥ एकएवतुयोभुंक्ते-स्वकीयेकांस्यभाजने ॥ चत्वारितस्यवर्धंतआयुःप्रज्ञायशोबलम् ॥ ४४ ॥ सत्यंत्वर्तेनमंत्रेणजलमादायपा-णिना ॥ परिषिच्यचभोक्तव्यंघृतंव्यंजनान्वितम् ॥ ४५ ॥ भोजनात्किंचिदन्नायमादायैवंसमुच्चरेत् ॥ नमो भूपतयेपूर्वंभुवनपतयेनमः ॥ ४६ ॥ भूतानांपतयेपश्चाद्धर्मायचततोबलिम् ॥ दत्वाचचित्रगुप्तायभूतेभ्यइद-

पात्र हों, उसी आसन पर बैठकर स्वस्थ चित्त प्रसन्नता से भोजन करे ।४३॥ अपने एक के लिये ही अलहदा रखे हुए कांस्य पात्र में जो भोजन किया करता है, उसकी, आयु, बुद्धि, यश, एवं बल ये चारों वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥ ४४ ॥ और भोजन भी "सत्यंत्वर्त०" इस मन्त्र को पढ़ते हुए हाथ में जल लेकर भोजन पर छिड़कते हुए करे वह भोजन शुद्ध घृत तथा शाक से मिला हुआ हो ॥ ४५ ॥ खाने से पहिले भोजन से थोड़ा अन्न लेकर कहे कि भूपति को नमस्कार तथा भुवन पति को नमस्कार ॥ ४५ ॥ फिर भूतपति को बलि दे, धर्म को बलि दे, चित्र गुप्त को बलिदे । फिर भूतों को बलि देते हुए यह बोले ॥ ४७ ॥

जहाँ कहीं भी कोई प्राणी भूखप्यास से व्याकुल हो उनकी तृप्ति के लिये यह अन्न सुख पूर्वक अक्षय हो ॥ ४८ ॥ फिर प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, इन पाँच वायुओं का नाम लेकर भी बलिदे ॥ ४६ ॥ उसके अनन्दर पहिले ॐ का उच्चारण करके स्वाहा कहे, फिर अन्न का एक ग्रास घी में मसल एवं तर करके केवल निगल जाय, दातों से कुचले नहीं, इसी प्रकार

मुच्चरेत् ॥ ४७ ॥ यत्रक्वचनसंस्थानांक्षुत्तृषोपहतात्मनाम् ॥ भूतानांतृप्तयेऽक्षय्यमिदमस्तुयथासुखम् ॥ ॥ ४८ ॥ प्राणायापानसंज्ञायव्यानायचततःपरम् ॥ उदानायततोब्रूयात्समानायततःपरम् ॥ ४६ ॥ प्रणवं-पूर्वमुच्चार्यस्वाहांतेचघृतप्लुतम् ॥ पंचकृत्वोग्रसेदन्नंजिह्वयानतुदंशयेत् ॥ ५० ॥ ततश्चतन्मनाभूत्वाभुंजी-तमधुरंपुरः ॥ लवणाम्लौतथामध्येकटुतिक्तौततःपरम् ॥ ५१ ॥ प्राग्द्रवंपुरुषोश्नीयान्मध्येतुकठिनाशनम् ॥ अंतेपुनर्द्रवाशीतुबलारोग्येनमुँचति ॥ ५२ ॥ अष्टौग्रासामुनेर्भक्ष्याःषोडशारण्यवासिनः ॥ द्वात्रिंशच्चगृह-स्थस्यत्वमितंब्रह्मचारिणः ॥ ५३ ॥ नाद्याच्छास्त्रविरुद्धंतुभक्ष्यभोज्यादिकंद्विजः ॥ अभोज्यंप्राहुराहारंशुष्कं-

पांचग्रास निगले ॥ ५० ॥ तब तन्मय होकर भोजन करे, सबसे पहिले मिष्ठान्न खावे नमकीन एवं खट्टे पदार्थ मध्य में, कड़वा तीक्ष्ण अन्त में खावे ॥ ५१ ॥ प्रथम पतला पदार्थ खावे, मध्य में कठिन वस्तु, अन्त में फिर पतली वस्तु खावे, इससे बल बढ़ता है नीरोग रहता है ॥ ५२ ॥ संन्यासी मुनि को केवल आठ ग्रास खाने चाहिये, वान प्रस्थी को सोलह, गृहस्थी को बत्तीस, ब्रह्मचारी को जितनी रुचि हो उतने ग्रास खाने चाहिये ॥ ५३ ॥ ब्राह्मण शास्त्र विरुद्ध भक्ष्य भोज्यादि न खावे, उसमें सूखा

किंवा बासी भोजन भी अभोज्य है ॥ ५४ ॥ घृत खीर, छोड़कर बाकी सब पदार्थ खाले, भोजन पाचुकने पर बचे हुए अन्न को अंगुलियों के अग्रभाग से पृथक् रखे ॥ ५५ ॥ फिर जल की अंजलि भर कर उसे आधा पावे बाकी आधा जल अंगुलियों के अग्रभाग से, पृथ्वी पर छोड़दे ॥ ५६ ॥ बुद्धिमान पुरुष को वह जल पृथ्वी पर छोड़ते हुए इस मन्त्र को भी पढ़ते रहना चाहिये,

पर्युषितंतथा ॥ ५४ ॥ सर्वंसशेषमश्नीयात्घृतपायसवर्जितम् ॥ अग्रांगुलिषुतच्छेषंनिधायभोजनोत्तरम् ॥ ॥ ५५ ॥ जलपूर्णांजलिंकृत्वापीत्वाचैवतदर्धकम् ॥ अग्रांगुलिस्थितंशेषंभूमौदत्वांजलेर्जलम् ॥ ५६ ॥ शेषंनिषिंचेतत्रैवपठन्मंत्रमिमंबुधः ॥ अन्यथापापभाग्विप्रःप्रायश्चित्तेनशुद्ध्यति ॥ ५७ ॥ रौरवेपूयनिलये-पद्मार्बुदनिवासिनाम् ॥ अर्थिनामुदकंदत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ ५८ ॥ निषिच्यानेनमंत्रेणकुर्याद्दंतविशोधनम् ॥ आचम्यपात्रमुत्सार्यकिंचिदार्द्रेणपाणिना ॥ ५९ ॥ ततःपरंसमुत्थायबहिःस्थित्वातमाहितः ॥ शोधयेन्मुखहस्तौचमृदाशुद्धजलेनच ॥ ६० ॥ कृत्वाषोडशगंडूषाच्छुद्धोभूत्वासुखासनः ॥ इमौमंत्रौपठन्ने-

अन्यथा वह ब्राह्मण पाप भागो है प्रायश्चित से उसकी शुद्धि होती है ॥ ५७ ॥ मन्त्र–पूय के घर रौरव नरक में अर्बुदों वर्षों से जल से प्यासे पड़े हुए जीवों की तृप्ति के लिये यंह जल है, उनके अर्थ यह अक्षय हो ॥ ५८ ॥ इस मन्त्र के द्वारा जल छिड़के फिर दन्त शोधन करे, आचमन करे फिर गीले हाथ से पात्रों को सरकावे ॥ ५९ ॥ फिर वहां से उठकर बाहिर जावे, वहां सावधानता पूर्वक शुद्ध जलसे मिट्टी द्वारा हाथ धोवे मुंह भी धोवे ॥ ६० ॥ सोलह कुल्ले करे शुद्ध होकर आराम से आसन पर

बैठकर अपने पेट पर हाथ फेरता हुआ यह दो मन्त्र पढ़े ॥ ६१ ॥ मन्त्रार्थ–अगस्त्य, कुम्भकर्ण, शनि, वड़वाग्नि, एवं पाँचवे भीमसेन, इनका भोजन पचने के लिये स्मरण करे ॥ ६२ ॥ अगस्त्य ऋषि मुझ पर प्रसन्न हों जिन्होंने आतापी तथा वातापी मार दिया था ॥ ६३ ॥ इसके अनन्तर श्रीकृष्ण भगवान् का प्रसन्नता पूर्वक स्मरण करे, फिर एक बार आचमन करके ताम्बूल

वपाणिनोदरमालभेत् ॥ ६१ ॥ अगस्त्यंकुंभकर्णंचशनिंचवडवानलम् ॥ आहारपरिपाकार्थंस्मरेद्भीमंचपं-चमम् ॥ ६२ ॥ आतापीमारितोयेनवातापीचनिपातितः ॥ समुद्रःशोषितोयेनसमेगस्त्यःप्रसीदतु ॥६३॥ ततःश्रीकृष्णदेवस्यकुर्वीतस्मरणंमुदा ॥ भूयोप्याचम्यकर्तव्यंततस्तांबूलभक्षणम् ॥ ६४ ॥ भुक्त्वोपविष्टः श्रीकृष्णंपरंब्रह्मविचारयेत् ॥ सच्छास्त्रादिविनोदेनसन्मार्गाद्यविरोधिना ॥ ६५ ॥ ततश्चाध्यात्मविद्यायाः कुर्वीतश्रवणंसुधीः ॥ सर्वथावृत्तिहीनोपिमुहूर्तंस्वस्थमानसः ॥ ६६ ॥ श्रुत्वाधर्मंविजानातिश्रुत्वापापंपरि-त्यजेत् ॥ श्रुत्वानिवर्ततेमोहःश्रुत्वाज्ञानामृतंलभेत् ॥ ६७ ॥ नीचोपिश्रवणेनाशुश्रेष्ठत्वंप्रतिपद्यते ॥

भक्षण करे ॥ ६४॥ इस प्रकार खा पीकर सत्य मार्ग से विरोध न करने वाले ऐसे परम श्रेष्ठ शास्त्रों के अध्ययन से ब्रह्म श्रीकृष्ण का विचार करे ॥ ६५ ॥ आजीविका के सर्वथा न होने पर भी दो घड़ी तो स्वस्थ मन होकर बुद्धिमान् अवश्य ही अध्यात्म विद्या श्रवण करे ॥ ६६ ॥ श्रवण करने से धर्म का ज्ञान होता है, श्रवण से पाप निवृत्त होते हैं श्रवण से मोह निवृत्त होता है, श्रवण करके अमृत–मोक्ष मिलता है ॥ ६७ ॥ नीच पुरुष भी श्रवण के द्वारा श्रेष्ठ होजाता है, श्रवण न करने से श्रेष्ठ भी नीच

हो जाता है ॥ ६८ ॥ उसके अनन्तर सुख से बाहिर जावे, सब अर्थों की सिद्धि देने वाले श्रीकृष्ण को मन में ध्यान करते हुए अपना कारोबार करे ॥ ६९ ॥ जब सूर्य अस्ता चल गामी होने लगे, तीर्थ पर अथवा घर में ही आकर स्वच्छता पूर्वक पैर हाथ धो, सन्ध्या करे ॥ ७० जो सायंकाल की सन्ध्या नहीं करता, वह ब्राह्मण अधम है, गौहत्या का पाप लगता है, मरने

श्रेष्ठोपिनीचतांयातिरहितःश्रवणेनच ॥ ६८ ॥ व्यवहारंततःकुर्याद्बहिर्गत्वायथासुखम् ॥ श्रीकृष्णंमनसा-ध्यायेत्सर्वार्थसिद्धिदायकम् ॥ ६९ ॥ सूर्येऽस्तशिखरंप्राप्तेतीर्थंगत्वाथवागृहम् ॥ सायंसंध्यामुपासीतधौतांघ्रिः सपवित्रकः ॥ ७० ॥ यःप्रमादान्नकुर्वीतसायंसंध्यांद्विजाधमः ॥ सगोवधमवाप्नोतिमृतेरौरवमाप्नुयात् ॥ ॥ ७१ ॥ कदाचित्काललोपेपिसंकटेवापथिस्थितः ॥ आनिशीथात्प्रकुर्वीतसायंसंध्यांद्विजोत्तमः ॥ ७२ ॥ यस्त्रिसंध्यमुपासीतब्राह्मणःश्रद्धयान्वितः ॥ तत्तेजोवर्धतेत्यंतंघृतेनेवहुताशनः ॥ ७३ ॥ सादित्यांपश्चिमां-संध्यामर्धास्तमितभास्करम् ॥ प्राणानायम्यसंप्रोक्ष्यमंत्रेणाब्दैवतेनतु ॥ ७४ ॥ सायमग्निश्चमेत्युक्त्वाप्रातः

पर रौरव नरक में जाता है ॥ ७१ ॥ जब कभी सायं सध्या का समय टल जाय, कोई संकट हो या मार्ग में हो, तो भी आधी रात तक भी साय सन्ध्या करे ॥ ७२ ॥ सायं काल की सन्ध्या का सूर्यास्त समय में प्राणायाम करे "आपोहिष्ठा" इस मन्त्र से मार्जन करे ॥ ७३ ॥ जो ब्राह्मण श्रद्धा पूर्वक तीनों काल सन्ध्या करता है उसका तेज घृत द्वारा उत्तेजित अग्नि के समान अत्यन्त बढ़ता है ॥ ७४ ॥ सायं काल में "अग्निश्चमा०,, इस मन्त्र से प्रात काल "सूर्यश्चमा०,, इस मन्त्र से आचमन करे।

पूर्वाभिमुख सावधानी से चुपचाप होकर बैठे ॥ ७५ ॥ तब जप माला लेकर तागाओं के उदय होने तक ॐ के साथ गायत्री का जप करता रहे ॥ ७५ ॥ तब वरुण सम्बन्धी मन्त्रों के द्वारा सूर्य का उपस्थान करे, दिशाओं को नमस्कार करके पृथक् २ दिसा देवताओं को भी नमस्कार करे ॥ ७७ ॥ इस प्रकार सायंकाल की सन्ध्या उपास कर अग्नि होत्र कर नौकर चाकरों से

सूर्येत्यपः पिबेत् ॥ प्रत्यङ्मुखोपविष्टस्तुवाग्यतःसुसमाहितः ॥ ७५ ॥ प्रणवव्याहृतियुतांगायत्रींतुजपेत्ततः ॥ अक्षसूत्रंसमादायसम्यगातारकोदयात् ॥ ७६ ॥ वारुणीभिस्तदादित्यमुपस्थायप्रदक्षिणम् ॥ कुर्वन्दिशो-नमस्कुर्याद्दिगीशांश्चपृथक्पृथक् ॥ ७७ ॥ उपास्यपश्चिमांसंध्यांहुत्वाग्निमशिनयात्त : ॥ भृत्यैःपरिवृतोभूत्वा-नातितृप्तोथसंविशेत् ॥ ७८ ॥ सायंप्रातर्वैश्वदेवःकर्तव्योबलिकर्मच ॥ अनश्नतापिसततमन्यथाकिल्बिषी-भवेत् ॥ ७९ ॥ कृतपादादिशौचस्तुभुक्त्वासायंततोगृही ॥ गच्छेच्छय्यांततोमृद्वीमुपधानसमन्विताम् ॥ ॥ ८० ॥ स्वगृहेप्राक्शिराःशेतेश्वाशुरेदक्षिणाशिराः ॥ प्रवासेपश्चिमशिरानकदाचिदुदक्शिराः ॥ ८१ ॥

मिलकर थोड़ा भोजन करके शयन घर में जावे ॥ ७८ ॥ सायं प्रातः दोनों समय वैश्वदेव बलि कर्म करे, यदि सायंकाल भोजन न भी करना हो बलि जरूर करे, अन्यथा पापी होता है ॥ ७९ इसी प्रकार भोजन कर करा कर गृहस्थी पुरुष कोमलतकियों वाली शय्यापर हाथ धोकर सो जाय ॥ ८ ॥ अपना घर होतो पूर्वकी ओर सिर करके सोवे, श्वशुर के घर में दक्षिण की ओरसिर करे, विदेश

में पश्चिम की ओर सिर होवे,उत्तर की ओर कभी भी सिर करके न सोवे॥८१॥सुख पूर्वक सोने वालेदेवताओं का स्मरण करे,रात्रि सूक्त का पाठ करे,अव्यय विष्णु को नमस्कार करके माधिस्थ होकर रात्रि में शयन करे॥८२ सुखसे सोने वाले ये हैं-अगस्त्य,माधव, महावली,मुचकुन्द,कपिल मुनि,आस्तीक,इन पांचों का नाम लेवे॥८३॥मङ्गलीक एक जलसे भरा घड़ाभी सिर की ओर स्थापित करे,

रात्रिसूक्तं जपेत्स्मृत्वादेवांश्चसुखशायिनः ॥ नमस्कृत्याव्ययंविष्णुं समाधिस्थःस्वपेन्निशि ॥ ८२ ॥ अगस्त्योमाधवश्चैवमुचुकुंदोमहाबलः ॥ कपिलोमुनिरास्तीकःपंचैतेसुखशायिनः ॥ ८३ ॥ मांगल्यंपूर्णकुंभंचशिरःस्थानेनिधायच ॥ वैदिकैर्गारुडैर्मंत्रैरक्षांकृत्वास्वपेत्ततः ॥ ८४ ॥ ऋतुकालाभिगामीस्यात्स्वदारनिरतःसदा ॥ पर्ववर्जंव्रजेदेनांतद्व्रतीरतिकाम्यया ॥ ८५ ॥ प्रदोषपश्चिमौयामौवेदाभ्यासेनतौनयेत् ॥ यामद्वयंशयानस्तुब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ८६ ॥ एतत्सर्वमशेषेणकृत्यजातंदिनेदिने ॥ कर्तव्यंगृहिभिःसम्यग्गृहस्थाश्रमलक्षणम् ॥ ८७ ॥ अहिंसासत्यवचनंसर्वभूतानुकंपनम् ॥ शमोदानंयथाशक्तिगार्हस्थ्योधर्मउच्यते

वैदिक गरुड़ सम्बन्धी मन्त्रों द्वारा रक्षा करके सो जावे॥८४॥यदि अपनी स्त्री से रति की कामना हो तो ऋतु काल को देखे, तब स्वस्त्री गमन करे, व्रती पुरुष को पर्व अनुपर्व भी इस काम में देखने चाहिये ॥ ८५ ॥ रात्रि के पिछले दो प्रहर उठकर वेदों के स्वाध्याय में गुजारे । रात्रि के केवल दो प्रहर सोने वाला पुरुष ब्रह्म को प्राप्त होता है ॥ ८६ ॥ इसी प्रकार दिन रात्रि का समस्त कृत्य गृहस्थी प्रतिदिन किया करे ये गृहस्थाश्रम के उत्तम लक्षण हैं ॥ ८७ ॥ अहिंसा, सत्यभाषण, सब प्राणियों

पर दया, शम, यथा शक्ति दान, ये गृहस्थ धर्म कहे हैं ॥ ८८ ॥ पर स्त्री का संसर्ग न हो, अपनी धर्म पत्नी की रक्षा करे बिना दिये कोई वस्तु न लेवे, मद्यमांस भक्षण न करे ॥ ८९ ॥ यह पांच प्रकार का धर्म है, देह धारियों को इसे सदा करते रहना चाहिये ॥ ९० ॥ श्रीनारायण बोले-ये गृहस्थाश्रम के सुन्दर कर्तव्य सब वेदों ने निरूपण किये हैं, हे मुने ! लोकों के हित के

॥ ८८ ॥ परदारेष्वसंसर्गोधर्मस्त्रीपरिरक्षणम् ॥ अदत्तादानविरमोमधुमांसविवर्जनम् ॥ ८९ एषपंचविधो-धर्मोबहुशाखःसुखोदयः । देहिभिर्देहपरमैःकर्तव्योदेहसंभवः ॥ ९० ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ अशेषवेदोदित सच्चरित्रमेतद्गृहस्थाश्रमलक्षणंहि ॥ उक्तं समासेनचलक्षणेनतुभ्यंमुनेलोकहितायसम्यक् ॥ ९१ ॥ इतिश्री बृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेआन्हिककथनंनामएकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥

नारदउवाच ॥ स्तुतापतिव्रतानारीत्वयापूर्वंतपोनिधे ॥ तल्लक्षणानिसर्वाणिसमासेनवदस्वमे ॥ १ ॥ सूतउवाच ॥ नोदितोनारदेनेत्थंपुरातनमुनिःस्वयम् ॥ पतिव्रतायाःसर्वाणिलक्षणान्याहभूसुरः ॥ २ ॥

लिये मैंने तुम्हें संक्षेप से कह सुनाये हैं ॥ ९१ ॥ इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायाँ एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

नारद बोले-हे तपोनिधे ! आपने प्रथम पतिव्रता स्त्री की स्तुतिकी थी, अब कृपया संक्षेप में उसके सब लक्षण कहें ॥१॥ सूतजी बोले-श्रीनारदजी के पूछने पर हे ब्राह्मण गण ! स्वयं श्रीनारायण मुनि पतिव्रता के सब लक्षण सुनाने लगे ॥ २ ॥

श्रीनारायण बोले—नारद सुन--पतिव्रता के क्या लक्षण हैं। नीच स्वभाव का हो ॥ ३ ॥ चाहे वह रोगी हो, पिशाच हो, क्रोधी, हो मद्यप हो, वृद्ध हो, मूर्ख हो गुंगा हो, अन्धा हो, बहिरा हो, ॥ ४ ॥ भयानक हो, निर्धन हो, कदर्य हो, दुष्ट चित्त हो कायर हो परस्त्री लम्पट हो ॥ ५ ॥ साध्वी पत्नी इस प्रकार के दोषी पति की भी देवता की तरह वाणी मन शरीर द्वारा पूजा करे,

श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामिसतीनांव्रतमुत्तमम् ॥ कुरूपोवाकुवृत्तोवासुस्वभावोथवापतिः ॥३॥ रोगान्वितःपिशाचोवाक्रोधनोवाथमद्यपः ॥ वृद्धोवाप्यविदग्धोवामूकोऽधोबधिरोपिवा ॥ ४ ॥ रौद्रोवाथ दरिद्रोवाकदर्यःकुत्सितोपिवा ॥ कातरःकितवोवापिललनालंपटोपिवा ॥ ५ ॥ सततंदेववत्पूज्यःसाध्व्यावा-कायकर्मभिः ॥ नजातुविषमंभर्तुःस्त्रियाकार्यंकथंचन ॥ ६ ॥ बालयावायुवत्यावावृद्धयावापियोषिता ॥ नस्वातंत्र्येणकर्त्तव्यंकिंचित्कार्यंगृहेष्वपि ॥ ७ ॥ अहंकारंविहायाथकामक्रोधौचसर्वदा ॥ मनसोरंजनंपत्युः कार्यंनान्यस्यकुत्रचित् ॥ ८ ॥ सकामंवीक्षिताप्यन्यैःप्रियवाक्यैःप्रलोभिता ॥ स्पृष्टावाजनसंमर्दनविकारमुपै-

उसके साथ भी कभी विरोध न करे ॥ ६ ॥ बालिका हो, युवती हो, अथवा वृद्धा हो स्त्री स्वतन्त्र होकर कभी भी गृह में कार्य नकरे ॥ ७ ॥ अहंकार, काम, क्रोध, त्याग कर ही पत्नी पति के मनको प्रसन्न करती रहे, और कहीं भी मनोरंजन न करे ॥८॥ चाहे अन्य पुरुष उसे काम दृष्टि से भी देखते रहें, प्रिय वचनों द्वारा उसे प्रलोभित भी करें, उसका स्पर्श एवं मर्दन भी करें फिर

भी यदि उसका मन विकार को नहीं प्राप्त हुआ ।। ९ ।। तो वही स्त्री जितने भी स्त्रियों के अङ्गों में रोम होते है उतने सहस्र वर्षों पर्यन्त स्वर्ग में निवास करती है ।। १० ।। यदि पर पुरुष धन का लोभ भी देवे फिर भी मन, वचन कर्म के द्वारा जो परपुरुष का सेवन नहीं करती वह सती लोक भूषण है ।। ११ ।। किसी पुरुष ने दूती के द्वारा प्रार्थना भी की हो बल पूर्वक पकड़

तिया ।। ९ ।। यावंतोरोमकूपाःस्युःस्त्रीणाँगात्रेषुनिर्मिताः ।। तावद्वर्षसहस्राणिनाकंताःपर्युपासते ।।१०।। पुरुषंसेवतेनान्यंमनोवाक्कायकर्मभिः ।। लोभितापिपरेणार्थैःसासतीलोकभूषणा ।। ११ ।। दौत्येनप्रार्थितावापिबलेनविधृतापिवा ।। वस्त्राद्यैर्वासितावापिनैवान्यंभजतेसती ।। १२ ।। वीक्षितावीक्षतेनान्यैर्हासितानहसत्यपि ।। भाषिताभाषतेनैवसासाध्वीसाधुलक्षणा ।। १३ ।। रूपयौवनसंपन्नागीतनृत्येऽतिकोविदा ।। स्वानुरूपंनरंदृष्ट्वानयातिविकृतिंसती ।। १४ ।। सुरूपंतरुणंरम्यंकामिनीनांचवल्लभम् ।। यानेच्छतिपरंकांतंविज्ञे-

भी लिया हो,वस्त्र आभूषणों द्वारा प्रसन्न करने परभी तुल गया हो फिर भी जो उसकी ओर नहीं देखती वह स्त्री सती है ।।१२।। दूसरे देखे किन्तु आप न देखे, दूसरे हंसे आप न हंसे, अन्य पुरुष संभाषण करें किन्तु स्वयं न करे ऐसी स्त्री साधु लक्षण साध्वी है ।। १३ ।। रूप एवं जवानी में सम्पन्न तथा गीत नृत्य में भी अति चतुर जो स्त्री अपने अनुरूप पुरुष को भी देखकर विकार को नहीं प्राप्त होती वही सती साध्वी है ।। १४ ।। सुन्दर रूप वाले मनोहर, स्त्रियों को प्यारे लगने वाले ऐसे परपुरुष को

देखकर भी जो उसकी इच्छा नहीं करती वह महा सती है ॥ १५ ॥ सती स्त्रियों के लिये अपने पति को छोड़कर देवता मनुष्य गन्धर्व कोई भी प्यारा नहीं, पत्नी कभी भी पति का बुरा न करे ॥ १६ ॥ पति के खा लेने पर जो खाती है, दुःखी होने पर जो दुःखी होती है, प्रसन्न होने पर प्रसन्न होती है, विदेश चले जाने पर मलिन वस्त्र पहिनती है ॥ १७ ॥ पति के सो जाने

यासामहासती ॥ १५ ॥ देवोमनुष्योगंधर्वःसतीनांनापरःप्रियः ॥ अप्रियंनैवकर्तव्यंपत्युःपत्न्याकदाचन ॥ ॥ १६ ॥ भुंक्ते भुक्ते यथापत्यौदुःखितेदुःखिताचया ॥ मुदितेमुदितात्यर्थंप्रोषितेमलिनांबरा ॥ १७ ॥ सुप्तेपत्यौचयाशेतेपूर्वमेवप्रबुद्ध्यति ॥ प्रविशेच्चैवयावन्हौयातेभर्तरिपंचताम् ॥ १८ ॥ नान्यंकामयतेचित्ते साविज्ञेयापतिव्रता ॥ भक्तिंश्वशुरयोःकुर्यात्पत्युश्चापिविशेषतः ॥ १९ ॥ धर्मकार्येनुकूलत्वमर्थकार्येपिसं-चये ॥ गृहोपस्करसंस्कारेसक्तयाप्रतिवासरम् ॥ २० ॥ क्षेत्राद्वनाद्वाग्रामाद्वाभर्त्तारंगृहमागतम् ॥ प्रत्युत्था-याभिनंदेतआसनेनोदकेनच ॥ २१ ॥ प्रसन्नवदनानित्यंकालेभोजनदायिनी ॥ भुक्तवंतंतुभर्त्तारंनवदेदप्रि-

पर सोती है, उसके जागने से पहिले जागती है, पति के मर जाने पर जो उसके साथ सती होजाती है ॥ १८ ॥ अपने चित्त में अन्य किसी पुरुष को नहीं आने देती वही पतिव्रता नारी है। सास ससुर की तथा विशेषकर पति की सेवा करती है ॥ १९ ॥ धार्मिक कामों में अनुकूल रहती है, धन के काम में जो धन संचय करती है, दिन रात घर के धन्दों में लगी रहती है ॥ २० ॥ खेत से वन से किंवा गांव से यदि पति घर में आवे तो उसके आगे उठ कर उसका सत्कार आसन जल देकर करे ॥ २१ ॥

प्रसन्न मुख होकर जो समयानुसार नित्य भोजन देती है। भोजन करते हुए पति को अप्रिय कभी नहीं बोलती ॥ २२ ॥ गृह की अधिकारिणी होकर–आसन, दान, भोजन, सम्मान, प्रिय भाषण आदि कृत्यों में चतुर होकर जो गृहस्थ चलाती है वह मुख्य पतिव्रता है ॥ २३ ॥ घर के खर्च के लिये घर के स्वामी ने जितना धन दिया हो उससे घर का खर्च चलाकर भी फिर भी बुद्धि

यंक्वचित् ॥ २२ ॥ आसनेभोजनेदानेसंमानेप्रियभाषणे ॥ दक्षयासर्वदाभाव्यंभार्ययागृहमुख्यया ॥ २३ ॥
गृहव्ययनिमित्तं चयद्द्रव्यंप्रभुणार्पितम् ॥ निर्वृत्यगृहकार्यंसाकिंचिद्बुद्ध्यावशेषयेत् ॥ २४ ॥ त्यागार्थम-
र्पितेद्रव्येलोभात्किंचिन्नधारयेत् ॥ भर्तुराज्ञांविनानैवस्वबंधुभ्योदिशेद्धनम् ॥ २५ ॥ अन्यालापमसंतोषं-
परव्यापारसंकथाः ॥ अतिहासातिरोषंचक्रोधंचपरिवर्जयेत् ॥ २६ ॥ यच्चभर्त्तानपिबतियच्चभर्त्तानखादति ॥
यच्चभर्त्तानचाश्नातितसर्वंतद्वर्जयेत्सती ॥ २७ ॥ तैलाभ्यंगंतथास्नानंशरीरोद्वर्तनक्रियाम् ॥ मार्जनंचैवदं-

से उससे कुछ बचा लेना यह उत्तम स्त्री का काम है ॥ २४ ॥ दान के लिये जितना धन स्वामी देवे उससे कुछ भी न बचा रखे, पति की आज्ञा के बिना अपने बन्धुओं को कुछ भी न दे ॥ २५ ॥ दूसरों से बोलना, संतोष न करना दूसरों के सम्बन्ध की बात छेड़ बैठना अत्यन्त हंसना, क्रोध करना रूठ जाना, उत्तम पतिव्रता स्त्री ये सब बातें न करें ॥ २६ ॥ जिस वस्तु को पति नही खाता एवं जिसे नहीं पीता, और जिसे वह अभोज्य समझता है उसे सती स्त्री सर्वथा त्याग देवे ॥ २७ ॥ सती स्त्री अपने

पति को रिझाने के लिये ही, तेल साबुन, स्नान, शारीरिक श्रृंगार, उबटन दन्त मंजन आदि करें ॥ २८ ॥ हे मुनिजी त्रेतायुग से लेकर आज तक स्त्रियों को महीने महीने ऋतु आती है, उस ऋतु के तीन दिन छोड़कर शुद्ध होकर चौथे दिन घर के काम में लगे ॥ २९ ॥ ऋतु के पहिले दिन उस स्त्री की चाण्डाली संज्ञा है दूसरे ब्रह्मघातिनी तीसरे दिन धोबिन चौथे दिन शुद्ध

तानांकुर्यात्पतिमुदेसती ॥ २८ ॥ त्रेताप्रभृतिनारीणाँमासिमास्यार्त्तवंमुने ॥ तदादिनत्रयंत्यक्त्वाशुद्धास्याद्गृहकर्मणि ॥ २९ ॥ प्रथमेहनिचांडालीद्वितीयेब्रह्मघातिनी ॥ तृतीयेरजकीप्रोक्ताचतुर्थेहनिशुद्ध्यति ॥ ॥ ३० ॥ स्नानंशौचंतथागानंरोदनंहसनंतथा ॥ यानमभ्यंजनंनारीद्यूतंचैवानुलेपनम् ॥ ३१ ॥ दिवास्वप्नंविशेषेणतथावैदंतधावनम् ॥ मैथुनंमानसंवापिवाचिकंदेवतार्चनम् ॥ ३२ ॥ वर्जयेच्चनमस्कारंदेवतानांरजस्वला ॥ रजस्वलायाःसंस्पर्शंसंभाषाचतयासह ॥ ३३ ॥ त्रिरात्रंस्वमुखंनैवदर्शयेच्चरजस्वला ॥ स्ववाक्यंश्रावयेन्नैवयावत्स्नातानशुद्धतिः ॥ ३४ ॥ स्नात्वान्यंपुरुषंनारीनपश्येच्चरजस्वला ॥ ईक्षेतभास्करंदेवंब्रह्म-

होती है ॥ ३० ॥ उन दिनों में स्नान, शौच, गान, रोना, हंसना, सवारी करना सुरमा करना तेल लगाना, स्त्रियों के साथ द्यूत खेलना चन्दन लगाना ॥ ३१ ॥ दिन के समय सोना, दाँतों की सफाई, मैथुन (पुरुष संग) वाणी से देव पूजन ॥ ३२ ॥ देवताओं को नमस्कार आदि इन बातों को रजस्वला स्त्री त्याग देवे । रजस्वला का स्पर्श एवंउसके साथ संभाषण भी न करे॥ ३३॥ प्रत्युत तीन रातें तो अपना मुख तक न दिखावें जब तक शुद्ध नहीं हो लेती तब तक अपना बचन भी न सुनावे ॥ ३४ ॥

रजस्वला स्त्री स्नान करके अन्य पुरुष को न देखे पहिले सूर्य देव का दर्शन करे फिर पंचगव्यपान करे अथवा अपनी शुद्धि के लिये दुग्ध पान करे, इसी उपदेश पर चलने वाली उत्तम स्त्री होती हैं ॥ ३६ ॥ यदि स्त्री गर्भिणी हो तब भी अपने नियमों पर तत्पर रहे, उन दिनों वस्त्राभूषणों से अलंकृत रहे पति से प्यार तथा हित करे ॥ ३७ ॥ सदा हंस मुख रहे अपनी रक्षा के ध्यान

कुर्वंततःपिबेत् ॥ ३५ ॥ केवलंपंचगव्यंवाक्षीरंवात्मविशुद्धये ॥ यथोपदेशंनियतावर्तयेतवरांगना ॥३६॥ गर्भिणीचेद्भवेन्नारीतदानियमतत्परा ॥ अलंकृतासुप्रयताभर्तुःप्रियहितेरता ॥ ३७ ॥ तिष्ठेत्प्रसन्नवदनास्वधर्मनिरताशुचिः ॥ कृतरक्षासुभूषाचवास्तुपूजनतत्परा ॥ ३८ ॥ कुस्त्रीभिर्नाभिभाषेतशूर्पवातंचवर्जयेत् ॥ मृतवत्सादिसंसर्गंपरपाकंचसुंदरी ॥ ३९ ॥ नबीभत्संकिंचिदीक्षेनरौद्रांशृणुयात्कथाम् ॥ गुरुंवात्युष्णमाहाहारमजीर्णंनसमाचरेत् ॥ ४० ॥ अनेनविधिनासाध्वीशोभनंपुत्रमाप्नुयात् ॥ अन्यथागर्भपतनंस्तंभनंवाप्रपद्यते ॥ ४१ ॥ हीनांनिजगुणैरन्यांसपत्नीर्नैवगर्हयेत् ॥ ईर्ष्यारागसमुद्भूतेविद्यमानेपिमत्सरे ॥ ४२ ॥

में रहे सुन्दर भूषित रहे वास्तु पूजन करे ॥ ३८ ॥ दुष्टि स्त्रियों से भाषण न करे सूप (छाज) की वायु अपने ऊपर न आने दे । मृत सन्तान स्त्री के संसर्ग से दूर रहे दूसरे के पाक से भी दूर रहे ॥ ३९ ॥ भयानक तथा घृणित कोई वस्तु न देखे, न कोई भयानक कथा या बात सुने, भारी, गर्म, पचने वाले भोजन न करे ॥ ४० ॥ इस विधि से चलने वाली साध्वी नारी उत्तम पुत्र पाती है । अन्य था गर्भ पतन किंवा स्तंभन का भय रहता है ॥ ४१ ॥ जो अपने गुणों से हीन अथवा सौत हो

उसके साथ लड़ाई झगड़ा न करे चाहे ईर्ष्या, राग, मत्सर भी विद्यमान हो ॥ ४२ ॥सौतें आपस में बुराई न करें दूसरों के नाम गायन न करे न किसी दूसरे के सम्बन्ध में बात चीत करें ॥ ४३ ॥ पति से दूर हाकर न रहे, अपने स्वामी के सन्निधान रहे, जो भी पत्नी के लिये भूभाग निर्दिष्ठ हो उसमें रहकर सदा पति के अनुकूल रहें कभी विमुख न हो ॥ ४४ ॥ अपनी इच्छा से

अप्रियंनैवकर्त्तव्यंसपत्नीभिःपरस्परम् ॥ नगायेदन्यनामानिनकुर्यादन्यवर्णनम् ॥ ४३ ॥ नवसेद्दूरतःपत्युः स्थेयंवल्लभसंन्निधौ ॥ निर्दिष्टेचमहीभागेवल्लभाभिमुखावसेत् ॥ ४४ ॥ नावलोक्यादिशःस्वैरंनावलोक्यः परोजनः ॥ विलासैरवलोक्यंस्यात्पत्युराननपंकजम् ॥ ४५ ॥ कथ्यमानाकथाभर्त्राश्रोतव्यासादरंस्त्रिया ॥ पत्युःसंभाषणस्याग्रेनान्यत्संभाषयेत्स्वयम् ॥ ४६ ॥ आहूतासत्वरंगच्छेद्रतिस्थानंरतोत्सुका ॥ पत्यौगायति- सीत्साहंश्रोतव्यंहृष्टचेतसा ॥ ४७ ॥ गायंतंचपतिंदृष्ट्वाभवेदानंदनिर्वृता ॥ भर्तुःसमीपेनस्थेयंसोद्वेगंव्यग्रचि-

स्वतन्त्र रूप से कही सैर करने को न निकल जाय पर पुरुष की ओर न देखें, यदि विलास पूर्वक देखना हो तो अपने पति के मुख कमल को देखे ॥ ४५ ॥ यदि पति कोई बात कहने लगे तो पत्नी उसे आदर से सुने पति की बात काट कर स्वयं बीच में न बोलने लग जाय ॥ ४६ ॥ रमण करने की इच्छा से युक्त पत्नी पति के बुलाने पर झट पट रमण स्थान पर चली जाय। पति के गायन करने पर उसे उत्साह के साथ बड़े प्रेम से सुने ॥ ४७ । पति को गाता हुआ देखकर आनन्द से रीझ जाय। पति के

समीप उदासीन एवं व्यग्र चित्त होकर कभी न ठहरे ॥ ४८ ॥ लड़ने झगड़ने वाले पति को भी प्रिय समझकर उससे लड़ाई झगड़ा न कर बैठे, चाहें पति निन्दा भी करे फटकारे किंवा ताड़ना भी करे, वही पतिव्रता होती है ॥ ४९ ॥ पतिद्वारा दुःखित भी की जाय फिर भी पति को प्रिय समझ गले लगाले। न ऊंचा रोवे, न उसके प्रति चिल्लावे ॥ ५० ॥ अपने घर

त्वया ॥ ४८ ॥ कलहोनविधातव्यःकलियोग्येप्रियेस्त्रिया ॥ भर्त्सितानिंदितात्यर्थंताडितापिपतिव्रता ॥ ॥ ४९ ॥ व्यथितापिभयंत्यक्त्वाकंठेगृह्णीतवल्लभम् ॥ उच्चैर्नरोदनंकुर्यान्नैवाक्रोशेच्चतंप्रति ॥ ५० ॥ पलायनंनकर्तव्यंनिकर्तव्यंनिजगेहाद्बहिःस्त्रिया ॥ उत्सवादिषुबंधूनांसदनंयदिगच्छति ॥ ५१ ॥ लब्ध्वानुज्ञांतदापत्युर्गच्छेदध्यक्षरक्षिता ॥ नवसेत्सुचिरंतत्रप्रत्यागच्छेद्गृहंसती ॥ ५२ ॥ प्रस्थानाभिमुखेपत्यौनासन्मंगलभाषिणी ॥ नवार्योसौनिषेधोक्त्यानकार्यंरोदनंतदा ॥ ५३ ॥ अकृत्वोद्वर्तनंनित्यंपत्यौदेशांतरंगते ॥

से कभी भी स्त्री भाग न जावे। यदि बन्धु बान्धवों में किसी के घर भी उत्सव आदियों में जाना पड़े तो ॥ ५१ ॥ पति की आज्ञा से पति की रक्षा में ही वहां जाय। वहां जाकर देर तक न रहे शीघ्रता पूर्वक वह सती घर में लौट आवे ॥ ५२ ॥ पति कहीं विदेश जा रहा हो उसके सम्मुख आकर कभी अमङ्गल मय वचन न बोले, और न रोकने के लिये कोई शब्द कहे एवं रोवे भी नहीं ॥ ५३ ॥ पति के विदेश चले जाने पर उबटन साबुन आदि न लगावे अपने जीवन रक्षा के लिये अनिन्दित कर्म

कर्म करती रहे ॥ ४५ ॥ सास ससुर के समीप अथवा कहीं अन्यत्र न सोवे, प्रतिदिन अपने पति के कुशल समाचार जानने के प्रयत्न में रहे ॥ ५५ ॥ पति के कुशलक्षेम पाने के लिये पत्र, अथवा कोई दूतया सन्देश भेजे, प्रसिद्ध देवताओं के समीप अपने पति के कुशल की याचना करे ॥ ५६ ॥ पति के विदेश जाने पर सती नारी इस प्रकार से रहती रहे अपने अंगों को इतना

वधूर्जीवनरक्षार्थकमकुर्यादनिंदितम् ॥ ५४ ॥ श्वश्रू श्वशुरयोःपार्श्वेनिद्राकार्यानचान्यतः ॥ प्रत्यहंपतिवार्ताचितयान्वेष्याप्रयत्नतः ॥ ५५ ॥ दूताःप्रस्थापनीयाश्चपत्युःक्षेमोपलब्धये ॥ देवतानाँप्रसिद्धानांकर्त्तव्यमुपयाचनम् ॥ ५६ ॥ एवमादिविधातव्यंसत्याप्रोषितकांतया ॥ अप्रक्षालनमंगानांमलिनांबरधारणम् ॥ ॥ ५७ ॥ तिलकांजनहीनत्वंगंधमाल्यविवर्जनम् ॥ नखरोम्णामसंस्कारोदशनानाममार्जनम् ॥ ५८ ॥ उच्चैर्हासःपरैर्नर्मपरचेष्टाविचिंतनम् ॥ स्वेच्छापर्यटनंचैवपरपुंसांगमर्दनम् ॥ ५९ ॥ अटनंचैकवस्त्रेणनिर्लज्जत्वंयथागतिः ॥ इत्यादिदोषाःकथितायोषितोनित्यदुःखदाः ॥ ६० ॥ निवृत्यगृहकार्याणिहरिद्रालेपने-

साफ न रखे मलिन वस्त्र पहिने रहे ॥ ५७ ॥ तिलक बिन्दी सुरमा काजल आदि न लगावे, सुगन्धित पुष्प माला न धारे, नाखून रोम बाल न काटे, न दान्तों में मिस्सी आदि लगावे ॥ ५८ ॥ न ऊंचा हंसे, न दूसरों से हास्य विनोद करे, दूसरों के कामों की तरफ भी दृष्टि न डाले, न स्वेच्छा से घूमे, न परपुरुषों से अपने अङ्गों का स्पर्श होने दे ॥ ५९ ॥ एक वस्त्र धारण करके घूमना चलना भी स्त्रियों के लिये निर्लज्जता है, इत्यादि दोष स्त्रियों के लिये नित्य दुःखदायक हैं ॥ ६० ॥ पति के

आजाने पर घरके काम धन्दों से निबट कर हरिद्रा आदि का अपने अङ्गों पर उबटन लगावे, साबुन आदि से शुद्ध होकर फिर शृंगार करे ॥ ६१ ॥ हंसते हुए मुख कमल से प्रियपति के समीप जावे। इस प्रकार के उत्तम स्वभाव से मन, वाणी, देह के द्वारा पतिसेवा में रहे ॥ ६२ ॥ जब पति बुलावे तब गृह कार्य छोड़कर भी झट पहुंचे। विनय पूर्वक पूछे, स्वामिन्! क्या आज्ञा

स्तनुम् ॥ प्रक्षाल्यशुचितोयेनकुर्यान्मंडनमुज्ज्वलम् ॥ ६१ ॥ समीपंप्रेयसोगच्छेद्धिकसन्मुखपंकजा ॥ अने-
ननारीवृत्तेनमनोवाग्देहसंयुता ॥ ६२ ॥ आहूतागृहकार्याणित्यक्त्वागच्छेच्चसत्वरम् ॥ किमर्थंव्याहृता-
स्वामिन्सप्रसादोविधीयताम् ॥ ६३ ॥ माचिरंतिष्ठतेद्वारिनद्वारमुपसेवयेत् ॥ स्वामिनादापितंकिंचित्कस्मै-
चिन्नददात्यपि ॥ ६४ ॥ सेवयेद्भर्तुरुच्छिष्टमिष्टमन्नफलादिकम् ॥ महाप्रसादइत्युक्त्वामोदमानानिरंतरम् ॥ ६५ ॥
सुखसुप्तंसुखासीनंरममाणंयदृच्छया ॥ आतुरेष्वपिकार्येषुपतिंनोत्थापयेत्क्वचित् ॥ ६६ ॥ नैकाकिनीक्व-

है, कृपया आज्ञा करें ॥ ६३ ॥ अपने दरवाजे पर भी देर तक न ठहरी रहे, न दरवाजे पर जाकर बैठ जाय, पति से दी हुई वस्तु किसी को न दे ॥ ६४ ॥ पति के झूठे मीठे अन्न फल आदि जो कुछ भी हो उसे प्रसाद बड़ी कृपा समझ कर प्रसन्नता से निरंतर ग्रहण करे ॥ ६५ ॥ जिस समय पति सुख से सो रहा हो तो आप आराम से चुपचाप बैठ जावे, बड़ा काम होने पर भी न उठावे। पति यदि आराम में बैठे हुए हों तो उन्हें व्याकुल न करे ॥ ६६ ॥ न अकेली कहीं जावे, न नग्न होकर नहावे,

अपने पति से विद्वेष करने वाली नारी से वह पतिव्रता बोले तक नहीं ॥ ६७ ॥ ऊखल, मूसल, देहली, पत्थर, चरखा, बुहारी इनमें से किसी पर भी पतिव्रता स्त्री न बैठे ॥ ६८ ॥ यदि तीर्थ स्नान करने की इच्छा हो तो पति के चरण को धोकर वह जल पीले, शंकर हो किंवा विष्णु हो स्त्री के लिये तो इनसे बढ़ कर पति है ॥ ६९ ॥ जो नारी पति की आज्ञा न मानकर कोई

चिद्गच्छेन्ननग्नास्नामाचरेत् ॥ भर्तृविद्वेषिणींनारींसाध्वींनोभावयेत्क्वचित् ॥ ६७ ॥ नोलूखलेनमुसलेनवर्धिन्यांदृषद्यपि ॥ नयंत्रकेपिदेहल्यांसतीचोपविशेत्क्वचित् ॥ ६८ ॥ तीर्थस्नानार्थिनीनारीपतिपादोदकंपिबेत् ॥ शंकरादपिविष्णोर्वापतिरेवाधिकःस्त्रियाः ॥ ६९ ॥ व्रतोपवासनियमंपतिमुल्लंघ्ययाचरेत् ॥ आयुष्यंहरतेभर्तुर्मृतानरकमृच्छति ॥ ७० ॥ उक्ताप्रत्युत्तरंदद्यान्नारीक्रोधेनतत्परा ॥ सरमाजायतेग्रामेशृगालीनिर्जनेवने ॥ ७१ ॥ स्त्रीणांहिपरमश्चैकोनियमःसमुदाहृतः ॥ अभ्यर्च्यभर्तुश्चरणौभोक्तव्यंचसदास्त्रिया ॥ ॥ ७२ ॥ याभर्तारंपरित्यज्यमिष्टमश्नातिकेवलम् ॥ उलूकीजायतेक्रूरावृक्षकोटरशायिनी ॥ ७३ ॥ या-

भी व्रत उपवास का नियम धार लेती है, वह पति की आयु हर रही है, और मरने पर नरक में पड़ती है ॥ ७० ॥ पति यदि किसी कामके लिये कहे तो उसे जो कड़क कर क्रोध से जवाब दे वह गाँव में कुतिया तथा वनमें गीदड़ी का जन्म पाती है ॥ ७१ ॥ स्त्रियों के लिये तो यही एक ही उत्तम नियम कहा गया है जो सदा अपने पति के चरण पूजकर भोजन करे ॥ ७२ ॥ जो अपने

पति से छुपकर केवल आप ही मिष्ठान्न खा लेती है वह वृक्ष के खोल में रहने वाली महाक्रूरा उलूकी जन्मती है ॥ ७३ ॥ जो स्त्री पति के बिना अकेली एकान्त में घूमने की रसिका हो जाती है वह अपनी विष्ठाखाने वाली ग्रामशूकरी छिपकली किंवा गोधा हो जाती है ॥ ७४ ॥ जो अपने पति को हुं हुं करके अप्रिय बोलती है वह गूंगी हो जन्म लेती है । जा सौत से सदा

भर्तारंसमुत्सृज्यरहश्चरतिकेवलम् ॥ ग्रामेवासूकरीभूयाद्वल्गुलीवास्वविट्भुजा ॥ ७४ ॥ याहुंकृत्याप्रियंब्रूते सामूकाजायतेखलु ॥ यासपत्नींसदेर्ष्येतदुर्भगासान्यजन्मनि ॥ ७५ ॥ दृष्टिंविलुप्यभर्तुर्याकिंचिदन्यंसमीक्षते ॥ काणावाविमुखीवापिकुरूपाचैवजायते ॥ ७६ ॥ बाह्यादागतमालोक्यत्वरिताचजलासनैः ॥ तांबूलैर्व्यजनैश्चैवपादसंवाहनादिभिः ॥ ७७ ॥ अतिप्रियतरैर्वाक्यैर्भर्तारंयासुसेवते ॥ पतिव्रताशिरोरत्नंसानारीकथिताबुधैः ॥ ७८ ॥ भर्तादेवोगुरुर्भर्त्ताधर्मतीर्थव्रतानिच ॥ तस्मात्सर्वंपरित्यज्यपतिमेकंसमर्चयेत् ॥

ईर्ष्या रखती है वह अगले जन्म में दरिद्रा होती है ॥ ७५ ॥ जो स्त्री पति की दृष्टि को धोका देकर अन्य पुरुष को देखती है वह कानी कुरूपा एवं गन्दे मुंह वाली होती है ॥ ७६ ॥ पत्नी को तो चाहिये कि जब भी पति कहीं से आवे तो उसके सम्मानार्थ जल्दी२जल का लोटा पैर धोने को बैठनेको आसन ले आवे पैर धोकर आसन बिछाकर उसे बिठावें,स्वयं उसे पंखा करे ताम्बूल दे चरणों को कोमल हाथों से संवाहन करे ॥ ७७ ॥ इस प्रकार अत्यन्त प्रिय वचनों से जो पतिकी सेवा करती है उस नारी को बुद्धिमान् पतिव्रताओं में शिरोमणि कहते हैं ॥ ७८ ॥ पत्नी के लिये देवता, गुरु, धर्म, तीर्थ, व्रत आदि सब कुछ पति

ही है अतः और सब कुछ त्यागकर केवल एक पति का पूजन करे ॥ ७९ ॥ जिस प्रकार जीवहीन होने से शरीर झट अशुद्ध होजाता है उसी प्रकार पतिहीन होने से चाहे वह खूब स्नान भी करती रहे फिर भी वह सदा अपवित्र रहती है ॥ ८० ॥ सब प्रकार के अमङ्गलों में विधवा नारी अत्यन्त अमङ्गलरूप है। विधवा यदि नजर आजाय तो किसी काम में सिद्धि नहीं होती॥८१॥

॥ ७९ ॥ जीवहीनोयथादेहःक्षणादशुचितांव्रजेत् ॥ भर्तृहीनातथायोषित्सुस्नाताप्यशुचिःसदा ॥ ८० ॥ अमंगलेभ्यःसर्वेभ्योविधवाह्यत्यमंगला ॥ विधवादर्शनात्सिद्धिर्जातुक्वापिनजायते ॥ ८१ ॥ विहायमातरं-चैकामाशीर्वादप्रदायिनीम् ॥ अन्याशिषमपिप्राज्ञस्त्यजेदाशीविषोपमाम् ॥ ८२ ॥ कन्यांविवाहसमयेवाच-येयुरितिद्विजाः ॥ भर्तुःसहचरीभूयाज्जीवतोऽजीवतोपिवा ॥ ८३ ॥ तस्माद्भर्तानुयातव्योदेहवच्छायया-स्वया ॥ एवंसत्यासदास्थेयंभक्त्यापत्यनुकूलया ॥ ८४ ॥ व्यालग्राहीयथाव्यालंबिलादुद्धरतेबलात् । एवं

आशीर्वाद देने वाली माता को छोड़कर अन्य सबका आशीर्वादविष समान समझे,विधवा यदि कुई प्रकारके आशीर्वादभी देवे उसको ग्रहणन करे।८२।कन्या के विवाह होते समय ब्राह्मण लोग कन्या को यही शिक्षा दिया करतेहैंकि तू सदा भर्ताकीसहचरीहोकर रहना, पतिके मरजानेपर उसकेसाथ सती होजाना॥८३॥अतः पति की छायाकी भान्ति पत्नी रहे यही सतीके लक्षणहैंकि वह सदा भक्ति से पतिके अनुकूल रहे॥८४॥ जिस प्रकार सांप पकड़ने वाला बाँबी से भी साप बल पूर्वक निकाल लेता है। उसी प्रकार सती स्त्री भी

यमदूतों के हाथ से पति को छीन कर स्वर्ग में ले जाती है ॥ ८५ ॥ यमदूत भी सती स्त्री को देखते ही दूर से भाग जाते हैं, और उस के पापाचारी दुष्ठकर्मा पतित पति को छोड़ जाते हैं ॥ ८६ ॥ पतिव्रता सतो स्त्री जितने कि उसके शरीर के रोम हैं उतने ही करोड दस हजार वर्षों तक स्वर्ग में जाकर पति के साथ सुख भोगती हैं ॥ ८७ ॥ दुराचारिणी स्त्रियाँ तो सतीत्त्व नष्ठ कर

मुत्क्रम्यदूतेभ्यःपतिंस्वर्गंनयेत्सती ॥ ८५ ॥ यमदूताःपलायंतेमतीमालोक्यदूरतः ॥ अपिदुष्कृतकर्माणमुत्सृज्यपतितंपतिम् ॥ ८६ ॥ यावत्स्मलोमसंख्यास्तितावत्कोटचयुतानिच ॥ भर्त्रास्वर्गसुखंभुंक्ते रममाणापतिव्रता ॥ ८७ ॥ शीलभंगेनदुर्वृत्ताःपातयंतिकुलद्वयम् ॥ पितुःकुलंतथापत्युरिहामुत्रचदुःखिताः ॥८८॥ अनुयातिनभर्तारंयदिदैवात्कथंचन ॥ तत्रापिशीलंसंरक्ष्यशीलभंगात्पतत्यधः ॥ ८६ ॥ तद्भंगुण्यात्पितास्वर्गात्पतिःपततिनान्यथा ॥ विधवाकबरीबंधोभर्तृबंधायजायते ॥ ६० ॥ शिरसोवपनंकार्यंतस्माद्विध

देने से पिता की तथा पति की दोनों कुल डुबा देती हैं और स्वयं इस लोक तथा परलोक में दुःख उठाती रहती हैं ॥ ८८ ॥ यदि किसी कारण वस पत्नी सती न हो सके तो अपने सतीत्व धर्म की रक्षा अवश्य करे अन्यथा उसका अधः पतन होता है ॥ ८६ ॥ स्त्री के पतन होजाने से उसके पिता तथा पति दोनों का स्वर्ग से पतन होजाता है। विधवा स्त्री अपनी वेणी कभी न बान्धे, उसके वेणी वन्धन से--उसके पति का वन्धन होता है ॥६०॥ विधवा स्त्री को तो सर्वदा के लिये बालों का मुण्डन कराना चाहिये।

वह एक ही समय आहार करे, दूसरे समय कभी नहीं ॥ ६१ ॥ विधवा कभी पलंग पर न सोवे, नहीं तो उसके पति का स्वर्ग से पतन होता है, पति के सुख की इच्छा से इसी कारण उसे भूमि पर सदा सोना चाहिये ॥ ६२ ॥ न वह अंगों को उबटन करे एवं न वह ताम्बूल खावे, और सुगन्धित पदार्थों का सेवन भी न करे ६३॥ प्रतिदिन कुशा, तिल जल से पतिके लिये तर्पण करे

वयासदा ॥ एकाहारःसदाकार्योनद्वितीयःकदाचन ॥ ६१ ॥ पर्यंकशायिनीनारीविधवापातयेत्पतिम् ॥ तस्माद्भूशयनंकार्यंपतिसौख्यसमीहया ॥ ६२ ॥ नैवांगोद्वर्तनंकार्यंनतांबूलस्यभक्षणम् ॥ गंधद्रव्यस्यसंभोगोनैवकार्यस्तयाक्वचित् ॥ ६३ ॥ तर्पणंप्रत्यहंकार्यभर्तुःकुशतिलोदकैः ॥ तत्पितुस्तत्पितुश्चापिनामगोत्रादिपूर्वकम् ॥ ६४ ॥ श्वेतवस्त्रं सदाधार्यमन्यथारौरवंव्रजेत् ॥ इत्येवंनियमैर्युक्ताविधवापिपतिव्रता ॥६५॥ श्रीनारायणउवाच ॥ नैतादृशंदैवतमस्तिकिंचित्सर्वेषुलोकेषुसदैवतेषु ॥ यदापतिस्तुष्यतिसर्वकामाँल्लभ्यात्प्रकामंकुपितश्चहन्यात् ॥ ६६ ॥ तस्मादपत्यंविविधाश्चभोगाःशय्यासनान्यद्भुतभोजनानि ॥ वस्त्राणिमाल्या

उसमें उसके पितामह तथा पिता का गोत्र के साथ नाम लेवे ॥ ६४ ॥ श्वेत वस्त्र धारण करे अन्यथा वह रौरव नरक में जाती है इस प्रकार के नियमों पर चलने वाली विधवा भी पतिव्रता होती है ॥ ६५ ॥ श्रीनारायण बोले-सारे लोको में एवं समस्त देवताओं में पति के समान उसके लिये और कोई देवता नहीं । पति की प्रसन्नता से उसके समस्त काम सिद्ध होते हैं पति के कुपित होने पर उसके समस्त काम नष्ठ हो जाते हैं ॥ ६६ ॥ केवल पति से ही स्त्री को सन्तान, अनेकों पदार्थ, शय्या, आसन, उत्तम

भोजन, वस्त्र, मालाएं आभूषण, सुगन्धित पदार्थ, प्राप्त होते हैं, इस लोक में तथा परलोक में विविध कीर्ति प्राप्त होती है ॥६७॥

इति श्रीपुरुषोत्तम मास महात्म्ये भाषाटीकायां त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

सूतजी बोले—इस प्रकार जब नारद जी ने पतिव्रता स्त्री के धर्म सुने-तब कुछ और भी सुनने की इच्छा से वे मुनिजी

नितथैवगंधाःस्वर्गेचलोकेविविधाचकीर्तिः ॥ ६७ ॥ इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपतिव्रताधर्मनिरूपणेत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

सूतउवाच ॥ इत्थंपतिव्रताधर्ममाकर्ण्यनारदोमुनिः ॥ किंचित्प्रष्टुमनाविप्रामुनिमाहपुरातनम् ॥ १ ॥ नारदउवाच ॥ सर्वदानाधिकंकांस्यसंपुटंपरिकीर्तितम् ॥ एतत्कारणमव्यक्तं वदमेबदरीपते ॥ २ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एकदैतद्व्रतंब्रह्मन्चीर्णंकरदुमापुरा ॥ तदाऽपृच्छन्महादेवं किंदेयंदानमुत्तमम् ॥ ३ ॥ येनसंपूर्णतांयातिव्रतंमेपौरुषोत्तमम् ॥ तन्मेवददयासिंधोसर्वेषांहितहेतवे ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वामनसिध्यायन्ध्यायञ्छ्रीपु-

से बोले ॥ १ ॥ श्रीनारद बोले—हे बदरीनाथ ! आपने जो सब प्रकार के दानों में कास्य पात्र के सम्पुट का दान अधिक कहा है उसका क्या कारण है ? यही कहें ॥ २ ॥ श्रीनारायण बोले-हे ब्रह्मन् ! सुनिये एक बार पहिले इस व्रत को श्रीपार्वती ने धारण किया था तब उन्होंने भी श्रीमहादेवजी से दान के विषय में पूछा था ॥ २ ॥ पार्वतीजी ने कहा था-कि कृपासिन्धो ! इस व्रत की समाप्ति के लिये कौन सा दान करना उत्तम है ॥ ४ ॥ यह सुनकर शंकरजी ने अपने मन में श्रीपुरुषोत्तम भगवान् का ध्यान

किया तब सब लोकों का भला चाहने वाली श्रीपार्वती जी से बोले ॥ ५ ॥ श्रीमहादेव जी बोले — हे अपर्णे ! श्रीपुरुषोत्तम व्रत की पूर्ति करने में उत्तम दान करने की समर्था ही नहीं ॥ ६ ॥ हे पर्वत पुत्रि-जो दान श्रीकृष्ण के परम प्रिय महीनां में करने के लिये उत्तम कहा है वह तो आज कल गौण होगया है ॥ ७ ॥ इसी कारण अब वैसा दान तो कहीं भी दिखाई नहीं देता जिससे

रुषोत्तमम् ॥ उमामजीगदच्छंभुःसर्वलोकहितैषिणीम् ॥ ५ ॥ श्रीमहादेवउवाच ॥ नशक्यंकिंचिदेवास्ति-दानंश्रीपुरुषोत्तमे ॥ व्रतपूर्णविधिंकर्तुमपर्णेऽद्यंदशिक्वचित् ॥ ६ ॥ यद्यद्दानंगिरिसुतेह्युत्तमंपरिकीर्तितम् ॥ श्रीकृष्णवल्लभेमासितत्सर्वंगौणतांगतम् ॥ ७ ॥ तस्मादेतादृशंदानंनैवास्तिक्वापिसुन्दरि ॥ येनतेव्रतसंपूर्तिर्भवेच्छ्रीपुरुषोत्तमे ॥ ८ ॥ पुरुषोत्तममासेस्मिन्व्रतसंपूर्णहेतवे ॥ ब्रह्मांडसंपुटाकारंतदहंदयेमंगने ॥ ९ ॥ नशक्यंतत्तुकेनापिदातुंक्वापिवरानने ॥ तस्मादेतत्प्रतिनिधिंकृत्वाकांस्यसंपुटम् ॥१०॥ तन्मध्येपूरयित्वैवःपूपांस्त्रिंशन्मितान्मुदा ॥ सप्ततंतुभिरावृत्यसंपूज्यविधिवत्प्रिये ॥ ११ ॥ देयंविप्रायविदुषेव्रतसंपूर्तिहेतवे ॥

कि तुम्हारे इस पुरुषोत्तम व्रत की पूर्ति हो ॥८॥ इस व्रत की पूर्ति में जो सम्पुट के आकार में ब्रह्माण्ड है हेअङ्गने! उसके आकार का दान किया जा सकता है ॥ ९ ॥ हेवरानने ! आज कल तो कहीं भी वैसा दान नहीं किया जा सकता, इसी कारण उसका प्रतिनिधि कांसी का सम्पुट (परात) बनवावे ॥ १० ॥ उसमें बड़ी प्रसन्नता से तीस संख्या में गिनकर मालपुआ रखे उसे सात तागों से लपेटे, विधि से पूजन करे ॥ ११ ॥ हे प्रिये ! वह परात व्रत की पूर्ति के लिये किसी वेदवेता विद्वान् ब्राह्मण को दे ।

वैभय होने पर ऐसी तीस परात दान करे ॥ १२ ॥ इस प्रकार श्रीमहादेवजी के परम उपकारक मनोहर वचन सुनकर, सब का हित चाहने वाली पार्वती जी परम प्रसन्न हुई ॥ १३ ॥ तब श्रीपार्वतीजीने तीस विद्वान् ब्राह्मणों को कांस्य के परातों में तीस २ मालपुआ भरके दान कर दिये, इससे व्रत की पूर्णता होजाने से श्रीपार्वतीजी परम प्रसन्न हुईं ॥ १४ ॥ श्रीसूतजी बोले-हे ब्राह्मण

एवंत्रिंशन्मितान्येवदेयानिसतिवैभवे ॥ १२ ॥ इत्याकर्ण्यवचोरम्यंधूर्जटेरुपकारकम् ॥ अबीभवदुमाहृष्टा-सर्वलोकहितैषिणी ॥ १३ ॥ त्रिंशत्कांस्यानिविद्वद्भ्यःसंपुटानिव्वतीर्यसा ॥ पूर्णंव्रतविधिंकृत्वामुमोदातीव नारद ॥ १४ ॥ सूतउवाच ॥ इत्याकर्ण्यमुनिर्विप्रानारायणवचोऽमृतम् ॥ पुनराहातितृप्तोसौनामंनामंपुनः पुनः ॥ १५ ॥ नारदउवाच ॥ सर्वेभ्यःसाधनेभ्योयंमासः श्रीपुरुषोत्तमः ॥ वरीयान्निश्चितोमेद्यश्रुत्वामाहा-त्म्यमुत्तमम् ॥ १६ ॥ श्रुत्वापिजायतेभक्त्यामहापापक्षयोनृणाम् ॥ किंपुनःश्रद्धयाकर्तुर्विधिनार्चेतमेमतिः ॥ १७ ॥ अतःपरंनकिंचिन्मेश्रोतव्यमवशिष्यते ॥ पीयूषांत्यंतलंतृप्तोनान्यत्तोयंसमीहते ॥ १८ ॥ सूतउ-

गण ! इस प्रकार नारायण के बचन सुनकर बार बार प्रणाम करते हुए नारदजी फिर कहने लगे ॥ १५ ॥ श्री नारदजी बोले-इस प्रकार श्रीपुरुषोत्तम मास का महात्म्य सुनकर मैंने तो आज यही निश्चय किया है कि अन्य सब साधनों में इसका व्रत सर्व श्रेष्ठ है ॥ १६ ॥ इसके महात्म्य भक्ति से सुनने से भी मनुष्यों के महा पाप नष्ठ होजाते हैं। और जो विधि पूर्वक परमश्रद्धा से इसका पूजन एवं व्रत धारण करे उसके पुण्यों का तो कहना हीक्या है॥ १७॥ इसका महात्म्य सुनकर और कुछ सुनना ही बाकी नहीं रहा

अमृत से तृप्त हुआ पुरुष और जल नहीं चाहता ॥ १८ ॥ श्रीसूतजी बोले—यह कह कर श्री नारदजी चुप हो गये उन पुरातन नारायण मुनिजी के चरण कमलों में प्रणाम किया ॥ १९ ॥ भारतवर्ष में जन्म पाकर जो पुरुष गृहासक्त होकर श्रीपुरुषोत्तम मास का महात्म्य नहीं सुनते एवं न पुरुषोत्तम की सेवा करते हैं वे नराधम हैं ॥ २० ॥ वे दुर्भागी हैं आवागमन के चक्कर

वाच ॥ इत्युक्त्वाविरतोविप्रोनारदोमुनिसत्तमः ॥ अनीनमत्पादपद्मंपुरातनमुनेःपरम् ॥ १९ ॥ भारते जनुरासाद्यपुरुषोत्तममुत्तमम् ॥ नसेवंतेनशृण्वंतिगृहासक्तानराधमाः ॥ २० ॥ गतागतंभजंतेत्रदुर्भगाजन्म जन्मनि ॥ पुत्रमित्रकलत्राप्तवियोगाद्दुःखभागिनः ॥ २१ ॥ अस्मिन्मासेद्विजश्रेष्ठानामच्छास्त्राण्युदाहरेत् ॥ नस्वपेत्परशय्यायांनालपेद्वितथंक्वचित् ॥ २२ ॥ परापवादान्नब्रूयान्नकथंचित्कदाचन ॥ परान्नंचन भुंजीतनकुर्वीतपरक्रियाम् ॥ २३ ॥ वित्तशाठ्यंकुर्वाणोदानंदद्याद्द्विजातये ॥ विद्यमानेधनेशाठ्यंकुर्वाणोरौरवंव्रजेत् ॥ २४ ॥ दिनेदिनेद्विजेंद्रायदत्वाभोजनमुत्तमम् ॥ दिवसस्याष्टमेभागेव्रतीभोजनमाचरेत् ॥

में पड़कर पुत्र, मित्र कलत्र, धन के वियोग में दुःख उठा २ कर जन्मते मरते रहते हैं ॥ २१ ॥ इसी महीने में असत् शास्त्रों को न पढ़े, पराई खाट पर न सोवे, व्यर्थ तथा असत्य न बोले ॥ २२ ॥ दूसरे की निन्दा चुगली न करे, पराया अन्न न खावे एवं पराया काम न करे ॥ २३ ॥ धन की कंजूसी न करके यथा शक्ति ब्राह्मण को दान दे । धन होने पर कंजूसी करने वाला रौरव नरक में पड़ता है ॥ २४ ॥ हर रोज तो महीना भर श्रेष्ठ ब्राह्मण को उत्तम भोजन करावे और आप दिन के आठवें भाग

सन्ध्या को भोजन करे ॥२५॥ वे पुरुष परम धन्य हैं जो पुरुषोत्तम मास में विधि पूर्वक भक्ति प्रेम से श्रीपुरुषोत्तम भगवान् का व्रत एवं पूजन करते हैं॥२६॥इन्द्रद्युम्न, शतद्युम्न, यौवनाश्व, भगीरथ, आदि राजा श्रीपुरुषोत्तम भगवान् की आराधना करके भगवान् के निकट प्राप्त हुए हैं ॥ २७ ॥ इसी कारण सब प्रयत्नों से पुरुषोत्तम की सेवा करे। यह सब साधनों से श्रेष्ठ है सब मनोरथ

॥ २५ धन्यास्तेपुरुषालोकेयेनित्यंपुरुषोत्तमम् ॥ अर्चयंतिविधानेनभक्त्याप्रेमतुरःसरम् ॥ २६ ॥ इंद्रद्यु-
म्नःशतद्युम्नोयौवनाश्वोभगीरथः ॥ पुरुषोत्तममाराध्यययुर्भगवदंतिकम् ॥ २७ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनसंसे-
व्यःपुरुषोत्तमः ॥ सर्वसाधनतःश्रेष्ठःसर्वार्थफलदायकः ॥ २८ ॥ गोवर्धनधरंवन्देगोपालंगोपरूपिणम् ॥
गोकुलोत्सवमीशानंगोविन्दङ्गोपिकाप्रियम् ॥ २९ ॥ कौंडिन्येनपुराप्रोक्तमिमंमंत्रंपुनःपुनः ॥ जपन्मासं-
नयेद्भक्त्यापुरुषोत्तममाप्नुयात् ॥ ३० ॥ ध्यायेन्नवघनश्यामंद्विभुजंमुरलीधरम् । लसत्पीतपटंरम्यंसराधं
पुरुषोत्तमम् ॥ ३१ ॥ ध्यायन्ध्यायन्नयेन्मासंपूजयन्पुरुषोत्तमम् ॥ एवंयःकुरुतेभक्त्यास्वाभीष्टं वमाप्नु-

पूर्ण करता है ॥ २८ ॥ श्रीगोवर्धन, गिरिराज को धारने वाले गोपरूप गोपाल, श्री गोकुल के उत्सव, गोपियों के प्यारे गोविन्द भगवान् को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ २९ ॥ यह महामन्त्र है कौण्डिन्य ऋषि ने महीना भर भक्ति से इस का बार २ जपन किया है, वे पुरुषोत्तम को प्राप्त हुए हैं ॥ ३० ॥ इसी प्रकार नये मेघ की तरह श्याम सुन्दर, दो भुजा वाले मुरली बजाने वाले पीताम्बर धारी राधिकाजी के साथ विराजमान श्रीपुरुषोत्तम भगवान् का ॥ ३१ ॥ इसी स्वरूप में ध्यान करते २ सारा पुरुषोत्तम मास

गुजारने वाला पुरुष सब मनोरथों को पाता है ॥ ३२ ॥ यह अत्यन्त रहस्य है जिस किसी को नहीं सुनाना चाहिये, हे तपोधन वर्ग, मैंने भी अभी तक किसी के आगे नहीं सुनाया ॥ ३३ ॥ यह परम पवित्र पुराण शास्त्र है मनोरथ पूर्ण करने वाला है इसको आदर के साथ निरन्तर सुनना चाहिये । इसका एकाध श्लोक सुनने से भी पुरुषों के हे ब्राह्मण गण ! सब पाप नष्ठ हो

यात् ॥ ३२ ॥ गुह्य द्गुह्यतरंचैतन्नवाच्यंयस्यकस्यचित् ॥ मयापिकथितंनैवकस्याप्यग्रेतपोधनाः ॥३३॥ श्रोतव्यमेतत्सततंपुराणमभीष्टदंपावनमादरेण ॥ श्लोकैकमात्रश्रवणेनपुंसामघानिसर्वाणिनिहंतिविप्राः ॥ ॥ ३४ ॥ गङ्गादिसर्वतीर्थेषुमज्जतोयत्फलंभवेत् ॥ तत्फलंशृण्वतस्तस्यमाहात्म्यंमुनिसत्तमाः ॥ ३५ ॥ इलांप्रदक्षिणीकुर्वन्यत्पुण्यंलभतेनरः ॥ तत्पुण्यंशृण्वतस्तस्यमहत्म्यंपौरुषोत्तमम् ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणोब्रह्मवर्चस्वीक्षत्रियोवसुधाधिपः ॥ वैश्योधनपतिर्भूयाच्छूद्रःसत्तमतांलभेत् ॥ ३७ ॥ येन्येकिरातहूणाद्याःपशुचर्यापरायणाः ॥ तेसर्वेमुक्तिमायांतिश्रुत्वामाहात्म्यमुत्तमम् ॥ ३८ ॥ पुरुषोत्तममाहात्म्यंलेखयित्वाद्विजन्मने ॥

जाते हैं ॥ ३४ ॥ श्रीगङ्गाजी आदि तीर्थों के स्नान करने से मनुष्य को जितना फल मिलता है, उतना फल हे श्रेष्ठ मुनिजन ! इसके महात्म्य सुनने से प्राप्त होता है ॥ ३५ ॥ सारी पृथ्वी की परिक्रमा करने से जितना पुण्य होता है वह पुण्य पुरुषोत्तम मास के महात्म्य सुनने से होता है ॥ ३६ ॥ ब्राह्मण सुने तो ब्रह्म तेज पाता है, क्षत्रिय राज्य पाता है वैश्य धनपति होता है, शूद्र श्रेष्टता पाता है ॥ ३७ ॥ और भी जो किरात हूण आदि पशु पालन के काम करने वाली जातियां भी इसके उत्तम महात्म्य को

सुनने से मुक्ति प्राप्त करती हैं ॥ ३८ ॥ जो पुरुष पुरुषोत्तम महात्म्य लिखवाकर उस पुस्तक को वस्त्र भूषण आदि से विभूषित करके विधि पूर्व ब्राह्मण श्रेष्ठ को दान करता है ॥ ३९ ॥ वह अपने तीनों कुलों का उद्धार करके गोपिका वृन्द से घिरे हुए श्रीपुरुषोत्तम भगवान् का परम दुर्लभ गोलोक में प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ जो इस ग्रन्थ रत्न को लिखवाकर अपने घर में धारण

संभूष्यवस्त्रभूषाभिर्विधिनाथःप्रयच्छति: ॥३९॥ कुलत्रयंसमुद्धृत्यगोलोकंयातिदुर्लभम् ॥ यत्रास्तेगोपिकावृं-दैर्वेष्टितःपुरुषोत्तमः ।४०। लिखित्वाधारयेद्यस्तुगृहेमाहात्म्यमुत्तमम् ॥ तद्गृहेसर्वतीर्थानिविलसंतिनिरंतरम् ॥ ४१ ॥ मासोत्तमस्यमहिमानमनंतपुण्यंश्रुत्वासुविस्मितधियोमुनयश्चसर्वे ॥ ऊचुश्चसूततनयंविनयेनविष्वक्सेनांघ्रिसेवनविधौनिपुणानितांतम् ॥ ४२ ॥ ऋषयऊचुः ॥ सूतसूतमहाभागधन्योसित्वंमहामते ॥ त्वन्मुखामृतपानेनकृतार्थाःस्मोवयंभृशम् ॥ ४३ ॥ चिरंजीवसदासूतपौराणिकशिरोमणे ॥ अस्तुतेशाश्वती-

करता है उसके घर में इस उत्तम महात्म्य के होने के कारण सब तीर्थ आकर निरन्तर निवास करते हैं ॥ ४१ ॥ इस प्रकार इस पुरुषोत्तम मास का अत्यन्त पुण्यदायक महात्म्य सुनकर सारे मुनिजन विस्मित हुए वे भगवान् की सेवा करने में निरन्तर निपुण होकर विनय पूर्वक सूतजी से कहने लगे ॥४२॥ ऋषि बोले– हे महा भाग्यवान् सूतजी महाबुद्धिमान् सूतजी आप धन्य हैं। आपके मुख द्वारा अमृत पान करके हम लोग भी आज अत्यन्त कृतार्थ हो गये हैं ॥ ४३ ॥ हे पुराणों के ज्ञाताओं में शिरोमणि सूतजी ! आप चिर तक जीवित रहें आपकी जगत् को पवित्र करने वाली सनातनी कीर्ति विस्तृत हो ॥ ४४ ॥ आपके मुखारविन्द से प्रकट

होने वाली मुकुन्द भगवान् की जो अमृत मय कथा है उसके पान करने के लोभी हुए २ इस नैमिष क्षेत्र के निवासी मुनिजनों ने तभी तो परम पूज्य ब्रह्मासन आपको दिया है ।। ४५ ।। हे सूतजी ! इस पृथ्वी तल पर जब तक कि भगवान् की पवित्र कीर्ति

कीर्तिर्जगत्पावनपावनी ।। ४४ ।। तुभ्यंप्रदत्तंनिमिषालयस्थैर्ब्रह्मासनंपूज्यतमंमुनीशैः ।। त्वदीयवक्त्रांबुज-निर्गतश्रीमुकुंदवार्तामृतपानलोलैः ।। ४५ ।। विष्टरश्रवसएवपवित्रायावदेववितताभुविकीर्तिः ।। तावदत्र-मुनिवर्यसमाजेश्रीहरेर्वदकथांकमनीयाम् ।। ४६ ।। इत्थंद्विजाशीर्वचनंप्रगृह्यप्रदक्षिणीकृत्यद्विजान्समस्तान् ।। नत्वागमद्देवनदींस्वकीयंकृत्यंविधातुंसचसूतसूनुः ।। ४७ ।। अन्योन्यमूचुर्निमिषालयस्थावरिष्ठमाहा-त्म्यमिदंपुराणम् ।। मासस्यदिव्यंपुरुषोत्तमस्यसमीहितार्थार्पणकल्पवृक्षम् ।। ४८ ।। इतिश्रीबृहन्नारदीयपुरा-णेपुरुषोत्तममाहात्म्येश्रीनारायणनारदसंवादेपुरुषोत्तममाहात्म्यश्रवणफलकथनंनामएकत्रिंशोऽध्यायः ।।३१।।

छायी हुई है तब तक मुनिजनों के समाज में बैठकर आप श्रीहरि की परम मनोहर कथाएं सुनाते रहें ।। ४६ ।। उन ब्राह्मणों से इस प्रकार की अनेको आशीर्वादें प्राप्त करके उन सब ब्राह्मणों की परिक्रमा तथा नमस्कार कर वे सूतजी अपने कृत्य करने के लिये श्रीगङ्गाजीकी ओर चल पड़े ।। ४७ ।। तब नैमिष क्षेत्र के रहने वाले मुनिजन आपस में मिलकर बैठे, फिर सब मनोरथों को पूर्ण करने से कल्पवृक्ष रूप इस पुरुषोत्तम मास का यह दिव्य पुराण कहना आरम्भ किया ।। ४८ ।।

इति श्रीपञ्चनन्द प्रान्तीय शरणार्थि पं० श्रीहरिश्चन्द्र शास्त्रिणाविरचितायां पुरुषोत्तममास महात्म्य भाषा टीकायांमेकत्रिंशोऽध्यायः समाप्तः ।।

मुद्रक बाबू मोहनलाल शर्मा, हिन्दी पुस्तकालय प्रेस मथुरा।